❀ श्रीश्रीगौरहरिर्जयति ❀

* श्रीब्रजोत्सवचन्द्रिका *

महामहिम-ब्रजाचार्य्य—

श्रीलनारायणभट्टगोस्वामिविरचिता

卐

प्रकाशक—

बाबा कृष्णदास,

गवालियर मन्दिर, कुसुमसरोवर

पो० राधाकुंड (मथुरा)

सम्वत् २०१७
गौरपूर्णिमा
(फाल्गुनी)

समर्पणपत्रम्

भज–निताइ गौर राधेश्याम ।

जप--हरे कृष्ण हरे राम ॥

परम पूज्य, सदाचारनिष्ठ, श्रीराधारमणचरणदास
बाबाजी महाराज के अनुगत, हमारे काका-
गुरु (शिक्षागुरु), नित्यधामप्राप्त,
महन्त—श्रीउद्धारणदासजी के
पुनीत स्मरण में यह
ग्रन्थ रत्न समर्पित ।

—बाबा कृष्णदास

ाज्ञार, वृन्दावन

भूमिका

मध्यकाल में समय पाकर व्रजमण्डल के ग्राम, नगर, बन, उपबन, कुञ्ज, कुंड, देवमूर्ति, लीलास्थल आदिक जिन्हें श्रीकृष्ण के प्रपौत्र श्रीबज्रनाभजी ने प्रभु की लीलानुसार यथा रूप में यथा स्थान वाराह आदि शास्त्र रीति से निर्माण करके निश्चित सब का नामकरण किया था वे सब लुप्त होकर ध्वंसावकास केवल घोर जंगल रूप में परिणित हो गये थे। इसका मूल कारण एक मात्र ब्रज विहारी श्रीहरि की इच्छा ही मान सकते हैं। वाह्य कारण स्पष्ट है कि धर्म्मभीरू गजनीपति महमूदादिक ने मथुरामण्डल पर चढ़ाई करके मथुरा नगरी तथा समस्त ब्रजमंडल का ध्वंस किया था। पुजारी सेवक लोग म्लेच्छों के भय से कहीं बन के बीच, कहीं कुआ-नदी या तालावादि में, कहीं धरती के नीचे देवमूर्तियों को छिपा कर प्राण लेकर भाग गये थे। इस प्रकार कुछ समय बीता। इधर ब्रज-विहारी श्रीहरि निजआल्हादिनी महाशक्ति राधिका जी के भाव-प्रेम का आस्वादन करने के लिए तथा अपने अनर्पित प्रेम महाधन का प्राणीमात्र में प्रदान करने के लिये साथ ही साथ कलियुग का एक मात्र धर्म हरिनाम का प्रवर्त्तनार्थ गौरांग रूप में नवद्वीप धाम में प्रकट होकर निज पार्षदों के साथ संकीर्तनादि नाना लीला विनोद कर रहे थे। जब पतितपावन प्रेमावतार महाप्रभु जीव-उद्धारार्थ संन्यास लेकर लीलाचल में विराजित रहे तब आप एक बार ब्रज में पधारे। वहाँ आपकी जो प्रेमोन्मादिनी उत्कट दशा हुई थी उसे अनन्तदेव भी अनन्तकाल पर्यन्त नहीं वर्णन कर सकते। क्षण क्षण में गाढ़ मूर्च्छा, निरन्तर हाय हुतास।

व्रज-तीर्थों का लुप्त होना देखकर आपका हृदय व्याकुल हो गया। फिर भी सर्वज्ञ आपने ब्रज के नाना स्थानों में भ्रमण किया। वहाँ से आप पुन: नीलाचल के लिए चल दिये। ब्रज के उन लुप्त तीर्थों का उद्धार के लिए आपकी प्रबल इच्छा बढ़ने लगी। आप ने इस विषय में निज अन्तरंग-पार्षद श्रीरूप,सनातन को योग्य जानकर दोनों में शक्ति

का संवार कर लुप्ततीर्थों का प्राकट्य तथा भक्ति रस-सिद्धान्त ग्रं का निर्माण करने की आज्ञा देकर ब्रज के लिए भेजा। दोनों ने ब्र में आकर वाराहादि पुराणों की सहचर्या से तीर्थों को खोजा त अनेक ग्रंथों का निर्माण भी किया। उस समय वृन्दाबन व ब्र मण्डल के तीर्थ सब एक एक प्रकट होने लगे तथा गोविन्द, गोपीनाथ मदनमोहनादि देवविग्रह भी। अन्त: साक्ष्य एवं वहि: साक्ष्य से य निर्विवाद सिद्ध है कि-ब्रजमण्डल के समस्त लुप्ततीर्थों का पुनरुद्धा श्रेय गौड़ीय गोस्वामियों का है। जगप्रसिद्ध भक्तमाल ग्रंथ में श्री नाभाजी ने कहा है—

"ब्रजभूमि-रहसि राधाकृष्ण भक्त तोष उद्धार किय
संसार स्वादसुख बात ज्यों दुहु श्रीरूप सनातन त्याग दिय"

इस पर टीकाकार प्रियादासजी कहते हैं—"वृन्दाबन ब्र भूमि जानत न कोऊ प्राय दई दरसाई जैसी शुक मुख गाई है रीति हू उपासना की भागवत अनुसार लियो रससार सो रसि सुखदाई है" इत्यादि। नि:सन्देह गौड़ीय-गोस्वामियों ने ब्रज पुनरुद्धार किया है जिनमें श्रीनारायणभट्टजी की विशेष महत्ता है उन्होंने कृष्णलीला के भूले हुए स्थानों का उद्घाटन कर समस् ब्रजमण्डल में तत्सम्बन्धी ग्राम बनों उपवनों और तीर्थों का निर्दे किया और उन स्थानों पर देवालय कुंड और कूप बनवाये। उन्हों भक्त मण्डली को लीलानुकरण का सुख देने के लिए रासपद्ध का आविष्कार किया जिससे ब्रज को गान, वाद्य और नृत्यकला की उन्नति के साथ नाट्यकला का चरम विशिष्ट रूप उपस्थि हुआ। उन्होंने ब्रजचौरासी कोस की वारहपुराणादि शास्त्र रीति यथा विधि यात्रा का आरम्भ कर ब्रज की महत्ता बढ़ाई जिससे आ तक हजारों नर नारी आकर्षित होकर ब्रजयात्रा करते आरहे हैं ब्रजभक्तिविलास की भूमिका में परिशेष रूप में, तथा श्रीनारायण भट्टचरितामृत के पृष्ठभूमि में हमने इन विषयों को सुदृढ़-सुपुष्ट सुप्रमाणित के लिये लगभग सैकड़ों प्रमाणों को उपस्थित किया है

तने पुष्ट प्रमाण रहते हुए भी आजकल कुछ केवल शंकाप्रदायक
स्वाव इर्ष्या वश नारायणभट्टजी के उन कार्य्यों में असहनीय होकर
पने सम्प्रदाय के आचार्यों में उन कार्यों को आरोपित करते हुए
लत प्रचार करने लग गये हैं, उनके देखादेख कुछ आधुनिक लेखक भी
इन प्रमाणों को निगलना चाहते हैं। जैसा कि किसी ने तो हित-
रिवंशजी को रासलीलानुकरण के मूलाचार्य्य, किसी ने तो घमण्डी-
व जी को, किसी ने वल्लभाचार्य्य जी को। परन्तु उनका कोई पुष्ट-
माण नहीं है वे सब केवल खींचतान करते हुए उन आचार्य्यों में
ारोपित करने की चेष्टा में हैं। नारायणभट्ट जी के रासलीलानुकरण-
मूल प्रवर्त्तक पक्ष में सैकड़ों प्रमाण मौजूद हैं। अस्तु नारायण
ट्टजी ने जिन कार्य्यों से ब्रज को सेवा की उन कार्य्यों में ब्रज तीर्थों
ा उद्धार, रासलीलानुकरण का आविष्कार, बनयात्रा व ब्रजयात्रा का
ास्त्र रीति से प्रवर्त्तन ये तीन महान् कार्य्य हैं, हम अन्यत्र इस का
वचार करेंगे।

बनयात्रा के लिये ही आपने ब्रजभक्तिविलास तथा बृहद्ब्रजो-
त्सव नामक दोनों महान् ग्रंथ का निर्म्माण किया। जिन्होंने ब्रज के
ुप्त तीर्थों का उद्धार किया वे ही बनयात्रा के आदि प्रवर्त्तक माने जा
सकते हैं। "मूलं नास्ति कुतः शाखा" जब मूल नहीं है तब शाखा
कहाँ से आई है। अर्थात् नारायणभट्ट जी के पहले जब मथुरा
मण्डल के गोप्य तीर्थों का प्रकट नहीं था तब बनयात्रा कहाँ से चल
पड़ी। नारायणभट्ट जी के पक्ष में ही बनयात्रा सिद्ध होती है।
मानो नारायणभट्ट जी के पहले ब्रज के अधिक देव विग्रहों का प्रगट
जब नहीं था तब बनयात्रा में उन विग्रहों का दर्शन कहाँ से हो
सकता था। नारायणभट्ट जी ने ही सैकड़ों देवमूर्त्तियों को कहीं
धरती से, कहीं कुंड से, कहीं कुंआ से, कहीं बन-जंगलों से, कहीं
पर्वतों से निकलवाय कर तथा उन सब का शास्त्रीय विधि से अभि-
षेक करा कर मन्दिरों में बिराजमान करवाया। प्रस्तुत ब्रजोत्सव-
चन्द्रिका ही इस का मूल प्रमाण है। इस में उनके द्वारा प्रगटित

देवमूर्त्तियों की अभिषेक विधि है। इस में क्रमतः वलदेवाभिषेक, कृष्णाभिषेक, श्रीराधाभिषेक, श्रीललितादि अष्टसखियों का अभिषेक, श्रीरामाभिषेक, श्रीनृसिंहाभिषेक, श्रीवामनावताराभिषेक, श्री-लाडिलेयाभिषेक, पंचायतनदेवताभिषेक, श्रीसँकेतदेव्याभिषेक, इन देवताओं के अभिषेक की विधि शास्त्रीय रीति से सविस्तार सांगोपांग कथित है।

ऊँचा ग्राम में वलदेव जी, वरसाना में श्रीलाडिलीजी, संकेत में संकेतविहारी जी, राधारमण जी, संकेतदेवी जी, शेषशायी में प्रोढ़ा-नाथ जी, दाऊजी में बलदेवजी, नरी में दाऊजी, खायरों में गोपीनाथ जी विग्रह इस प्रकार वहु विग्रह मुख्यतया नारायणभट्ट जी के द्वारा ही प्रकटित हुए हैं।

भट्टजी के द्वारा रचित ग्रन्थ समूह—

(१) ब्रजभक्तिबिलास, (२) ब्रजप्रदीपिका, (३) ब्रजोत्सवचन्द्रिका (४) ब्रजमहोदधि (५) ब्रजोत्सवाल्हादिनी (६) वृहद्ब्रजगुणोत्सव (७) ब्रजप्रकाश (८) भक्तभूषणसन्दर्भ (९) भक्तिविवेक (१०) भक्तिरसतरङ्गिणी (११) साधनदीपिका (१२) रसिकाल्हादिनी (भाग-वत की टीका (१३) धर्मप्रवर्त्तिनी (१४) प्रेमांकुरनाटक।

ऊँचे ग्राम में रहते समय आपने और भी ५२ ग्रन्थों का निर्माण किया था। श्रीमध्वाचार्य्य ने पहले जिस मत का प्रचलन किया था जिसे कि श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु ने पुष्ट किया, श्रीगदाधर पण्डित गोस्वामी तथा उनके शिष्य कृष्णदास ब्रह्मचारी ने जिस मत का अनुसरण किया है उस मत को अपने गुरु ब्रह्मचारीजी से सीख कर आपने उसका विस्तार पूर्वक अपने उन ग्रंथों में लिखा है।

ब्रजभक्तिविलास में देवता-तीर्थों के साथ ब्रज के समस्त बनोप-वनादिकों का सविस्तार वर्णन है। इस में १३ हजार श्लोक तथा त्रयोदश अध्याय हैं। इस की संपूर्त्ति सम्वत् १६०९ में श्रीराधाकुंड पर हुई थी। मथुरा मण्डल की यात्रा दो प्रकार की है, ब्रजयात्रा तथा बनयात्रा। समस्त ब्रजतीर्थों के प्राकट्य करने के उपरान्त वैष्णव-

मण्डली के साथ बनयात्रा की, जिस के लिये यह विशाल ग्रन्थ की रचना हुई। सम्वत् २००८ में हमने इस ग्रन्थ का सानुवाद प्रकाशन किया है। बृहद्ब्रजगुणोत्सव नामक विशाल ग्रन्थ में ब्रज के समस्त ग्रामों की लीला देवता तीर्थों का सविस्तार वर्णन है इसमें २६ हजार श्लोक हैं। ब्रजभक्तिविलास के सप्तमाध्याय में स्वयं आप ने इसका उल्लेख किया है। ब्रजोत्सव प्रदीपिका में ६००० श्लोक तथा ब्रजोत्सव चन्द्रिका में ८००० श्लोक हैं।

ब्रजप्रदीपिका प्रस्तुत ब्रजोत्सवचन्द्रिका का पूर्व भाग है। भक्तभूषणसन्दर्भ में जीवतत्व, जगत्तत्व, ईश्वरतत्व ये तीन तथ्य का का महान् युक्ति के साथ सविस्तार वर्णन है। तीन परिच्छेद में इस की संपूर्त्ति है। भक्तिविवेक ग्रंथ में भिन्न भिन्न प्रकरण हैं, नामश्रेष्ठ-निर्णय,धामश्रेष्ठ निर्णय,भक्तिश्रेष्ठ निर्णयादिक। नामश्रेष्ठ में कृष्ण नाम की सर्वाधिक महिमा, धामश्रेष्ठ निर्णय में ब्रज का श्रेष्ठत्व, भक्ति श्रेष्ठनिर्णय में भक्ति का सर्वाधिकत्व निर्णीत है। भक्तभूषणसन्दर्भ तथा भक्तिविवेक ये दोनों ग्रंथ हमारे पास मौजूद हैं। भक्तिरसतरङ्गिणी में समस्त रसों का सविस्तार वर्णन है। रसपद्धति ज्ञात कराने में यह बहुत उत्तम है। सम्वत् २००४ में यह ग्रंथ सानुवाद प्रकाशित हो चुका है। साधनदीपिका में साधनरूपा भक्ति का सविशेष निर्णय, वैष्णवों की विधि-निषेध विचार, जन्माष्टमी, रामनवमी, एकादशी आदिक व्रतों का सविस्तार निर्णय है। यह ग्रंथ गोपालभट्टगोस्वामी जी के हरिभक्तिविलास का समकक्ष है। इस की प्राचीन प्रति हमारे पास मौजूद है। आप ने श्रीमद्भागवत पर रसिकाह्लादिनी नाम्नी टीका की है। इस के बनाने की आज्ञा संकेतवट में रासलीला गाते समय स्वयं श्रीराधारमण जी ने साक्षात्प्रकट होकर दी थी। रास-पंचाध्याय की टीका हमारे पास मौजूद है। गोस्वामी श्रीयुगलशास्त्री जी (बरसाने) के वहाँ दशमस्कन्ध के प्रारम्भ से लेकर पंचाध्यायी पर्य्यन्त की टीका मैंने देखी हैं। भट्टजी के द्वारा विरचित प्रेमांकुर नामक नाटक का उल्लेख पाया जाता है, जिसमें जन्मादिलीला,

दानलीला, मानलीला, मगरोकनीलीला, परस्पर गालिदेने की लीला, मटकी फोड़नी, हास्य परिहास, निकुंजरचना, निकुंज भेद आदि लीलाएँ वर्णित हैं। बरसाने में तथा उसके आस पास स्थानों में श्री नारायणभट्टजी के द्वारा प्रवर्त्तित भाद्र शुक्ला तृतीया से लेकर पूर्णिमा पर्य्यन्त जो बूढ़ीलीला होती है वह इसी ग्रंथ के आधार पर है। प्रस्तुत व्रजोत्सवचन्द्रिका ग्रंथ में भी बूढ़ीलीला का निर्णय दिया गया है। इन सब ग्रंथों का वैद्युतिक खोज होना चाहिये।

स्थितिकाल—सम्वत् १५८८ वैशाख शुक्ल पक्ष नृसिंहजयन्ती के दिन जन्म, बारह वर्ष की वयस में पितृव्य शंकर जी से विद्यालाभ, १६०२ सम्वत् में प्रभु आज्ञा से व्रजागमन तथा गुरु श्रीब्रह्मचारी (कृष्णदासजी) के पास राधाकुंड में स्थिति, वहाँ कुछ दिन रहकर ब्रह्मचारी जी से सम्प्रदाय रहस्य की शिक्षा, १६०९ सम्वत् से पहले ब्रजतीर्थों का उद्धार, १६०९ सम्वत् में व्रजभक्तिविलास तथा १६१२ सम्वत् में व्रजोत्सवचन्द्रिका की संपूर्त्ति, सम्वत् १६२६ आषाढ़ शुक्ला द्वितीया में श्रीजी का प्राकट्य, सम्वत् १७०० में अन्तर्द्धान।

पिता-माता तथा देश का परिचय—

दक्षिण में मदुरापत्तन पर भृगुवंशी, श्रीवत्सगौत्रिय, ऋग्वेदी भैरव नामक महान विद्वान् तैलंग ब्राह्मण रहते थे जो कि मध्वमतावलम्बी कृष्ण-भक्त हुए। उनके रङ्गनाथ नामक एक पुत्र हुए, जिनका चरित्र भविष्योत्तर में मौजूद है। उनके भट्ट भास्कर नाम से जग विख्यात पुत्र हुआ था। उन भट्टभास्करजी के दो पुत्र हुए, ज्येष्ठ का नाम गोपाल, कनिष्ठ का नाम श्रीनारायण। यह नारायण हमारे चरित्रनायक-व्रजाचार्य्य, नारदावतार श्रीनारायणभट्ट गोस्वामी हैं।

गुरुपरम्परा—श्रीमन्नारायण, श्रीब्रह्मा, श्रीनारद श्रीवेदव्यास, श्रीमध्वाचार्य्य, श्रीपद्मनाभ, नरहरि, माधव, श्रीअक्षोभ, जयतीर्थ, ज्ञानसिन्धु, महानिधि, विद्यानिधि, राजेन्द्र, जयधर्म्म, ब्रह्मण्य, पुरुषोत्तम, श्रीव्यासतीर्थ, श्रीलक्ष्मीपति, श्रीमन्माधवेन्द्र, श्रीयुत ईश्वरपुरी,

श्रीकृष्णचैतन्यमहाप्रभु, उनके परिकर श्रीगदाधर पण्डित गोस्वामी, उनके शिष्य श्रीकृष्णदास ब्रह्मचारी (मदनमोहनजी के अधिकारी), उनके श्रीनारायणभट्टजी ।

शिष्य परम्परा व वंशज—(मुख्यशाखा)

सर्व श्रीनारायणभट्ट, उनके श्रीदामोदरभट्ट, उनके बालमुकुन्द भट्ट, उनके गोविन्दभट्ट, उनके गोपालभट्ट, उनके ब्रजपतिभट्ट, उनके यदुपतिभट्ट, उनके विद्यापतिभट्ट, उनके मुरलीधरभट्ट, उनके नत्थी-लालजी, उनके कृष्णगोपाल तथा हरिगोपालजी दोनों ।

शिष्यों में बलभद्री भाटोंटिया नारायणदासजी, श्रोत्री श्रीस्वामी नारायणदासजी, मथुरादासजी, लोकनाथजी, दामोदरजी आदिक मुख्य रहे । श्रीदामोदरभट्टजी भट्टजी के पुत्र व शिष्य थे जो पितृ गद्दी के मालिक रहे । श्रीनारायणदास श्रोत्रीजी श्रीजी के सेवक हुए जिनके वशज बरसाने के गोस्वामीगण हैं । वे ही लाडिलीजी की सेवा के अधिकारी हैं । बलभद्री नारायणदासजी विरक्त थे उनके शिष्य गोविन्ददासजी,श्यामदासजी,कृष्णदास आदिक हुए । गंगाबाई नाम्नी एक शिष्या भी थी जो कि जगन्नाथजी की मालासेवा करती थी, अभी भी पुरी में उनसे स्थापित गंगामाता मठ प्रसिद्ध है ।

"नारायणभट्टचरितामृत" के रचयिता गोस्वामी जानकीप्रसाद जी के मत में भक्तमाल प्रसिद्ध श्रीमीरा श्रीमथुरादासजी की शिष्या थी, वह मथुरादासजी श्रीनारायणभट्टजी के शिष्य थे । इसकी खोज होनी चाहिये । इस प्रकार आप की शाखा प्रशाखा जगत में छा गई थी । ऐसा तो ब्रज के समस्त ग्रामों में ब्राह्मण-ब्रजवासीगण इन्हीं भट्ट गोस्वामीजी के शिष्य प्रशिष्यों में हुए । श्रीगोस्वामी जानकी प्रसादजी ने जो कि उनके वंश परम्परा में महान् विद्वान् आचार्य्य थे उन्होंने श्रीनारायणभट्टचरितामृत नामक ग्रन्थ में भट्टजी का चरित्र सविस्तार वर्णन किया है । उन्होंने नाना ग्रन्थ देख कर इसकी रचना

की है ऐसा स्वयं आपने स्वीकार किया है। भट्टजी का विशेष चरित्र जानने की इच्छा हो तो उक्त ग्रंथ को देख लें, उस ग्रन्थ को सम्वत् २०१३ में हम ने सानुवाद प्रकाशित किया है। प्रस्तुत व्रजोत्सव-चन्द्रिका में भी स्वयं भट्टजी ने सूक्ष्मरूप में अपने चरित्र का उत्थापन किया है। आप नारदजी के अवतार थे तथा सर्वदा आपने को उसी स्वरूप में आविष्ट रखते थे। "मैं नारद हूँ" इस प्रकार इस ग्रन्थ में नाना स्थान पर तथा संकल्प में भी स्वयं अपने को बतलाया है। इस ग्रन्थ में दो एक स्थल पर आपने श्रीराधागोविन्द की परकीय भावना का जो निषेध किया है सो मंत्रमयी उपासना को लेकर ही जानना चाहिये। क्योंकि मंत्रमयी उपासना में परकीय भावना महान् निषेध है वह तो स्वारसिकी लीला का हृदय है। भक्तिरसतरङ्गिणी तथा भक्तिविवेक में श्रीराधा के पति अभिमन्यु एवं सास जटिला दोनों का उल्लेख है। श्रीनारायणभट्टजी के सेबित विग्रह मुख्यतया ऊँचा ग्राम में वलदेवजी एवं लाडिलेयस्वरूप हैं। तीर्थोद्धार समय लाडिलेयस्वरूप ही उनको तीर्थों का परिचय दिलवाय देते थे। "बोल के सुनावै यहाँ अमुक स्वरूप है जू लीला कुंड धाम श्याम प्रकट दिखाये हैं" (प्रियादासजी)। यह लाडिलेय स्वरूप अब तक नीमराना में रहे, सम्प्रति वहाँ से पुनः अपने स्थान ऊँचा ग्राम आकर विराजमान हो गये हैं। भट्टजी के वंशज, नीमराना निवासी, वर्तमान गोस्वामी श्रीहरिगोपालजी के द्वारा ही इस प्रस्तुत ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति मुझे मिली। प्रस्तुत प्रकाशन में नाना कारण वश बहुत त्रुटियाँ रह गई हैं। आगे उनका सुधार किया जावेगा।

इति—कृष्णदास

॥ श्रीबलदेवो जयति ॥

व्रजोत्सवचंद्रिका

श्रीयुगलमूर्त्तिबलदेवाय नमः ।

श्रीदेवं मुशलायुधं हलधरं बन्दे कृपासागरम् ।
रात्रौ स्वप्नप्रदायकं शुभकरं श्रीरेवतीवल्लभम् ॥
श्रीकृष्णं ब्रजकेलिनं प्रभुमग्रं नारायणं सुन्दरम् ।
वन्दे देवमुपासनान्वितद्वयोराद्यन्तयोर्धारितम् ॥
व्रजोत्सवानां सकलां मनोरमां सुचन्द्रिकां
नाम प्रकाशये शुभाम् ।
"समस्तव्रजद्वारेषु लीला भगबता कृता ।
समस्तप्रभुचिन्हानि विलोक्योद्धारयेव्रजम् ॥"

अथ स्वकीयस्येष्टदेवस्य श्रीबलदेवस्य स्थानं निरूप्यते । तत्रादौ श्रीललितासखीग्रामं वर्णये । वराहपुराणे कारिका—अटोर उच्चग्रामाभिधानग्रामः पर्वतोपरि वर्तते । तस्य सांनिध्यमूमिकायां बनमस्ति, तस्मिन् पूर्वाभिमुखदक्षिणे हिंसवृक्षस्याधः श्रीयुगलसंकर्षणस्य मूर्त्तिर्विराजते । कौर्म्ये—

सेषावतारो परमः रेवतीसहितोऽग्रजः ।
रोहिणीतनयो देवः गौरांगो गौरवर्णधृक् ॥
सहस्रफणसंयुक्तो हलमूषलसंस्थितः ।
वसुदेवसुतो ज्येष्ठो योगमायाविकर्षितः ॥
रैवतस्य नमी राज्ञी नाम्नी कन्यामजीजनत् ।
यदोः कुलसमुद्भूतवलदेवाय संददो ॥

अथ श्रीबलदेवस्य जन्म-निरूपणं विष्णुधर्म्मोत्तरे—

श्रावणस्य सिते पक्षे पञ्चमी हस्तसंयुता ।
रविबारेण संयुक्ता शिवयोगसमन्विता ॥
उदयव्यापिनी ग्राह्या पूर्वविद्धा न कर्हिचित् ।
परविद्धा सदा ग्राह्या शेषजन्मनिजोत्सवे ॥

विष्णुरहस्ये—सूर्य्योदयात्समारभ्य व्यतीता घटिका दश ।
तत्क्षणे वलदेवस्य जन्मोत्सवमकुर्वत ॥

श्रीसंकर्षणस्याभिषेकः कार्य्यः । श्रीमद्गोस्वामिश्रीनारायण-भट्टविरचितोऽभिषेकपद्धतिस्तदनुरूपेणाभिषेकं कुर्य्यात् । श्रीकृष्ण-स्याभिषेकस्य च श्री वलदेवाभिषेकस्य भेदः, पद्धतिं दृष्ट्वा भिन्नत्वेन कुर्य्यात् । वामनपुराणे—केचिद्भाषायामशोकनाम वदन्ति ।

गोप नाम महाभानुः सारदी नामा गोपिनी ।
उच्चग्रामं प्रवास्तव्यौ दम्पती पर्वतोपरि ॥
तयोः कन्या भविष्यति ललिता नाम विश्रुता ।
मनोहरा च गौरांगा कृष्णचिन्हेन लाञ्छिता ॥

तस्य ग्रामस्य पश्चिमभागतः सखीगिरि नाम पर्वतोऽस्ति । तस्योपरि चैका पुष्करिणी स्थिता ।

आदिपुराणे—भाद्रस्य शुक्लषष्ठी तु विशाखाऋक्षसंयुता ।
परविद्धा सदा कार्य्या पूर्वबिद्धा न कर्हिचित् ॥
सूर्योदयात्समारभ्यैकादश घटिकाः गताः ।

तत्समये ललिताजन्मोत्सवं समकुर्व्वत । श्रीललिताया अभिषेकं पद्धत्योक्तेन विधिना कार्य्यम् । श्रीललिताया अभिषेकस्य श्रीराधाभि-षेकाद्भेदः, भिन्नत्वेन प्रकारेण पृथङ्मन्त्रैस्तु कुर्य्यात् । तत्रैव पर्वत-स्याधः पश्चिमतः खिशिलिनी सिला स्थिता । तत्र गोपालैः सह श्रीकृष्णः समभ्यागतः । नारदपञ्चरात्रे—

भाद्रस्य शुक्लपक्षस्य द्वादशी श्रवणान्विता ।
व्यतीता घटिका षट् च सूर्य्योदयप्रवर्त्तिता ॥
तत्क्षणे ललिता तत्र आगता सखीभिः समम् ।
अष्टाभिः सखिभिः सार्द्धं सुमनादिभिः संयुता ॥

ब्रह्मवैवर्त्ते राधाखण्डे—

सुमना सुषुपा कांची दीपिका च प्रदोपिका ।
नागरी प्रवला गौणी ललितायाः उपासखी ॥

भाषायां लोका अन्यनामानि वदन्ति इत्यपवादः । लैङ्गे—

तत्र क्रीडा कृतास्ताभिः शिलायां स्खलनं कृतम् ।
ततश्च ललितापाणिं गृहीत्वा गोकुलेश्वरः ॥
पुष्पैश्च मण्डनं कृत्वा सर्वदेवे समागते ।
विधिवन्मन्त्रयुक्तेन ललितां च विवाहयेत् ॥

ततश्चावासपर्वतस्य पश्चिमभागे सर्वे कृष्णादयः गोपालाः समभ्यागता,अष्टाभिरुपसखीभिः सार्द्धं ललिता त्वागता । तत्र सर्वे सर्व्वाश्च क्रीडाश्रमेण श्रमिताः संजाताः । तत्समये तस्मिन् स्थाने जलक्रीडां कृतवन्तः, स्नपनं कुर्वाणाः तस्माद्देहकुंडाभिधानकुण्डं भवति । तत्रैव सुवर्णदानं कुर्व्वाणः श्रीकृष्णः गोपालैः सार्द्धं स्वगृहमव्रजत्, उपसखीभिः सार्द्धं उच्चग्रामे श्रीमहाभानोर्वाशोकनामगोपस्य गृहे ललिता गता । तत्र सारध्यग्रे सखीभिः विवाहवार्त्ता कथिता । ततः महाभान्वशोकनाम गोपः नन्दमाहूय सर्वां विवाहसामग्रीं निवेद्य सिंहासनोपरि श्रीकृष्णं तद्दक्षिणभागे कन्यां ललितां निवेश्य सर्वरत्नादिभिरतोषयत् । श्रीललितायाः निवेशनं तु श्रीकृष्णस्य दक्षिणे भागे । वायुपुराणे–"ललिता ललितावाणी राधायाऽन्यन्तवल्लभा ।

मुख्या सखी समाख्याता सर्वदा सार्द्धंगामिनी ॥" इत्यादौ श्रीललितास्थानवर्णनम् ॥

अथ कनिष्ठासखीविशाखानिवासस्थानं वर्ण्यते । आदिवाराहे—

अंजपुरे समाख्याते सुभानुर्गोपः संस्थितः ।
देवदानीति विख्याता गोपिनी निमिषसुता ॥
तयोः सता समुत्पन्ना विशाखा नाम विश्रुता ।
गुण-रूपवती कृष्णसर्वलक्षणलक्षिता ॥

भविष्योत्तरे —

भाद्रे मासि सिते पक्षे नवमी संयुताष्टमी ।
पूर्वाषाढयुता ग्राह्या पूर्वविद्धा तु कारयेत् ।
परविद्धा सदा त्याज्या विशाखाजन्मसंज्ञका ॥
कदाचित्समये कृष्णः गोचारणमिषेण च ।
राधाप्रीतिकरीं कृष्णां गोधूमोपमसंस्थिताम् ।
पाणिं गृहीत्वा हस्तेन गर्जपुरमुपागतः ॥

बृहद्गौतमीये—"ललिता तत्र आयाता अष्टाभिः सखिभिः सह । ललिता च विशाखां च दृष्ट्वा प्रेम परं ययौ "॥

तत्रैव ललिता स्वकीयं मन्दिरं विश्वकर्माणमाज्ञाय कारयित्वा तत्र चमरं कृत्वा स्थिता । तत्क्षणे प्रेम परं गतो हरिः प्रेमनिवर्त्तितः सन् । भविष्ये—गोधूलिसमये प्राप्ते विशाखाकरमग्रहीत् ।

हरिस्तु सखिभिः सार्द्धं जलक्रीडां चकार ह ।
प्रेमकुण्डं समाख्यातं तस्मात्प्रेमनिवर्त्तनात् ।
ददौ कृष्णस्तु मन्दिरं ललितायै मनोहरम् ॥

विशाखायाः स्थानं श्रीकृष्णस्य दक्षिणभागतः । "विशाखा स्वगृहं गता अष्टाभिः सखिभिः सह" ॥ मात्स्ये —

मंगला सुमुखी पद्मा सुपद्मा सुमनोहरा ।
सुपत्रा वहुपत्रा च पद्मलेखेति ताः स्मृताः ॥

इति विशाखाया उपसख्यः, भाषायां अन्यनामानि वदन्ति।
इत्यादौ विशाखायाः स्थानवर्णनम् ॥

अथ चम्पकलतास्थानवर्णनम्-- सारदायाम्—

कर्हपुरेऽतिविख्यातस्तत्र गोपोऽवसत्तदा।
मनुभूपसमाख्यातो करहपूर्विभूषितः।
सुकंठी नामा सा गोपी भार्य्या तस्याभवत्तदा।
तयोः कन्या समुद्भूता कृष्णलक्षणसंयुता।
चम्पकलता आख्याता तृतीयासखितां गता ॥

बृहन्नारदीये—भाद्रे मासि सिते पक्षे सप्तमी चाष्टमीयुता।
अनुराधायुता चापि शुभयोगसमन्विता ॥

ब्राह्मे--सूर्य्योदयात्समारभ्य गताः नाड्यश्चतुर्दश।
तत्क्षणे तु सखीजन्मचम्पका जायते ध्रुवम्।
तत्रागतो नन्दसूनुर्गृहीत्वा पाणिना करम्।
रासक्रीडाकृतो देवः परविद्धा च सप्तमी।
पूर्वविद्धा सदा त्याज्या परविद्धा सुखप्रदा ॥

गौतमीये—चम्पकलता सखीभिरष्टाभिः स्वगृहं गता।
चम्पकलतायाः स्थानं श्रीकृष्णस्य दक्षिणे भागे।
सुकेशी पद्मनयना सुनेत्रा कामदीपिका।
प्रदीपिका सुकर्णी च रागसंयुक्तवेणिका।
नवनीतप्रिया चाष्टौ चम्पकायाः उपसख्यः ॥

भाषायां अन्यनामानि वदन्ति। इत्यादौ चम्पकलतायाः स्थानं वर्णनम् ॥

अथ चित्रलेखास्थानवर्णनम्। विष्णुयामले—

चिकित्सपुरमाख्यातं व्रजोदारोऽवसत्तदा।
तस्य भार्यात्रयं जातं इन्दी काञ्ची त्ववन्तिका।

जज्ञेऽवन्तिकायाः कन्या चित्ररेखा मनोहरा।
भाद्रे मासि सिते पक्षे दशमी नवमीयुता।
उत्तराषाढ़संयुक्ता पूर्वविद्धा तु कारयेत्।
सखी चतुर्थी संभूता गर्गाचार्येण भाषिता।
सूर्य्योदयात्समारभ्य घटिकाः पंचषाः गताः।
तत्समये चित्रलेखाजन्मोत्सवोऽभवत्तथा।
कदानु समये प्राप्ते सांकरीखोरिमागतः।
चित्रलेखां संजगृहे चुम्बनालिङ्गनादिभिः।
पाद्मे-देवगन्धर्व्वगानं च संजातं हि विवाहतः।
चित्रलेखा सखीभिश्च त्वष्टाभिः स्वगृहं गता॥

गौतमीये--

रंगवल्ली सुवल्ली च पद्मवल्ली मरीचिका।
शिवनीली सती साध्वी ब्रह्मवल्ली इति स्मृताः॥

इति चित्रलेखाया उपसख्यः, भाषायामन्यनामानि। चित्रलेखायाः श्रीकृष्णस्य दक्षिणे भागे स्थानम्। इत्यादौ चित्रलेखायाः स्थानवर्णनम्॥ तत्र वाराहे कारिका--चतस्रः सख्यः श्रीकृष्णेन स्वेच्छाया विवाहिताः। ततस्तु गदेव्यादयः वामभागस्थानिकाश्चतस्रः सख्यः श्रीराधायाः प्रियायास्त्वाज्ञया विवाहिताः॥ अथ श्रीवृषभानुपुरस्य वर्णनम्॥ ग्रामस्य पूर्वभागे वृषभानुकुंडम्। आदिपुराणे—

वृषभानुः समाख्यातो सूर्य्यवंशसमुद्भवः।
गोपनाम उपाश्रित्य कीर्त्या सह विराजते।
श्रीदामा तनयो जातस्तयोः पुत्री च राधिका।
गोचारणमिषेणैव वनान्तरमुपागतः।
तत्रागतो नन्दसूनुः गोपालैः सह वेष्टितः॥

सर्वे देवाः सयायाताः गन्धर्व्वाः किन्नरास्तथा ।
ब्रह्मरुद्रास्तथाप्सरसः विवाहोद्गायनं चक्रुः ।
पुष्पाणां मण्डपं कृत्वा ब्रह्मा वेदं समुच्चरत् ।
राधापाणिग्रहं चक्रे नन्दसूनुर्व्रजोत्सवैः ।
राधायोः सार्द्धमायाताश्चतुः सख्यो मुदान्विताः ।
तुंगदेव्यादयस्तत्र श्रीकृष्णेन विवाहिताः ।
राधाज्ञया हरिणा तु चतस्रस्ता विवाहिताः ।

अथासां तुंगदेव्यादीनां निवासस्थानवर्णनम् । संमोहनतन्त्रे—

कमई च पुरी नाम पूर्वभागे पुरस्य च ।
अंगदो नाम गोपश्च तत्रावासं करोति यः ।
ब्रह्मकर्णी प्रिया तस्य दधिमन्थनतत्परा ।
तयोश्च कन्यका जाता तुंगदेवी महाप्रभा ।
भाद्रमासे सिते पक्षे पञ्चमी षष्ठिसंयुता ।
स्वातिनक्षत्रसंयुक्ता भौमवारेण संयुता ।
परविद्धा सदा कार्य्या पूर्वविद्धा न कारयेत् ।
सूर्य्योदयात्समारभ्य घटिकाः यान्ति द्वादश ।
यत्क्षणे तुंगदेव्यास्तु जन्मोत्सवमकुर्व्वत ॥

ब्रह्माण्डे—

अस्याः सख्यः समाख्याताः ब्रह्मणा निर्म्मिताः स्वयम् ।
वीरदेवी भद्रदेवी मनोदेवी मनोत्सवा ।
कामदेवी नृदेवी च स्नेहदेवी मनोरमा ।
इत्यष्टौ कथिता सख्यः कामदेवेन पूरिताः ॥

तुंगदेव्याः स्थानं श्रीराधायाः निकटे श्रीकृष्णस्य वामभागे निवेशनम् इति तुंगदेव्याः स्थानवर्णनम् ॥

अथेन्दुलेखानिवासस्थानवर्णनम् ॥ गौतमीये--

रंकपुरे समाख्याते दक्षिणस्यां दिशि स्थिते ।
रणधीरोऽवसत्तत्र गोपराजो महावरः ।
सुमुखी नाम सा पत्नी तस्य गोपी वभूव ह ।
तयोश्च कन्यका जाता इन्दुलेखा मनोरमा ।
भाद्रस्य शुक्लपक्षस्य एकादशी शुभा तिथिः ।
दशमीवेधसंयुक्ता मुहूर्त्ताभिजितायुता ।
पूर्वविद्धा सदा कार्य्या परविद्धा न कर्हिचित् ।
सूर्य्योदयात्समारभ्य घटिकाः षोडशाः गताः ।
तन्क्षणे इन्दुलेखायाः जन्मोत्सवमकुर्व्वत ॥

विष्णुरहस्ये--

अस्याः सख्यः समाख्याताः काञ्चनेन समन्विताः ।
सुलेखा पद्मवदना विचित्रा कामकुन्तला ।
सुगन्धा नागकेशी च कटिसैंध्री सुलतिका ।
लेखायास्ता उपासख्य अष्टौच कथिताः शुभाः ॥

इन्दुलेखायाः स्थानं श्रीकृष्णस्य वामभागे श्रीराधायाः निकटोपवेशनम् । इत्यादाविन्दुलेखायाः स्थानवर्णनम् ॥

अथ रंगदेव्याः स्थानवर्णनम् । विष्णुपुराणे--

डभारो नाम ग्रामश्च दक्षिणयां दिशि स्थितः ।
वीरभानोः स्थितिस्तत्र सर्वगोपे सुधी वरः ।
सूर्य्यावती भवत्तस्य भार्य्या च गुणवत्यपि ।
गुणवत्याः जमी कन्या रंगदेवीति विश्रुता ।
भाद्रे मासि सिते पक्षे त्रयोदश्यां रवेर्युता ।
पूर्वविद्धा सदा ग्राह्या धनिष्टाॠक्षसंयुता ।

भृगुवारेण संयुक्ता रंगदेव्याश्च जन्मनि ।
सूर्य्योदयात्समारभ्य घटिका एकविंशतिः ।
तत्क्षणे रंगदेव्यास्तु जन्मोत्सवमकुर्व्वत ॥

देवीपुराणे--

अस्याः त्वष्टौ उपासख्यः श्रीदेवी कमलासना ।
वलिदेवी महादेवी रंजना कलिरंजना ।
कामदेवी कलाकांता सर्वसौन्दर्य्यगर्व्विताः ।

रंगदेव्याः स्थानं श्रीकृष्णस्य वामभागे, श्रीराधायाः निकटे निवेशनस्थानम् । इत्यादौ रंगदेव्याः सप्तम्याः सख्याः स्थानवर्णनम् ॥

अथ सुदेवीनिवासस्थानवर्णनम्--पाद्मे--

स्वर्णपुरे समाख्याते पश्चिमायां दिशि स्थिते ।
गौरभानुर्महागोपस्तस्य भार्य्या कलावती ।
"स्वर्णाचलमिति नाम्ना पर्वतः संस्थितः स्वयम् ।
तस्योपरि ग्रामो बसत् संस्थानं रासमण्डले" ।
तयोः कन्या समुत्पन्ना सुदेवी नाम विश्रुता ।
भाद्रे मासि सिते पक्षे चतुर्थी पञ्चमोयुता ।
परविद्धा सदा कार्य्या पूर्वविद्धा न कर्हिचित् ॥
चित्रानक्षत्रसंयुक्ता शोभनेन समन्विता ।
सोमवारसमायुक्ता सुदेवीजन्मवादिनी ॥
भास्करोदयमारभ्य व्यतीते तु घटीद्वये ।
तत्क्षणे सुष्टुदेव्यास्तु जन्मोत्सवमकुर्व्वत ।

नारदपञ्चरात्रे—

अस्याः सुष्टुदेव्या उपासख्यस्त्वष्टौ प्रकीर्त्तिताः ।
रतिक्रीडा बिशाला च अन्तिका कामलालिता ।
निवराजी महालीला कोमलांगीतिविश्रुताः ।

अस्याः सुदेव्याः स्थानं श्रीकृष्णस्य वामभागे श्रीप्रियायाः श्यामायाः निकटे स्थानम् ।

एताश्च पट्टराज्यश्च अष्टौ सख्यश्च ताः स्मृताः ।

इति सुदेवीनिवासस्थानवर्णनम् । अथ पट्टराज्ञीनां वर्णनं समाप्तम् ॥

अथ नवम पट्टराज्ञी चन्द्रावली, तस्याः निवासस्थानवर्णनम् ।

विष्णुरहस्ये---

रिठपूरे समाख्याते 'गोपवृन्दैः समावृते ।
वायव्यकोणे पश्चिमोत्तरयोः कोणे स्थिते ।
सूर्य्यभानुर्महागोपस्तस्मिन्सुन्यवसत्तदा ।
सुमन्था नाम भार्य्या च तस्य गोप्यभवत्तदा ।
ज्ञातिगुर्जरिसंभूता सूर्य्यभानु-विवाहिता ।
तस्यास्तु कन्या संभूता चन्द्रावली इति श्रुता ।
विख्याता नवमी राज्ञी श्रीकृष्णस्यासनार्द्धभाक् ॥
तस्मिन्कदानुसमये श्रीकृष्णः समुपागतः ।
भाद्रस्य शुक्लपक्षे च द्वितोया तृतीयायुता ।
उत्तराफाल्गुनीऋक्षसंयुता शिवयोगिनी ।
रात्रिर्गताश्चतुनाड्यस्तत्क्षणे जन्मभाविनी ॥
पाणिना कृष्णमावन्ध्य जलक्रीडां चकार ह ।
"अष्टाभिः सखिभिः सार्द्धं गोपाल लिंगनं कुरु ॥"
श्रीकृष्णस्तद्बचः श्रुत्वा जगृहे तु स्वपाणिना ।
त्वयाहं तोषितो देवि ! यत्र त्वं सर्वदा स्थिता ।

ब्रह्माण्डे-अष्टाभिः सखिभिः सार्द्धं रम्या पुष्करिणी स्थिता ।
पट्टराणी पृथक्त्वेन यत्राहं पुनरागतः ॥

अस्याश्चन्द्रावल्यास्त्वष्टौ सख्यः---

रागलेखा कलाकेलि पालिका च मनोरमा ।
महोत्साहोल्लासिका च पद्मावती विशालिका ।

चन्द्रावल्या साद्धं श्रीकृष्णः विराजते रमते च। इति श्रीचन्द्रा-वलीस्थानवर्णनम् ॥

अथ श्रीवृषभानुपुरक्रीडार्थं श्रीप्रियया राधया सहितः अष्टाभिः सखीभिः साद्धं संकेतदेवीपूजार्थं संकेतस्थलमव्रजत्। केचिदाचार्याः ललितां स्वकीयां तथा राधां परकीयां वदन्ति इति मृषावाक्यं लोका-पवादमात्रं इति श्रीनारायणभट्टमतेन श्रीराधां स्वकीयां वदन्ति। श्रीललितायाः सख्यश्चतस्रः, श्रीराधायाः सख्यस्तु गदेव्वादयः। सुदेव्याश्चतस्रः॥ तत्र संकेतघटस्य दक्षिणभागे पूर्वस्यां दिशि देव्याः मन्दिरमस्ति। तत्र ललिता देवीमपूजयत्। तत्रैव देव्याः मन्दिरस्याग्रे मण्डलस्तत्र सर्वे गोपालाः श्रीकृष्णः सर्वा सख्यः भोजनानि चक्रुः। तत्र देव्याः मन्दिरस्य निकटे कुंजमेकमस्ति। तस्मिन् स्थाने सर्वाभिः गानं कृतम्। ततस्तस्माच्छ्रीकृष्णः सर्वाभिः सखीभिः साद्धं करहपुरं गत्वा भाद्रशुक्लसप्तम्यामेकादशघटीव्यतीतायां तत्समये सखीभिः साद्धं रासक्रीडामकरोत्। ततो वृषभानुपुरात् क्रोशपर्यन्तस्थाने विशा-खाकुंडमस्ति गोवर्द्धनागमनमार्गे तत्रागतो हरिः सखीभिः साद्धं स्नात्वा वृषभानुपुरमायातः। ततः भाद्रपदशुक्लाष्टम्यामेकविंशति-घटीव्यतीतायां दानमन्दिरे रासोत्सवमकरोत् इत्यादि ॥

अथ वृषभानुपुरस्य वर्णनम् वाराहे—

पुरा कृतयुगस्यान्ते ब्रह्मणा प्रार्थितो हरिः।
"ममोपरि सदा त्वं हि रासक्रीडां करिष्यसि।
सर्वाभिः व्रजगोपीभिः प्रावृट्काले कृतार्थकृत्।

श्रीभगवान् उवाच—

तथा ब्रह्मन् व्रजे गत्वा वृषभानुपुरे स्थितः।
पर्वतो भवसि त्वं हि मम क्रीडां च पश्यसि॥"
यस्माद्ब्रह्मा पर्वतोऽभूद्वृषभानुपुरोपरि।

ब्रह्मवैवर्त्ते—ततो राधा प्रियं कृष्णं वाक्यमूचे कृतार्थकृत्।
मम पितृपुरे त्वं हि मया सह प्रतिष्ठतु।

ब्रह्मा कृतार्थतां याति मम प्रीतिकृतो भव ।

तत्रैव पुरे श्रीराधा प्रियं श्रीकृष्णं विज्ञाप्य ब्रह्मनाम पर्वतोपरि विहारार्थं स्वकीयं मन्दिरं कृत्वा (तत्र युगलमूर्त्तिविराजते) अष्टानां सखीनामतिप्रीत्या पितुर्मन्दिरस्य समीपे सखीनां मन्दिरं कृत्वा तत्रासां मध्ये स्वयमपि विराजते ॥ हेमाद्रौ--

एकदा समये कृष्णः राधायाः दानं याच्यते ।

तस्माद्दानप्रवासः स्याद्रासक्रीडास्थलोऽभवत् ॥

विष्णुपुराणे—विष्णुनामपर्वतोपरि विलासमन्दिरं कृत्वा भाद्रशुक्लाष्टम्यां सप्तघटीरात्रिशेषायां विलासं कृतवान् । रासक्रीडां सखीभिः सार्द्धं स्वयं हरिः कृतवान् । ततः नवम्यां त्रिघटीव्यतीतायां मोरकुट्यां स्थाने रासोत्सवं कृत्वा ततः भोजनं कृत्वा सर्वाभ्यः सखीभ्यः महाप्रसादं दत्वा गह्वरवनस्थानमागत्य तस्मिन्नृत्योत्सवं कृतवान् । ततः यावबट नाम वटमगच्छत् । तस्यामेव भाद्रशुक्लनवम्यां षट्घटी रात्रिशेषायां तत्र स्थले श्रीकृष्णः रासक्रीडां कृतवान् । ततो सखीभिः सार्द्धं कोकिलावनं गत्वा तत्र भाद्रशुक्लदशम्यां अष्टघटीकादूर्द्धं रासक्रीडां कृतवान् । रासक्रीडितायाः श्रीराधायाश्चरणयोर्यावकः स्खलितोऽभवत् । तस्माज्जावबटनाम स्थलमभवत् । ततस्तस्यामेव दशम्यां संकेतवटस्थलमागत्य च विंश घटीव्यतीतायां श्रीराधा कृष्णश्च सखीभिः सार्द्धं जटाजूटनामवटस्थले क्षणं स्थित्वा तत्र वटस्य दक्षिणे भागे शृंगारमन्दिरं गत्वा शृंगारान् अकरोत् । नारदपञ्चरात्रे—

ततः शैय्यामन्दिरं गत्वा शयनविहारान् चक्रुः । ततः शयनमन्दिरादुत्थीय ब्रह्मकुण्डं वटस्य निकटेऽस्ति तस्मिन् कुण्डे मुखप्रक्षालनं चक्रुः, ततस्तु सन्ध्यासमये सर्वे सखायः सख्य. देव्याः स्थानं पुनरागताः विह्वला ,हारादीनि भूषणानि पतितानि विस्मृत्य प्रेमविह्वला भवन्ति । तत्र विह्वलकुंडमभवत् । तत्र विह्वलामूर्त्तयः भवन्ति । अग्रे वक्ष्यमाणदिवोदासनिबन्धे–तत्र श्रेष्ठितो भगवद्धरिः श्रीकृष्ण-

स्तस्यां भाद्रशुक्लदशम्यामेव पञ्च घटी रात्रिशेषायां मोरकुट्यां पुनरागत्वा रासक्रीडां कृतवान् , ततः सांकरीखोरिमायातः । ब्रह्मनामपर्वतोपरि सखीभिः साद्धं श्रीराधा विराजते । विष्णुनामपर्वतोपरि गोपालैः श्रीकृष्णश्च विराजते । द्वयोः स्थानयोः स्थित्वा अवतारस्य लीलाः कथिताः, तदा क्रुद्धाभिः लीलाकुपिताभिः गोपीभिः सर्वेषां गोपालानां शिखाऽधोवृत्तेषु बध्वा वाक्यैस्ताड्यते ।। आदिवाराहे कारिका—एकादश्यां षट्घटीव्यतीतायां समये सर्वे गोपालाः शब्दान् चक्रुः, हे हरे हेला इति वाक्यमाभिर्गोपीभिरस्माकं शिखाबन्धनं कृतं, त्वया वयं मोचयितुं योग्याः हे सखे श्रीकृष्ण इदं वाक्यं त्वं वद, अहं न जानामि, पुनः ऊचुरिति तिस्रः, गोप्यस्ता ऊचुः, पुनः श्रीकृष्णमूचुः, हे सखे अस्माभि बन्धनं कृतं त्वया किं । ततः भाद्रशुक्लद्वादश्यां रात्रौ श्रीकृष्णोपरि क्रुद्धा सती मानमकरोत् । सा बहुमानयुक्ता भवति । तदा श्रीकृष्णः ललितां प्रेषयित्वा मानत्यजनात् ततः द्विवारं सन्देशेन मानो न निवर्त्तते । तदा प्रभुः स्वयमागत्य सखीवेशं धारयित्वा श्रीराधानिकटेऽगमत् ततः श्रीराधा उवाच । हे सखि ! कुतः अस्मिन् स्थाने आगता त्वं नाम किं कुत्र ग्रामः, हे श्रीराधे ! अहं नन्दग्रामे वसामि । श्यामला सखी नाम, तव सखी भवितुं समायाता । हे सखि त्वं अस्माकं निकटे स्थिता भव । श्रीकृष्णेन एवं मानेन सर्वा रात्री व्यतीता । सार्द्धप्रहररात्रिशेषायां तदा स्वयं प्रकाशते । तत्र स्थाने एवं मानेन मोचयित्वा श्रीराधाकृष्णौ रासक्रीडां कुर्वंतौ सखीभिः सार्द्धम् । ततः भाद्रशुक्लत्रयोदश्यां प्रातः समये सांकरीखोरिमायातौ द्वौ पर्वतोपरिस्थितौ लीलां कथयन्तौ । ततस्तस्यां सांकरीखोर्यां राधा गोपिभिः सार्द्धं दधिभाजनं मस्तकोपरि निधाय विष्णुनामपर्वतात्पूर्वभागतस्त्वायाता । तत्र श्रीकृष्णः वेत्रहस्तेन स्थित्वा दानं ययाचे । मध्यान्हपर्य्यन्तं लीलाः कृतास्तत्पश्चाद्दधिभाण्डं भंक्त्वा दधि भुंक्ते । विष्णुयामले कारिका---तत्रैव मानमन्दिरं कृत्वा पुरं वासयित्वा ततो मानमन्दिरादधः पश्चिमे भागे गत्वा जलमपिबत् ।

मुखहस्तप्रक्षालं कुर्वंतस्तस्माद्रत्नकुंडाभिधानमभवत् । ततः सन्ध्यासमये त्रयोदश्यामेव स्वर्णपुरं गत्वा तत्रैवस्थाने श्रीकृष्णः सखीभिः सार्द्धं रासक्रीडां कृतवान् । ततः भाद्रशुक्लचतुर्दश्यां कदम्बवननाम कदम्बखण्डीमगच्छत् । काम्यवनस्य निकटस्थलेऽस्ति । तत्र श्रीकृष्णः सूर्य्योदयात्सप्तघटीव्यतीतसमये रासक्रीडां करोति । तत्रैव श्रीराधा मानं कृत्वा तूष्णीमेव स्थिता । तत्रैव रामलीलाया उत्सवं कृत्वा पुनः रासोत्सवं चकार माननिवर्त्तनेन । ततो भाद्रशुक्लपूर्णिमायां संकेतस्थलमागत्य--ब्रह्मवैवर्त्ते कृष्णखंडे--

पूर्णायां पूर्वविद्धायां रात्रौ त्रय घटीगताः ।
तस्यां रासोत्सवं कुर्य्यात् द्वादशपूर्णिमासु च ॥

रासोत्सवे पूर्वविद्धा कर्त्तव्या । राजसेवायां मुकुटधारणे पराविद्धा ग्राह्या । नारदपञ्चरात्रे- केचित् पूर्वविद्धामपि इच्छन्ति । मण्डलविराजमानायां मदनगोपालादिद्वारेषूत्सवेषु चन्द्रव्यापिनी ग्राह्या प्रतिपत्सन्धिवर्जिता ।

ज्योत्स्ना चन्द्रमसो व्याप्ता तत्रैवं मण्डलं कुरु ।
चलादिप्रतिमानां च पूर्वविद्धा सुखप्रदा ।
अचलादिकमूर्त्तीनां परविद्धा शुभप्रदा ॥

ब्रह्मवैवर्त्ते कृष्णखण्डे-पूर्णायां पूर्वविद्धायामिति । विष्णुधर्म्मोत्तरे—

नन्दग्रामात्सर्वसखिभिः सार्द्धं श्रीकृष्णः अत्र संकेतस्थलमायातः । वृषभानुपुरात् श्रीराधा सर्वसखिभिः सार्द्धं अत्र स्थलमागता । तयोः श्रीराधाकृष्णयोः संकेतस्थलं भवति । तत्रैव देव्याः स्थाने षड् विह्वलाः गताः । तत्रादौ श्रीकृष्णः विह्वलतां गतः सन् कदम्बलतां हस्तयोः गृहीत्वा पातितुमिच्छुस्तदा सुबलनाम्ना सख्या गृहीतः, ततः सुबलोऽपि विह्वलतां गतः सन् श्रीकृष्णादयस्त्रयः सर्वे गोपाजा विह्वलाः गताः सन्तः स्वकीयस्वकीयपाणिषु कदम्बलतां गृहीत्वा स्थिताः । एवं श्रीराधाद्यास्त्रिस्रः गोप्यः विह्वलाः भवन्ति । श्रीराधा विह्वला सती कदम्बलतां पाण्योः गृहीत्वा तूष्णीमेव स्थिता तदा श्रीराधा

ललितया गृहीता, ततः ललितापि विह्वलतां गता सती तदा विशाखया गृहीता ततो विशाखाऽपि विह्वलतां गता सती तद्यैवं सर्वाः राधाद्यास्त्रिस्रोऽपि विशाखान्ताः गोप्यः विह्वलाः सन्तः स्वकीयस्वकीयपाणिषु कदम्बलतां गृहीत्वा तूष्णीमेव स्थिताः भवन्ति । मार्कण्डेये कारिका—तत्रैव स्थले शिलापृष्ठे सखीभ्यां श्रीकृष्णः पाषाणमूर्त्तिर्भवति । तत्रैव शिलापृष्ठे सन्मुखावलोकनस्थिताः-एकस्मिन् वामभागे उत्तराभिमुखाः श्रीकृष्णादयस्त्रयः मधुमंगलान्ताः मूर्त्तयः भवन्ति । द्वितीयस्मिन् दक्षिणे भागे तत्रैव शिलापृष्ठे श्रीराधाद्यास्त्रिस्रः विशाखान्ताः मूर्त्तयः पाणिगृहीताः कदम्बलताः भवन्ति । तत्रैव देव्याः स्थाने स्वयमेव स्थिताः षट् मूर्त्तयः बभूवुः । एतानि लिंगानि विचिन्तयेत् । इति श्रीविह्वलस्थलनिरूपणम् । अथ तत्रैव संकेतस्थले सरदृतु काले आश्विनशुक्लपूर्णिमायां पूर्वविद्धायां रात्रौ श्रीराधासहितः श्रीकृष्णः संकेतवटस्थलमागत्य जटाजूटवटस्याधः रासक्रीडां कृतवान् ॥

पाद्मे-संकेतवटके स्थाने गोपिकाभिः समन्वितः ।

रासक्रीडाद्भुतां कुर्य्यान्पूर्वसंकेतमण्डले ।
श्रीकृष्णो विमलो भूत्वा भगवान् देवकीसुत ।
सर्वाभ्यो गोपिकाभ्यश्च क्रीडावार्त्तां ब्रूवन्हरिः ।

एतादृश्यश्च विमलेन मया कृतास्ता लीलाविलासाः परमाः सुखदायिकाः मम ईदृग्विलासविमला विपिनेषु कार्य्याः, वृन्दावनेषु पुलिनेषु मनोरमाः भवन्ति । कृष्णाकृतिसुन्दरेण वटस्थले रूपमनोहरेण वृन्दावनेषु पुलिनेषु ततो कृतास्ताः गोविन्दरूपेण मनोहरेण । स्कान्दे कारिका—तत्रैव स्थले सर्वे ब्रह्मेन्द्रादयः देवाः समभ्यागताः स्थिताः बभूवुः । तत्रैव वेदव्यासमाज्ञाय रासपञ्चाध्यायं सर्वे देवाः शुश्रुवुः । तदनुसारेण तद्भक्त्या श्रीमद्भास्करात्मजश्रीनारायणभट्ट—गोस्वामिभिधानुरासपञ्चाध्यायं श्रीभागवतं तत्रैव स्थले नृत्यमानं युगलमूर्तिं श्रीराधाकृष्णमश्रावयत् । श्रीभागवते दशमे—"श्रीशुक उवाच । भगवानपि ताः रात्रीः शारदोत्फुल्लमल्लिकाः । वीक्ष्ये"त्यादौ-

"विक्रीड़ितं व्रजवधूभिरिदं च विष्णोरित्य"न्तश्लोकपर्य्यन्तं इति रासपञ्चाध्यायं संकेतस्थले जटाजूटवटस्याधः श्रीराधाकृष्णाभ्यां श्रवणमाहात्म्तम्। रासक्रीडा कृता आदौ संकेतवटके स्थले। पश्चाद्वृन्दावने पुलिनेषु मनोत्सवैः कार्य्या। अत्रैव सर्व-पूर्णिमासु हरिः स्वयं सर्वाभिः सखिभिः सार्द्धं रासक्रीडां करोति स्म इति स्कान्दे ॥

अथ ऋतुप्रमाणं ज्योतिर्निबन्धे-मेषादिराशिद्वयभानुभोगात् षड्ऋतवः स्युः शिशिरो वसन्तः ग्रीष्मश्च वर्षा च सरच्च तद्वद्धेमन्त नामा कथिता हि संख्या इति प्रमाणः। ततः श्रीकृष्णः राधां सीताशापाद्वृषभानुनन्दिनीं गर्ववतीं सर्वान् सखीवर्गान् च वटस्य स्थले निवेश्य रमणहेतवे श्रीराधां स्वकीयमन्दिरे प्रवेश्य राधारमण इति नाम्ना केवलैकया राधया सह रेमे पूर्णायां नवघटीरात्रिशेषायां एतत्समये तस्माद्राधारमणमूर्त्तियुगलो विराजते। तत्समये श्रीकृष्णस्यावस्था द्वादशवर्षीया श्रीराधायाः अवस्था पञ्चोनद्वादश वर्षीया। एवं पञ्चान्तरजन्मावस्थया श्रीराधारमणमूर्त्तियुगलो विराजते इति विष्णुयामले।

अथ तत्रैव मन्दिरस्थानं सम्मोहनतन्त्रे—

वटस्य दक्षिणे भागे ग्रामोऽस्ति विपुलं वनम्।
तत्रैब मन्दिरं चास्ति राधारमणसुन्दरम्।
वशीकर्त्तुं च श्रीराधा स्वकीये मन्दिरे स्थिता।
चतुर्भुजो वशीभूत्वा राधारमणनामतः ॥

तत्रैव मन्दिरे सरद्दतुमासाश्विनशुक्लपूर्णायां पूर्वविद्धायां चन्द्राकराभिरामायां ज्योत्स्नाव्याप्तस्थले द्वारदेशे स्वकीयं मण्डलं कृत्वा वितानं बध्नीयात्। अग्रतः श्रीललितयाऽष्टदलपद्मं रचितम्। चतुर्घटीरात्रिगतायां सरदनिवेशनसमयं तत्रैव सरदर्तुपूर्णायां निषेधः। विष्णुपुराणे—

शेषावतारद्वारेषु बलदेवादिमूर्त्तिषु।
अचला प्रतिमा यत्र मम क्वापि यदा तदा।

पराविद्धा सदा कार्य्या मण्डलस्य प्रयोजनम् ।
प्रतिपत्सन्धियोगेण एषु द्वारेषु पूजनम् ।
नैविद्य विविधं कृत्वा मुशलायुधप्रीतये ॥
आग्नेये—ममाऽपि लघुमूर्त्तिनां पूर्वविद्धा सदा कृता ।
मनमोहनमूर्त्तिनां प्रतिपत्सन्धिवर्ज्जिता ।
चन्द्रांशुव्यापिनी ग्राह्या पूर्णिमाश्विनमासिके ।
पूर्णिमा च क्षयं प्राप्ता द्वितीये परि वा यदि ।
तत्रैव सर्वशेषादिअवतारस्य मूर्त्तयः ।
वलदेवस्य कृष्णस्य सर्वेषां मन्दिरोत्सवम् ।
कुर्य्याच्च विधिवद्धीमान् भेदाभेदं न कारयेत् ।
पुराणसमुच्चये ।—
सूर्य्यचन्द्रमसोः ग्रस्ते पूर्वविद्धा च पूर्णिमा ।
समये मण्डलोत्साहे चन्द्रमा ग्रसते यदि ।
तदा कार्त्तिकपूर्णायां मण्डलोत्सवं कारयेत् ।
आश्विनस्यैव पूर्णायां मण्डलोत्सवमाचरेत् ॥

इति श्रीमद्दाक्षिणात्यकुलोद्भवश्रीभास्करात्मजश्रीनारायणभट्ट-गोस्वामिविरचितायां व्रजोत्सवचन्द्रिकायां व्रजसारोद्धारे उत्तरार्द्धवृत्तौ अष्टमः प्रकाशः ॥

—❀—

अथाष्टानां ललितादीनां सखीनां परिचर्य्यावर्णनम्— वृहद्गौतमीये—
ततस्तत्रैव संकेतस्थले चेष्टा—
रासक्रीडावटस्थानाच्छय्यायाः मन्दिरं गतः ।
क्रीडाश्रमेण श्रीकृष्णस्त्वष्टाभिः सखिभिः सह ।
आश्विनशुक्लपूर्णायामर्द्धरात्रिर्गता यदि ।
तत्समयेंऽचितां शय्यां चन्द्रावल्या विलोक्य सः ।

तत्रैव स्थितवान् कृष्णः ललिता चमरं चक्रे ।
विशाखा च जलास्वादं कारयंती मनोरमा ।
गंगाजलस्य पात्राच्च स्वच्छवस्त्रेणाच्छादितात् ॥
चम्पकलता कृष्णाय दत्वा ताम्बूलवीटिकाम् ।
पात्रं ताम्बूलदानस्य कांचनेन विनिर्म्मितम् ॥
तुंगदेवी च वस्त्राणि धृत्वा स्वच्छेन वाससा ।
इन्दुलेखा सखी रम्या श्रृंगारस्य विभूषणान् ॥
धृत्वा सुवर्णपात्रेऽस्मिन् भण्डाराण्यपि सा तदा ।
चित्ररेखा च कृष्णस्य वामपादं च लाडयेत् ।
रंगदेवी दक्षिणं च पादाब्जं लाडयन्त्यपि ।
सुदेवी पिकपात्रं च गृहीत्वा क्षालनं चक्रे ।
श्रीराधा भोजनास्वादं श्रीकृष्णाय प्रकुर्व्वती ।

इति बृहद्गौतमीये श्रीकृष्णपरिचर्य्या ॥

ततः समयनिरूपणं नारदपञ्चरात्रे—

राधायाः सुरते काले तुंगदेव्यादयस्तदा ।
तुंगदेवी इन्दुलेखा रंगदेवी सुदेवीका ।
राधायाः निकटस्थाश्च भवन्ति मन्दिरे स्थिताः ।
अन्याश्चतुः सख्यः भिन्नाः ललितामन्दिरे स्थिताः ॥

ततः श्रीराधासुरतमन्दिरे चतुः सखीनां तुंगदेव्यादीनां युगलमूर्त्तेः परिचर्य्याः । ब्रह्मवैवर्त्ते—

तुंगदेवी चामरं च करोतु सुरतौ यदा ।
इन्दुलेखा च ताम्बूलवीटिकां दापयन्तु सा ।
रंगदेवी जलास्वादं जलपात्रात्सुनिर्म्मलम् ।
सुदेवी पीकदानस्य पात्रं पाणौ निधायतु ।

इति श्रीराधासंभोगपरिचर्य्या । ततः ललितासंभोगसमये ललितामन्दिरे विशाखादीनां चतुः सखीनां परिचर्य्या । ततः स्कान्दे—

विशाखा चमरकार्य्यं चम्पका पानवीटिकम् ।
चित्रलेखा जलास्वादं कारयंती सुनिर्म्मलम् ।
चन्द्रावली पीकपात्रं गृहीत्वा पाणिना तदा ॥

ततः श्रीकृष्णः लीलायास्त्ववतारः, द्वादशवर्षावस्थया विहारसमये चतुः षष्ठिसंख्याकैः सखीभिः सख्युपसखीभिः सार्द्धमेकावसरे रमते स्म । यद्वा वहुविहारावसरे श्रीकृष्णः द्वादशोपरि पंचाशत्सखीभिरुपसखीभिस्तदा स वान्यांयसखीभिः सार्द्धं क्रीडते । तत्रैव संकेतस्थले फाल्गुनस्योत्सवः, फाल्गुनमासे सर्वेषु विहारस्थानेषु होलिकोत्सवरासक्रीडानिरूपणं । ब्रह्माण्डपुराणे फाल्गुनमाहात्म्ये—

फाल्गुनस्य सिते पक्षे त्वेकादश्यां विधानतः ।
आमर्द्दक्यां विधानश्यां पञ्चविंशघटीगते ।
तत्समये होलिकायाश्चोत्सवं स वटस्थले ।
संकेतस्थानके क्रीडां रासस्य कृतवान् हरिः ।
परविद्धा सदा कार्य्या पूर्वविद्धा न कर्हिचित् ।

इति संकेतस्थले होलिकोत्सवः ।

अथ चन्द्रावलीस्थाने होलिकोत्सवः—वृहद्गौतमीये—

फाल्गुनस्य सिते पक्षे द्वादश्यां सखीभिः सह ।
सन्ध्यायाः समये प्राप्ते कृष्णः सप्तदश घटी ॥
गताश्चावसरे रम्ये होलिकायाश्च तूत्सवम् ।
रिंठपुरे समाहूते चन्द्रावल्या विनिर्म्मिते ।
चन्द्रावल्यास्त्वतिप्रीत्या रासक्रीडां करोति सः ।
होलिकोत्सवमत्रास्मिन् लोकाः कुर्व्वन्ति सर्वदा ।
सर्वान्कामानाप्नुवंति सर्वसौख्यसमन्विताः ।
पर्यंतं वर्षकं यावत्तावन्मंगलमाचरेत् ॥

इति चन्द्रावलिस्थाने रिंठपुरे होलिकोत्सवः ॥

अथ विशाखास्थानेऽंजनपुरे होलिकोत्सवस्तत्रैव द्वादश्यामेव ।

विष्णुरहस्ये—

फाल्गुनस्य सिते पक्षे द्वादश्यां नवका घटी ।
गतास्तत्समये प्राप्ते त्वर्वाक् मध्यान्हतस्तदा ।
अंजपुरे विशाखायाः स्थाने प्राप्तो हरिः स्वयम् ।
होलिकोत्सवरासस्य क्रीडां च सखीभिः सह ।
विशाखा-सुखदानाय निर्म्मले रासमण्डले ।

इति श्रीविशाखास्थानेऽजनपुरे होलिकोत्सवः ॥

अथ दानमन्दिरे होलिकोत्सवः ब्रह्माण्डे—

फाल्गुनस्य सिते पक्षे दशम्यां घटिका दश ।
व्यतीतसमये कृष्णः मन्दिरे दानकोत्सवम् ॥

अथ श्रीबलदेवस्य ललिताग्रामस्य मन्दिरे रासक्रीडावर्ज्जितहोलिकोत्सवो खेलः । पाद्मे पातालखंडे—

फाल्गुनस्य सिते पक्षे दशम्यां घटिकाः गताः ।
अष्टादशाश्चोपरिष्टात्सन्ध्यायाः समये गते ।
शेषावतारदेवस्य रेवतीसंयुतस्य च ।
मन्दिरे होलिकोत्साहं कुर्व्वते सर्वदा जनाः ।
धनधान्यसमृद्धिः स्यात् संकर्षणप्रभावतः ॥

इति श्रीसंकर्षणमन्दिरे होलिकोत्सवः । तत्रैव ललिताग्रामनिकटे त्रिवेण्याः मध्यस्थले होलिकोत्सवः । ब्रह्मवैवर्त्ते राधाखण्डे—

फाल्गुनशुक्लपूर्णायामेकोनविंशतिः कलाः ।
गतास्तत्समये प्राप्ते पूर्वविद्धा यदा भवेत् ।
उच्चग्रामस्य भागे च दक्षिणे रासमंडले ।
सखीगिरितटे रम्ये ललितासुखदायके ।
तस्मिन् स राधया सार्द्धं ललिताद्याभिः संयुतो ।
होलिकोत्सवं रासस्य क्रीडां च कृतवान् हरिः ॥

अग्रजस्य गृहे कृष्णः भ्रातृजायां सुखं चक्रे ।
होलिकोत्सवकर्त्ता च भ्रातुरग्रे च वालकः ।
क्रीडां च त्वधिकां कृत्वा मूशलायुधप्रीतिदाम् ।
भोजनं भ्रातृजायायाः हस्तेन कृतवान् लघुः ।
पुत्रवत्स्नेहयुक्तेन चेतसा रेवती तुष्टा ।
कृष्ण कृष्णेति व्याचष्टे होलिकाखेलविह्वला ।
कृष्णस्तु प्रीतियुक्तोऽभूद्भ्रातृजायां नमस्कृतः ॥

इत्युच्चग्रामे होलिकोत्सवः विष्णुयामले ॥

अथ श्रीमन्मदनगोपालाद्यवतारस्वरूपाणां मन्दिरे होलिकोत्सवः—

फाल्गुनस्य सिते पक्षे नवम्यां दशमीयुता ।
पूर्वविद्धा न कर्त्तव्या परविद्धा शुभप्रदा ।
व्यतीता घटिकाः विंशः समये होलिकोत्सवम् ।
कुर्व्वन्ति मनुजाः भक्ताः पूर्णाः सन्ति मनोरथाः ॥

अथ गर्जपुरे ग्रामस्य निकटे स्थाने ललितामन्दिरे होलिकाहिण्डोलोत्सवः विष्णुरहस्ये—

श्रावणस्य च पूर्णायां मासस्य श्रवणान्विता ।
गर्जपुरे महास्थाने प्रेमकुण्डसरोवरे ।
ललितायाः विशाखायाः हिण्डोलसुखमाददे ।
द्वयोः सख्योरतिप्रीत्या करोति ललितागृहे ।
मन्दिरोत्सवकार्य्याय सखिभिः सार्द्धमागतः ।

स्थानस्योत्पत्तिः आदिवाराहे—

एकदा समये कृष्णः प्रेम्णा मग्नोऽभवत्तदा ।
सर्वाभिः सखीभिः सार्द्धमत्यन्तप्रेमपूरितः ।
दुकूलं पतितं तत्र राधया लभ्यते क्वचित् ।
राधायाः पतितं हारं श्रीकृष्णेन विचिन्वतम् ।

श्रीकृष्णश्चापि राधायै दत्वा प्रेमपरं ययौ ।
कृष्णादयश्च गोपालाः राधाद्याः गोपिकास्तदा ।
प्रेमपूर्णाः वभूबुस्ताः सर्वें सर्वाश्च विह्वलाः ।
प्रेम्णश्चावसरे प्राप्ते प्रेमस्थानो तदाऽभवत् ।

तत्रैव स्थाने ललितामन्दिरे रक्षावन्धनोत्सवः । वामनपुराणे—

रक्षाया वन्धने चैव राधाकृष्णस्य निर्णयः ।
पूर्णिमा पूर्वविद्धा च सदा कार्य्या शुभप्रदा ।
परविद्धा सदा त्याज्या श्रावणस्य च शुक्लगा ।
भद्रायां कुरते नैव रक्षाया वन्धनं शुभम् ।
भद्रायां वन्धनं कार्य्यं शरीरं क्षीयते यदा ।
तत्रावासस्य ग्रामस्य विप्रेभ्यो ललिता सखी ।
कारयित्वा च रक्षायाः वन्धनं कृष्णयोः करौ ॥
कृष्णस्य दक्षिणं हस्तं राधाया वामकं करम् ।
गर्जपुरप्रवासिभ्यो विप्रेभ्यो वहु दक्षिणाम् ।
ददौ तांमूलं ललिता परिचर्य्याभिगामिनी ॥

अथ श्रीशेषावतारस्य संकर्षणज्येष्ठवलदेवस्य श्रीकृष्णादिचतुष्टय राम-नृसिंह—वामनानां चतुर्णामभिषेकस्य पृथक् पृथक् चतस्रः पद्धतयः, अवतारी अवतारस्य भेदः, कर्त्तव्यता भिन्नाः, मन्त्राणामपि भेदः, भिन्न भिन्न मन्त्राः पद्धतिपद्धत्योक्तभिन्नभिन्नवेदमन्त्राः, चतुर्णां वेदानां पृथक् पृथक् मन्त्रैश्चतुर्णां श्रीकृष्णादिराम-नृसिंह—वामनानामवताराणामभिषेकान् कुर्य्यात् । यद्वा श्रीप्रियाया राधायाः श्रीललिताद्यष्टसखीनां द्वे भिन्नभिन्नपद्धती । श्रीराधाभिषेकपद्धतिरन्या, ललिताद्यष्टसखीनामभिषेकपद्धतिरन्या । यजुर्वेदोक्तया राधाभिषेकपद्धत्योक्तमन्त्रैः श्रीराधाभिषेकं कुर्य्यात् । अभिषेकस्य पृथक् पृथक् पद्धतयः सन्ति इति श्यामारहस्ये प्रकारः ॥

तत्रादौ श्रीशेषावतारस्य संकर्षणस्याभिषेकप्रथमप्रयोगः—

पूर्वमेव प्रथमप्रतिष्ठायां। तत्र उच्चग्रामाभिधानललिताग्रामस्य निकटे त्रिवेण्यास्तटस्थविराजमानस्य मन्दिरे श्रीमन्नारायणभट्टगोस्वामी श्रीयुगलमूर्त्तेर्वलदेवस्याग्रे उपविश्य तत्र तावद्गर्भाधानादिसंस्काराणां प्रायेण स्वस्तिवाचनपूर्वकत्वात् प्रथमं तावत्स्वस्तिवाचनमभिधीयते। तत्र कृताभ्यंगादिक्रियः स्वलंकृतः शुचिर्भूत्वा मंगलभारं भृत्यैस्त्वलंकृते मन्दिरे स्वोत्तरच्छदे भद्रासने उदङ्मुखश्चोपविश्य दक्षिणपार्श्वे संस्कार्यं प्राङ्मुखमुदङ्मुखं चोपविश्य प्रथपरिमितधान्यस्योपरि दक्षिणोत्तरभागयोः सौवर्णरजतताम्रमृण्मयाद्यन्यतमकलसद्वयमव्रणं जलपूर्णं सपरिच्छदं सपञ्चरत्नं निधाय तदुपरि सिततन्दुलापूरितं सफलं सनैवेद्यं पात्रं द्वयं निधाय ब्राह्मणानुपवेश्य गन्धपुष्पादिभिरभ्यर्च्य मन्त्रान् पठेत्। तत्र मन्त्राः—

"ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यज त्वाः स्थिरैरंगैस्तुष्टवांसस्तनोभिर्व्यशमे देवहितं यदायुः, ओं स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिदधातु ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥"

अथ गणेशपूजनम्—

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्वोदरास्यविकटो विघ्ननाशो गणाधिपः॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥
अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ।
सर्वविघ्नच्छिेद तस्मै गणाधिपतये नमः ॥
वागीशाद्यासुमनसः सर्वार्थानामुपक्रमे ।
यं नत्वा कृतकृत्याः स्युस्तं नमामि गजाननम् ॥

ततः प्राणानायम्य अद्येत्यादि उक्त्वा गणेशवरुणपूजनम् । श्रीशेषावतारसंकर्षणश्रीयुगलवलदेवप्रथमजन्मोत्सवेऽ विघ्न-कामनया श्रीयजुर्वेदान्तर्गतापस्तंवसूत्राश्वलायनशाखान्वितभार्गवच्यवनाप्लुवानौरव–यामदग्न्येति पंचप्रवरान्वित–श्रीवत्स-गोत्रोत्पन्नविहारस्वरूपयुगलमूर्त्तिश्रीवलदेवकृष्णोपासकवैष्ण-वाचारनिपुण-परमभागवतोऽहं श्रीमद्भास्करात्मजश्रीनारायणभट्टगोस्वामिशर्म्मा त्रिवेण्यास्तटस्थले ललितानिवासस्थानोच्चग्रामाभिधानके द्वादशोत्तरषोडशशते १६१२ संवत्सरे वर्त्तमाने मासोत्तममासि श्रावणमासे शुक्लपञ्चम्यां रविवार–हस्तानक्षत्र–शिवयोगसमन्वितायां दश घटीव्यतीतसिंहार्द्ध-लग्नोदये वेलायामभिषेकं करिष्ये इति संकल्प्य:"ओं गणानां त्वा गणपतिᳶहवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमं ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्यत आनः शृण्वन्नूतिभिः सीदसादनं" इति गणेशं दक्षिणकलशे संपूज्य "इमं मे वरुण अधोहवमया च मृडय त्वा मवस्यराचके तत्वायामिब्रह्मणा वंदमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः, अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशं समानआयुः प्रमोषीः" इति सव्यकलशे वरुणं संपूज्य पुनः प्राणानायम्य तिथिश्रवणान्तेऽस्य श्रीशेषावतारश्रीयुगलवलदेवप्रथमजन्माभिषेकादिकर्म्मं कर्त्तुं तदंगत्वेन मण्डपदेवतापूजनं वास्तुपूजनं

अंकुरार्पणाख्यं कर्म्म प्रोक्षण-प्रतिसराख्ये कर्मणि मातृका-पूजनं समाराधनं च कर्त्तुं तदादौ शुद्ध्यर्थं अभ्युदयार्थं च ब्राह्मणैः सह स्वस्तिवाचन-पुण्याहवाचनं करिष्ये इति संकल्प्य

"ओं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु" इति शिरः स्पृष्ट्वा "शिवा आपः संतु" इति जलं स्पृष्ट्वा "सौमनस्यमस्त्विति" हृदयं स्पृष्ट्वा "अक्षतं चारिष्टं चास्तु" इत्यक्षतान्स्पृष्ट्वा "अर्चत प्रार्चत प्रिय मेधासो अर्चतअर्चतु पुत्रका उतपुरं नु धृत्यु पूवर्चत्" इत्यभि-षेककर्त्तृ सहितान् ब्राह्मणानर्चयित्वा "गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीं। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपाव्हये श्रियं" इति गन्धं दत्वा "आयने ते परायणे ते दूर्वारोहं तु पुष्पिणीः हृदाश्च पुंडरीकानि समुद्रस्य गृहा इमे" इति पुष्पाणि दत्वा—"गंधाः पांतु सौमांगल्यं चास्तु आयुष्यमस्तु अक्षाताः पांतु पुष्पाणि पांतु सुमागल्यं चास्तु सर्वश्रियमस्तु प्रजा—पतिः प्रीयतां शान्तिरस्तु यं कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरण-कर्मारंभाः शुभाः शोभनाः प्रवर्त्तन्ते। तमहमोंकारमादिं कृत्वा भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये" इति प्रार्थयेत्। ततो "द्विजैर्वाच्यतामिति" "भद्रं कर्णेभिरिति" पठित्वा "द्रविणोदा द्रविणसस्तुरस्य द्रविणोदाः सनरस्य प्रयंसत् द्रवि-णोदा वीरवती मिषं नो द्रविणोदारासते दीर्घमायुः सविता पश्चात्तात्सविता पुरस्तात्सवितोत्तरात्तात्सविताऽधरात्तात्स-विता नः सुवतु सर्वतातिं सवितानोरासतां दीर्घमायुः नवो नवो भवति जायमानो ह्वांकेतु रुषसामेत्यग्रं भागं देवेभ्यो विदधात्यापन् प्रचंद्रमास्तिरते दीर्घमायुः आप उंदंतु जीवसे दीर्घायुत्वाय वर्चसेयस्त्वाहृदा कीरिणा मन्यमानो मर्त्यं मर्त्यो-जोहवीमि, जातवेदो यशो अस्मासु धेहि प्रजाभिरग्ने अमृतत्व

मश्यां यस्मै त्वं सुकृते जातवेदू उ लोकमग्ने कृणव: स्योनं अश्विन सपुत्रिणं वीरवन्तं गोमन्तं रयिं न शते स्वस्ति सं त्वा सिंचामि यजुषा प्रजा मायुर्धनं चेति'' दक्षिणकलशं गृहीत्वा नमस्कृत्य पात्रान्तरे किञ्चिदुदकमेतैर्मन्त्रैर्निक्षिपेत् ॥ "दीर्घ-मायुरस्तु स्वस्ति शिवं कर्मस्तु कर्मसमृद्धिरस्तु पुत्रसमृद्धिरस्तु वेदसमृद्धिरस्तु शास्त्रसमृद्धिरस्तु अहरहरभिवृद्धिरस्तु'' वहिर्गत्वा "अरिष्टनिरसनमस्तु यत्पापं तत्प्रतिहतमस्तु'' इति द्वाभ्यां निक्षिपेत् । तत अभ्यन्तरमागत्य "यच्छ्रेयस्तदस्तु शुक्राङ्गारक-वुध-वृहस्पति-शनैश्चर-राहु-केतु-सोमसहिता आदित्यपुरोगा: सर्वे ग्रहा: प्रीयन्तां, तिथिकरणमुहूर्त्तदिग्देवता: प्रीयन्तां'' पुनर्वहिर्गत्वा "श्राम्यन्तु घोराणि शाम्यन्तु पापानि शाम्य-न्त्वीतय:'' इति त्रिभिर्निक्षिपेत् । पुनरभ्यन्तरमागत्य "शुभानि वर्द्धन्तां शिवा: ऋतव: सन्तु, शिवा: ओषधय: सन्तु, शिवा: वनप्सतय: सन्तु, अहोरात्रे शिवे स्यातां उत्तरे कर्मण्यविघ्न-मस्तु उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु उत्तरोत्तरा: शुभाशोभना-क्रिया: प्रवर्त्तन्तां, अग्निपुरोगा: विश्वेदेवा: प्रीयन्तां, माहेश्वरो-पुरोगा: सर्वा: मातर: प्रीयंतां, श्रीविष्णुपुरोगा: सर्वे देवा: प्रीयन्तां, इन्द्रपुरोगा: मरुद्गणा: प्रीयन्तां, वशिष्ठपुरोगा: ऋषिगणा: प्रीयन्तां, आदित्यपुरोगा: सर्वे ग्रहा: प्रीयन्तां, ऋषय: छन्दांस्याचार्य्या: वेदा: यज्ञा: दक्षिणाश्च प्रीयन्तां व्रह्मा च व्राह्मणाश्च प्रीयन्तां, व्रह्म-विष्णु-महेश्वराश्च प्रीयन्तां, श्रद्धामेधे प्रीयेतां, भगवान् नारायण: प्रीयतां, भगवान् स्वामी महासेन: प्रीयतां, भगवान् पितामह: प्रीयतां भगवान् प्रपि-तामह: प्रीयताँ, उद्गातेव शकुने सामगायसि व्रह्मपुत्रइव सव-नेषु शंससि वृषेव वाजीशिशुमतीरपीत्यासर्वतो न: शकुने

भद्रमावद विश्वतो नः शकुने पुण्यमावद याज्यया यजति प्रति-
वैंयाज्या पुण्यवै लक्ष्मोः पुण्यामेत्र तल्लक्ष्मीं संभावयति पुण्या
लक्ष्मीं संस्कुरुते यत्पुण्यं नक्षत्रं तद्वत्कुर्वीतोपब्युषं यदा वै सूय्य
उदेति अथ नक्षत्रं नैति यावति तत्र सूर्यो गच्छेत् यत्र जघन्यं
पश्येत्, ओं तानि वा एतानि यम नक्षत्राणि यान्येव देबनक्ष-
त्राणि तेषु कुर्वीत यत्कारी स्तात्पुण्याह एव कुरुते ओं पुण्याहं
भवंतो ब्रुवंतु ब्रुवंतु ब्रुवंतु" इति पठित्वा ओं स्वस्ति ये वायु-
मुपब्रुवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य पस्पतिः वृहस्पतिं सर्वगणं
स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवंतु नः आदित्य उदयनीयः
पथ्ययैवेतः स्वस्त्या प्रयंति पथ्यां स्वस्तिमभ्युद्यंति स्वस्त्येवेतः
प्रयंति स्वस्त्युद्यंति स्वस्त्युद्यंति स्वस्ति न इन्द्र इति पूर्ववत्
अष्टौ देवा वसवः सोम्यासः चतस्रो देवीरजराः श्रविष्ठाः ते
यज्ञं पांतु रजसः परस्तात्संवत्सरीणममृतं स्वस्ति मह्यं सह
कुटुंवाय शुद्धिकर्मणे महाजनान्नमस्कुर्वाणायाशीर्वचनमपेक्ष-
माणायात्यादि एवं मह्यं सह कुटुंवाय शुद्धिवृद्धि अभ्युदय-
कर्मणे महाजनेत्यादि ऋद्ध्यामस्तोम ॐ सनुयाम वाजमानो
मंत्रं सरथैंहो पयातं यशो न पक्वं मधुगोष्वंतरा भूतांशो
अश्विनोः काममप्राः सर्वामृद्धि मृध्नुयामिति तं वै तेजसैव पुर-
स्तात्पर्यभवच्छंदोभिर्मध्यतोक्षरैरुपरिष्टाद्गायत्र्या सर्वतो द्वाद-
शाहं परिभूय सर्वामृद्धिमाध्नोंत्सर्वा मृद्धि मृघ्नोति य एवं वेद
ऋद्ध्यास्म हव्यैर्नमसोपसद्य मित्रं देवं मित्रधेयं नो अस्तु अनु-
राधान्हविषा वर्धयंतः शतं जोवेम शरदः सवीराः त्रीणि
त्रीणि वै देवानामृद्धानि त्रीणि छन्दांसि त्रीणि सवनानि त्रय
इमे लोकाः ऋध्यामेव तद्वीर्यं एषु लोकेषु प्रतितिष्ठति" इति
पठेत् ।

तत "ऋद्धिं भवंतो ब्रुवंतु ऋध्यतां ऋद्धि समृद्धिरिति" दक्षिणकलशोदकं वामे वाम कलशोदकं दक्षिणे निक्षिपेत्। ततः स्वस्ति पुण्याहसमृद्धिरस्तु वर्षशतं पूर्णमस्तु श्रीसंकर्षणसकल-पूर्णमनोरथंदं श्रीयुगलवलदेवमूर्त्तिर्त्रिवेणीतटे सुस्थिरास्तु, ललिताग्रामोच्चग्रामाभिधाने सकलकल्याणं चिरं सर्वदाऽस्तु रेवतीयुगलं मत्कुलोत्सवानां सर्वदा प्रसन्नोऽस्तु, ममोपासन-विहारस्वरूपयुगलश्रीराधाकृष्णः द्वादशवर्षावस्थास्थः मत्प्र-सूतीनां सन्मुखप्रसन्नोऽस्तु श्रीमदनगोपालस्वरूपमदाराधितः मत्प्रसूतीनां सर्वदा प्रसन्नोऽस्तु ममेष्टदेवनिरन्तरलाडिलेय-स्वरूपश्रीवलदेवनिकटस्थः सर्वदा प्रसन्नोऽस्तु ममेष्टमण्डलस्थ-यंत्रः मत्प्रसूतीनां कामानां परिपूर्णं करोतु गोत्राभिवृद्धिरस्तु शान्तिरस्तु पुष्टिरस्तु तुष्टिरस्तु वृद्धिरस्तु शिवं कर्मास्तु शिव-मस्तु" पुनरपि "गोब्राह्मणेभ्यः गोदावरीतटस्थले दाक्षिणात्य-मत्पितृप्रसूतेभ्य मथुरापट्टनपुरावास्तव्येभ्यः शुभं भवतु" इत्येतैः कलशद्वयं गृहीत्वा नमस्कृत्य तत्कलशोदकं तस्मिम्नेव कांस्य-पात्रे स्वस्तिपुण्याह समृद्धिरस्तु इत्यादिभिर्मंत्रैः द्वाभ्यां निन-येत्। अथाक्षतान् गृहीत्वा "शुचि वो हव्या मरुतः शुचीनां ॐ शुचि ॐ हिनोम्मध्वरं शुचिभ्यः ऋतेन सत्यमृतसाय आयन् शुचिजन्मानः शुचयः पावकाः अग्निशुचिभ्यः ऋतेन सत्यमृत-साय आयन् शुचिजन्मानः शुचयः पावकाः अग्निः शुचिव्रततमः शुचिविप्रः शुचिः कविः सुचीरो वत आहुतः उदग्रेशुदयस्तवशुक्रा भ्राजंत ईरते तव ज्योतीष्यर्चय" इति पात्रस्थमुदकं पूजयेत्। "एतोन्विंद्रस्तवाम शुद्धं शुद्धेन सम्ना शुद्धैरुक्मैर्वा वृद्धां संशुद्ध आशीर्वान् भवंतु इन्द्रः शुद्धो न आगहि शुद्धः शुद्धाभि भूतिभिः शुद्धोरयिं निधारय शुद्धो ममद्धि सोम्यः इन्द्रः शुद्धो हि नोरपि

शुद्धो रत्नानिदाशुषे शुद्धोमृत्नाणि जिघ्नसे शुद्धोबाजंशिषासती"
इत्यनेन मन्त्रेण तज्जलमालोड्य समुद्र ज्येष्ठा इत्यादिभिः मन्त्रै-
र्यजमानमभिषिंचेयुः। तत्र मंत्राः "समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य
मध्यात्पुनानायंत्यनिविशमानाः इन्द्रो या वज्री वृषभोररादता
आपो देवीरिहमामवंतु, या आपो दिव्या उतवास्रतवंतिखनि-
त्रिमा उतवायाः स्वयंजाः समुद्रार्थायाः शुचयः पोवकास्ता
आोपोदेवीरिहमामश्वंतु, यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्या-
नृते अवपश्यं जनानां, मधुश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता आपो-
देवीरिह मामवंतु, यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वेदेवा
यासूर्जं मदंति, वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्मा आपो देवी-
रिह मामवंतु, त्रायंतामिह देवास्त्रायतां मरुतां गणः त्रायंतां
विश्वाभूतानि यथा यमरपा असत् आप इद्वा उभेषजी रापो
अमीवचातनीः, आपः सर्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वंतु भेषजं,
हस्ताभ्यां दश शाखाभ्यां जिव्हा वाचः पुरोगवी, अनामयि-
लुभ्यां त्वाताभ्यां त्वोप, स्पृशामसि, इमा आपः शिवतमा
इमाः सर्वस्य भेषजीः, इमा राष्ट्रस्य वर्धनीरिमाराष्ट्रभृतोमृताः,
याभिरिंद्रमभ्यषिंचत्प्रजापतिः सोमं राजानं वरुणं यमं मनुं,
ताभिरद्भिरभिषिंचामि त्वामहं राज्ञां त्वमधिराजो भवेह
महान्तं त्वामहीनां संम्राजं चर्षणीनां देवीजनित्र्यजीजनद्भद्रा-
जनित्र्यजीजनत्, देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां
पूष्णो हस्ताभ्यामग्नेस्तेजसा सूर्यस्य वर्चसेन्द्रसेन्द्रियेणाभिषिं-
चामि, बलाय श्रियै यशसेन्नाद्याय, येन देवा पवित्रेण आत्मानं
पुनते सदा तेन सहस्रधारेण पावमान्यः पुनंतु मा प्राजापत्यं
पवित्रं शतोधघाहिरण्मयं तेन ब्रह्मविदो वयं यूतं ब्रह्म पुनी-
महे इन्द्रः सुनीती सह मा पुनातु सोमः स्वस्त्या वरुणः समी-

च्या यमो राजा प्रमृणाभिः पुनातु मां जातवेदा मूर्जयंत्यां पुनातु देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां अश्विन्योर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिंचामि देवस्य त्वा सरस्वत्यैर्भैषज्येन वीर्यापान्नाद्ये नाभिषिंचामि देवस्य त्वा इन्द्रसेन्द्रियेण श्रियै यशसे वलायाभिषिंचामि तच्छंयोरावृणीमहे गातुं यज्ञाय गातुं यज्ञपतये दैवी स्वस्तिरस्तु न स्वस्तिर्मानुषेभ्यः उर्द्धं जिगातु भेषजं शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

अथ यजमानः स्वयं प्राच्यां दिशि "देवा ऋत्विजो मार्जयंतां," दक्षिणास्यां दिशि "माता पितरो मार्जयंतां," प्रतीच्यां दिशि 'यज्ञः संवत्सरो यज्ञपतिर्मार्जयंतां,' उदीच्यां दिशि 'आप ओषधयो वनस्पतयो मार्जयंतां,' उर्द्ध्वायां दिशि 'यज्ञः संवत्सरो यज्ञपतिर्मार्जयंतां,' इत्युत्षिच्य एतेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो लक्ष्मीनारायणस्वरूपेभ्यो श्रीशेषावतारवलदेवाभिषेके समागतेभ्यः मनोदिष्टां युगलमूर्त्तिसंकर्षणाभिषेकद्वारेणोक्तां स्वस्तिवाचनदक्षिणां दातुमहमुत्सृजे इति संकल्प्य दक्षिणां दद्यात् ।

वास्तोष्यते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशोऽनमीवो भवानः यत्त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे, वास्तोष्यते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरेंद्रो, अजरा सस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रति नो च जुषस्व, वास्तोष्यते शग्मयासंसदाते सक्षीमहिरण्वया गातुमत्या पाहि क्षेम उत योगे वरन्नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः, अमीवहा वास्तोष्यते विश्वारूपाण्याविशन्, सखासुशेव, एधि नः शन्नोभव शिव ॐ शिवं, वास्तु पुरुषाय नमः, आवाहन-मासनं-पाद्यं

नैवेद्य समर्पयामि, श्रीशेषावतारयुगलवलदेवजन्मोत्सवप्रभूतान् षोडशोपचारान् विविधान् परिकल्पयामि ।
षोडशोपचारास्तु—

आवाहनासने पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ।
स्नानं वस्त्रोपवीते च गन्धमाल्यानि च क्रमात् ।
धूपं दीपं च नैवेद्यं नमस्कारं प्रदक्षिणम् ।
षोडशोद्वासनं कुर्य्यादेषः नारायणो विधिरिति ॥

उत्तरे कर्म्मण्यविघ्नमस्तु एभिर्मन्त्रैः श्रीयुगलवलदेवमन्दिरे वास्तुपूजां पूर्वमेव विधाय तैरेव पुण्याहजलं मण्डपमध्ये मन्दिरे श्रीयुगलपरिचारमत्कुलोद्भवगृहमध्ये च प्रोक्षयेत् । "श्रिये जात श्रिय आनिरियाय श्रियं वयोजरितृभ्यो दधाति, श्रियं वसाना अमृतत्वमायन्भवंति सत्यासमिथामितद्रौ, श्रिय एवैनं तच्छ्रिया मादधाति संततमृ वा वषट् कृत्यं संतत्यै संधीयते प्रजया पशुभिर्य एवं वेद, स प्रससभां मे गोपाय ये च सभ्याः सभासदः तानिद्रायावतः कुरु सर्वमायुरुपासतां हे अबुध्नियमंत्रं मे गोपाय, यमृषयस्त्रयि विदाविदुः, ऋचः सामानि यजूंषि साहि श्रीरमृता सतां" अनेनारात्रिकं कुर्यात् । इति श्रीशेषावतारश्रीयुगलमूर्त्तिसंकर्षणवलदेवस्य प्रथमजन्माभिषेकप्रथमप्रतिष्ठायां पुण्याहवाचनपूर्वमेव प्रथमः क्रमः विधिः ॥
पाद्मे पातालखण्डे—

ऋग्वेदमंत्रपद्धत्या वलदेवाभिषेचनम् ।
युगलप्रतिमास्थस्य ललिताग्रामवासिनः ।
साम्रवेदस्य मंत्रैस्तु श्रीकृष्णस्याभिषेचनम् ।
राधायास्तु यजुर्वेदमंत्रैस्त्वप्यभिषेचनम् ।
सामवेदोद्भवैर्मन्त्रैः ललितामभियेचयेत् ।
ऋग्वेदप्रभवैर्मन्त्रैः श्रीरामस्याभिषेचनम् ।

यजुर्वेदप्रभवैस्तु मंत्रैः प्रोक्तैर्मनीषिभिः।
पंचांगस्याभिषेकं च कुर्य्यात्सूर्य्यादिवासरे।
अस्मात्कारणतः प्रोक्ता भिन्ना भिन्ना च पद्धतिः।

प्रतापमार्त्तण्डे—

पद्धतेर्व्यभिचारेण प्रतीपमभिषेचनम्।
पतन्ति नरके घोरे कर्त्ता मूर्खो यदा भवेत्।
प्रतिमा विघ्नतां याति तेजसा सहितस्तदा।
दरिद्रेण सदा पूर्णा मूर्त्तिः शून्ये च मन्दिरे।
व्रजप्रदीपिकां दृष्ट्वा पूर्वार्द्धं षट् सहस्रकम्।
इति सर्वेषामभिषेकनिषेधः ॥

अथ द्वितीयक्रमस्यारम्भः—

एकस्थाने श्वेतवस्त्रोपरि तन्दूलान् निधाय नवग्रहभागान् सप्तविंशतिकान् कृत्वा तत्रैव मन्दिरस्थाने। प्रतिमान्युक्तानि। विष्णुयामले—

ताम्रेण कारयेद्भानुं रजतेन निशाकरम्।
कुजज्ञजीवरूपाणि सुबर्णेन प्रकल्पयेत्॥
रजतेन ततः शुक्रं कृष्णलोहेन सूर्य्यजम्।
नागेन कारयेद्राहुं केतुं कांस्येन कारयेत्।
स्वांगुलेनोच्छ्रिताः सर्वे ग्रहकार्या विधानतः।
अथवा स्वर्णमात्रेण कारयेत्प्रतिमां सुधीः।
तदर्द्धं न तदर्द्धेन यथा-वित्तानुसारतः॥
अथवा स्वर्णकैः कार्य्याः ग्रहाः स्वर्णादिधातुभिः॥

पुनस्त्रिराचम्य प्राणानायम्य पूर्ववद्देशकालौ संकीर्त्य श्रीशेषावतारबलदेवस्याभिषेके कर्मकर्त्तुमादौ आदित्यादिनवग्रहाणामधिदेवताप्रत्यधिदेवतानामनुकूलसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरयुगलमूर्त्तिसंकर्षणप्रीत्यर्थं मन्दिरप्रतिष्ठायज्ञप्रथमप्रतिष्ठायां जन्मोत्सवे करिष्ये इति संकल्प्य सुवर्णादिनिर्म्मितप्रतिमाः श्वेत-

वस्त्रमथ जातीपुष्पमाणिक्याभरणगुग्गुल-धूप-गोघृतौदननैवेद्यादीन्यनुकल्प्य संभारान्संभृत्याचार्य्यादीन् वृणुयात्। तत्रायं क्रमः—सर्वेषां ग्रहाणां प्रत्येकं दशाहुतिपक्षे आचार्य्यमेकमेव वृणुयात्। तदूर्द्ध्वं पंचाशदाहुतिपर्य्यन्तं चत्वार ऋत्विजस्तदूर्द्ध्वं शताहुतिपर्यन्तमष्टौ नवममाचार्य्यं वा वृणुयात् तदूर्द्ध्वं यथायोग्यं वृणुयात्। तत्र विधिज्ञं स्वशाखाद्यमाचरवंतं आचार्य्यमस्मिन् मन्दिरे मुखे "आचार्य्यत्वेन त्वामहं वृणे" इति पाणिना पाणिमुपस्पृश्य वृणुयात्। अन्यानपि ऋत्विक्त्वेन त्वामहं वृणे इत्यादिनोपवृतोऽस्मीति करिष्यामीति पृथक् पृथक् श्रावयेयुः। ततो यजमानस्तान् विधिवद्यथाशक्तिवस्त्रादिभिरस्यर्चयेत्। ततः आचार्य्यः कर्मसंकल्पः मन्दिरादुत्तरभागे ऐशाने वा कृतां चतुर्दिक्षु हस्ताभ्यां मात्रां वरां चतुस्त्रिद्व्यंगुलिप्रमाणत्रिभूमिकां वेदिकां प्राप्य तस्यां च शुक्लैस्तंदुलैः सकर्णिकमष्टदलमम्बुजमुल्लिख्य कर्णिकायां दलेषु च वर्त्तुलादिमन्दिरपीठानि कुर्य्यात्। तत्रायं क्रमः—मध्ये रक्ताक्षतैर्वर्त्तुलपीठे आग्नेयदले शुक्लाक्षतैश्चतुरस्रपीठं दक्षिणदले रक्ताक्षतैस्त्रिकोणपीठं ईशानदले हरिताक्षतैः पंचकोणपीठं नैऋतदले कृष्णाक्षतैस्तूर्य्याकारपीठं वायव्यकोणे दले चित्राक्षतैर्ध्वजाकारपीठं कृत्वा कलशस्थापनं कुर्य्यात्। तत्रायं क्रमः—आकलशेस्वित्यस्य मंत्रस्य गाध्यापुत्रो विश्वामित्र ऋषिः पवनसोमो देवता गायत्री छंदः "आकलशेषु धावति वित्रे परिषिच्यसे उत्थैर्यज्ञेषु वर्द्धते" अनेन रंगवल्लिकया रंजितपद्मोपरि घृतधान्यपाठे नवमवृणुतैजसं मृन्मयं वा अनुलिप्तमलंकृतं शुभमभिषेककुम्भं निधाय इमं मे गंगे इत्यस्य मंत्रस्य सिंधुक्षित् प्रय्यमेधा नदो श्रुतिर्देवता जगती छंदः "इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शतुद्रिस्तोमं सचताप रुष्णिया असिक्नया मरुद्वृ-

धेवितस्तयार्जीकीयेश्रृणु ह्यासुषो मया सितासितेसिरते यत्र संगथे तत्रात्प्लुतासो दिवमुत्पततियेवै तन्वांद्रवि सृजंति धोरास्ते जनासोत्र्यमृतत्वं भजसे" इत्यनेन मंत्रेण घटं जलं पूरयित्वा नवसूत्रेण वस्त्रयुग्मेन वावेष्ट्य हयगजवल्मीकसंगहृदमोष्ट्राजद्वारचतुष्पदस्थानानां मृदः गृहीत्वां "उद्धृत्याशिवराहेन कृष्णेन शतवाहुना। मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतं" अनेन मंत्रेण कुम्भेषु निक्षिप्य "रुवति भीम" इत्यस्य मंत्रस्य विश्वामित्रोऽर्षि रेणुपवमाने सोमे देवता जगती छंदः कलशे त्वग्प्रक्षेपे विनियोगः ओं रुवति भीमो वृषभस्तविष्यया शृंगे शिशानो हरिणी विचक्षणः आयोनिं सोमः सुकृतं निषीदति गव्योत्वग्भवति निर्णिगव्ययी" अनेन मंत्रेण अश्वत्थ-न्यग्रोध-प्लक्ष-जम्बू-चूत पंचवृक्षत्वचो निक्षिपेत्। प्रवोप यज्ञष्वित्यस्य मंत्रस्य वशिष्ठ ऋषिर्विश्वेदेवा देवतात्रिष्टुप् छंदः "ओं प्रवो यज्ञेषु देवयंतो अर्चंद्यावा नमोभिः पृथिवी इषध्यै येषां ब्रह्माण्यसमानि विप्रा विश्वग्वियंतिवनिनोन शाखाः" अनेन मंत्रेण तेषां पल्लवानि निक्षिप्य च, आप्याय स्वेत्यस्य मंत्रस्य राहुगणो गौतमो ऋषिः सोमो देवता गायत्री छंदः "आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोमष्ण्यं भवा वाजस्य संगथे" अनेन मंत्रेण गोक्षीरं निक्षिप्य दधिक्राव्ण इत्यस्य मंत्रस्य गौतमपुत्रो बामदेवो ऋषिः दधिक्राव्णो देवता अनुष्टुप् छंदः "ओं दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः सुरभिनो मुखाकरत् प्रण आयूंषि तारिषत्" अनेन मन्त्रेण दधि निक्षिप्य "शुक्रमग्नि ज्योतिरसि तेजोसि देवो वा सवितो पुनातु छिद्रेण पवित्रेण वसोः सूर्यस्य रश्मिभिः" इत्यनेन घृतं निःक्षिप्य गंधद्वारेत्यस्य मंत्रस्यानंद ऋषिः श्रीर्देवता अनुष्टुप् छंदः "गंधद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करिषिणीं। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपव्हये श्रियम्" इत्यनेन मंत्रेण गंधं

निक्षिप्य गायत्र्या मंत्रेण गोमयं गोमूत्रं निक्षिप्य ततो सहिरत्नानोत्यस्य मंत्रस्य शावाश्व ऋषिः सविता देवता गायत्री छंदः "ओं सहिरत्नानि दाशुषे सुवाति सविता भगः तं भागं चित्रमीमहे" अनेन मंत्रेण पंचरत्नानि निःक्षियेत्। याऽओषधीरित्यस्य मंत्रस्याथर्वणो ऋषिः भिषगोषधयो देवता अनुष्टुप् छंदः ओं याऽओषधीः पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा मनै नुव भ्रूणामहं शतं धामानि सप्तच" अनेन मंत्रेण सर्व्वौषधिर्महौषधिर्निःक्षिप्य तदभावे सुवर्णं वा "गंधद्वारा"मिति गंधं च पुनः निःक्षिप्य ततः सर्वे समुद्राः घटमेवावहयेत्। इमं मे गंगे इति आपोहिष्ठेति सूक्तस्य सिंधुद्वीपर्षिरापो देवता गायत्री छंदः पंचमी वर्द्धमाना सप्तमो प्रतिष्ठा अन्ते द्वे अनुष्टुभौ न हिते क्षत्रमित्याद्येकत्रिंशदृचा मन्त्रेण मार्गर्त्तिः शुनः शेफो वरुण आद्या दश त्रिष्टुभः शिष्टा गायत्र्यः छंदाः नहिते क्षत्रं न सहोनमन्युं वयश्च नामी पतयंत आयुः नेया आयो अनिमिषं चरंतीनंमेवा तस्य प्रमिनत्यभ्वं, स्वादिष्ठयेति सूक्तस्य मधुछंदाः ऋषिः पवमान सोमो देवता गायत्री छंदः "ओं स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोमधारया इंद्राय पातवे सुतः" एभिर्मन्त्ररुक्तानामतिमंत्रणं कुर्य्यात्। ततः गृहवेदिकापीठेषु यथास्थानं यथामुखी गृहप्रतिमाः स्थापयेत्। तद्भावे पुष्पाक्षतादिष्वावाहयेत्। तत्र आवाहनप्रकारः व्यस्तसमस्तव्याहृतोनां ऋचां मन्त्राणां अत्रि-भृगु-भरद्वाज-प्रतायतयश्चत्वार ऋषयश्चतुर्णां अग्निर्वायुसूर्य्यप्रजापतयो देवताश्चत्वारः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् वृहत्यश्चत्वारः छंदांसि ओं भूरादित्यमावाहयामि ओं स्वरादित्यमावाहयामि ओं भूर्भुवः स्वरादित्यमावाहयामि। अथ क्रमेण सूर्य्यादीनां नवग्रहाणामधिदेवनासहितानां मंत्राः वक्ष्यंते। आकृष्णेत्यस्य मंत्रस्य हिरण्यस्तूयं ऋषिः सविता देवता त्रिष्टुप् छंदः

"ओं आकृष्णे न रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मृत्यं च हिरण्मयेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन्" इत्युक्त्वा भगवन्नादित्यग्रहकाश्यपगोत्र कलिंगदेशेश्वर जपापुष्पसमांगद्युते द्विभुज पद्मोभयहस्त सिन्दूरवर्णाम्बरमाल्यानुलेपन ज्वलन्माणिक्यखचितसर्वांगाभरण भास्कर तेजोनिधे त्रिलोकप्रकाश त्रिदेवतामयमूर्त्ते नमस्ते सन्नद्धारुणध्वजपताकोपशोभितेन सप्ताश्वरथवाहनेन मेरुं प्रदक्षिणीं कुर्वंन्नागच्छाग्निरुद्राभ्यां अधिदेवता-प्रत्यधिदेवताभ्यां सह यत्प्रकर्णिकायां प्रतिमां प्राङ्मुखीं वर्त्तुलपीठे अधितिष्ठ पूजार्थं सन्मुखो भव त्वामावाहयामि इत्यादित्यमावाहयेत् । ततस्तस्य सूर्य्यस्य दक्षिणपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं सूर्य्यस्याधिदेवतामग्निमावाहयामि । अग्निंदूतमित्यस्य मंत्रस्य काण्वोमेधातिथि ऋषिरग्निर्देवता गायत्री छंदः "ओं अग्निंदूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसं अस्य यज्ञस्य सुक्रतुं" इत्युक्त्वा पिंगभ्रूश्मश्रूकेशं पिंगाक्षं त्रिनयनं अरुणवर्णं छागहस्तं साक्षसूत्रं सप्तार्चिषं शक्तिधरं वरदहस्तमादित्याधिदेवतामग्निमावाहयामि । तद्वामपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं त्र्यंवकं सूर्य्यस्य प्रत्यधिदेवतामावाहयामि त्र्यंवकमित्यस्य मंत्रस्य वशिष्ठ ऋषिः रुद्रो देवता अनुष्टुप् छंदः 'ओं त्र्यंवकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्द्धनं उर्वारुकमिव वंधनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्" इत्युक्त्वा त्रिलोचनं पंचवक्त्रं वृषारुढं कपालशूलखट्वांगधारिणं चंद्रमौलिं सदाशिवमादित्यप्रत्यधिदेवतामावाहयामि । तद्दक्षिणपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं 'सोममावाहयामि आप्यायस्वेति मंत्रस्य गौतमऋषिः सोमो देवता गायत्री छंदः "ओं आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यं भवा वाजस्य संगथे" इत्युक्त्वा भगवन्सोम द्विभुजाधिपते सुधामयशरीरात्रिगोत्र यमुनादेशेश्वर गोक्षीरधवलांगकांते

द्विभुज गदावरदानांकितकर शुक्लाम्बर माल्यानुलेपनसर्वांग मौक्तिकमुक्ताभरणरमणीय समस्तलोकव्यापक देवतास्वाद्य-मूर्ते नमस्ते सन्नद्धधवलपताकोपशोभितेन दश श्वेताश्वरथेन मेरुं प्रदात्रिणोकुर्व्वन्नागच्छाद्भिरुमया सह पद्माग्नेयदलमध्ये प्राङ्मुखीं प्रतिमां चतुरस्रपीठेऽधितिष्ठ पूजार्थं त्वामावाहयामि, तस्य चंद्रमसः दक्षिणपार्श्वे व्यस्तसमस्तव्याहृत्युच्चारणानन्तरं अप्सु मे इत्यस्य मंत्रस्य सिंधुद्वीपर्षिरापो देवता गायत्री छंदः "ओं अप्सु मे सोमो अब्रवीदंत विश्वानि भेषजा अग्निं च विश्वशंभुवमापश्च विश्वभेषजी:" इत्युक्त्वा स्त्रीरूपधारिणी: श्वेतवर्णमकरवाहनाः पाशकलशधारिणीर्मुक्ताभरणभूषिताः सोमाधिदेवता अप आवहयामि, तद्वामपार्श्वे व्याहृत्यु-च्चारणानन्तरं "गौरीमिमाय"त्यस्य मंत्रस्य दीर्घतमा ऋषिः उमा देवता जगती छंदः "ओं गौरीर्मिमाय सलिलानितक्ष-त्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी अष्टापदी नवपदी वभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन्" इत्युक्त्वाक्षसूत्रकमलदर्पणकमण्डलु-धारिणीं त्रिदशपूजितां गौरीमावाहयामि । दक्षिणदले व्याहृत्यु-च्चारणानन्तरं अग्निमूर्द्धेत्यस्य मंत्रस्य विराट् ऋषिरंगारको देवता गायत्री छंदः "ओं अग्निमूर्द्धादिवः कुकुत्पतिः पृथिव्या अयं अपाꣳरेताꣳसिजिन्वति" इत्युक्त्वा भगवन्नंगारकाग्न्या-कृते भरद्वाजगोत्रावंतिदेशेश्वर ज्वालापुंजोपमांगद्युते चतुर्भुज शक्ति-शूल-गदा-खड्ग-धारिन् रक्ताम्बर मालानुलेपन प्रवालाभरणभूषितसर्वांग दुर्धरालोकदीप्ते नमस्ते रक्तध्वज-पताकोपशोभितेन रक्तमेषरथवाहनेन मेरुं प्रदक्षिणीकुर्व्व-न्नागच्छ भूमिस्कंदाभ्यां सह पद्मदक्षिणदलमध्ये प्रतिमां त्रिकोणपीठेऽधितिष्ठ पूजार्थं त्वामावाहयामि, तद्दक्षिणपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं स्योना पृथिवी रित्यस्य मंत्रस्य

मेधातिथि ऋषि: भूमिर्देवता गायत्री छंद: "ओं स्योना पृथिवि भवानृक्षरानिवेशनी यच्छान: शर्म संप्रथ:" इत्युक्त्वा शुक्लवर्णां दिव्यमहाभरणभूषितां चतुर्भुजां सौम्यवपुषं चंडांशुसदृशाम्बरां रत्नपात्रशस्यपात्रौषधिपात्र—पद्मोपेतकरां चतुर्दिगग्रपुच्छगतां अंगारकाधिदेवतां भूमिमावाहयामि, तद्वामपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं 'कुमारश्वित्पितरमित्यस्य मंत्रस्य गृत्समद ऋषि: स्कन्दो देवता स्त्रिष्टुप् छंद: "ओं कुमारश्वित्पितरं वंदमानं प्रति नानामरुद्रोपयंतं भूरेर्दातारं सत्पतिं गृणीषेस्तुतस्त्वं भेषजारास्य स्मे" त्युक्त्वा षण्मुखं शिखण्डकविभूषणं दिव्यरक्ताम्बरधरं मयूरवाहनं कुक्कुटघटापताकाशक्त्युपेतं चतुर्भुजमंगारकस्य प्रत्यधिदेवं स्कंदं स्वामिकार्त्तिकमावाहयामि ।

तत: प्रागुत्तरदले व्याहृत्युच्चारणानन्तरं उद्बुध्यध्वमित्यस्य मंत्रस्य बुधो ऋषि: सौम्यो बुधो देवता त्रिष्टुप् छंद: "ओं उद्बुध्यध्वंसमनस: सखाय: समाग्निमिध्वं वहव: सनीला: दधिक्रामग्निमुषसं च देवीमिन्द्रावतो वसेनिह्वये व:" इत्युक्त्वा भगवन्सौम्थ सौम्याकृते सर्वज्ञानमयात्रिगोत्र मगधदेशेश्वर कुंकुमवर्णांगद्युते चतुर्भुज खड्गखेटगदावरदानांकित पीताम्बर माल्यानुलेपन मरकताभरणालंकृतसर्वांग विबुधपते नमस्ते सन्नद्धपीतध्वजपताकोपशोभितेन चतु: सिंहरथवाहनेन मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वन्नागच्छ विष्णुपुरुषाभ्यां अधिदेवताप्रत्यधिदेवताभ्यां सह पद्मैशानदलमध्ये प्रतिमामुदङ्मुखो वाणाकारपीठेऽधितिष्ठ पूजार्थं त्वामावाहयामि । तद्दक्षिणोत्तरपार्श्वयो: पूर्ववद्व्याहृत्युच्चारणानन्तरं इदं विष्णुर्विचक्रमे इत्यस्य मंत्रस्य मेधातिथि ऋषिर्विष्णुदेवता गायत्री छन्द: बुधस्याधिदेवतावाहने विनियोग: "ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा

निदधे पदं समूहमस्य पांशुसुरे स्वाहा, सहस्रशीर्षत्यस्य मंत्रस्य नारायण ऋषिः पुरुषो देवताऽनुष्टुप् छंदः "ओं सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् स भूमिं विश्वतोवृत्वाऽत्यतिष्ठ-द्दशांगुलं" इमौ मंत्राबुच्चार्य्य कौमुदकी—पद्म–शंख-चक्रोपेतं चतुर्भुजं सौम्याधिदेवतां विष्णुं वा सौम्यप्रत्यधिदेवतां पुरुषमा-वाहयामि ।

उत्तरदले व्याहृत्युच्चारणानन्तरं वृहस्पते रित्यस्य मंत्रस्य गृत्समदो ऋषिः बृहस्पतिर्देवता त्रिष्टुप् छंदः "ओं वृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु यद्दीदयच्छवसऋत प्रजा ततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रं" इदमुक्त्वा भगवन्वृहस्पते समस्तदेवाचार्यांगिरसः गोत्रोत्पन्न सिंधुदेशेश्वर दीप्तसुवर्णसद्द-शांग चतुर्भुज दण्डकमण्डलु-अक्ष-सूत्र वरदानांकित पीताम्वर माल्यानुलेपन पुष्परागमयाभरण रमणीय समस्तविद्याधिपते नमस्ते सन्नद्धपीतध्वजपताकोपशोभितेन पीताश्वरथेन मेरुं प्रदक्षिणीकुर्व्वन्नागच्छेन्द्रब्रह्माभ्यां द्वाभ्यां सह पद्मोत्तरदलमध्ये प्रतिमामुदङ्मुखीं दीर्घचतुरस्रपीठेऽधितिष्ठ पूजार्थं त्वामा-वाहयामि ।

तद्दक्षिणपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं इन्द्रश्रेष्ठानि इत्यस्य मंत्रस्य गृत्समद ऋषिः इन्द्रो देवता त्रिष्टुप् छन्दः "ओं इन्द्रश्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नां" इत्युक्त्वा चतुर्दन्तगजारूढं वज्रांकुशधरं शचीपतिं दिव्यनाना-भरणभूषितं वृहस्पत्यधिदेवतां इन्द्रमावाहयामि ।

तद्वामपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं ब्रह्मणस्यत इत्यस्य मंत्र-स्य विश्वामित्र ऋषिः ब्रह्मा देवता त्रिष्टुप् छंदः "ओं ब्रह्म-णस्य तत्वमस्ययंता सूक्तस्य ववोधितनयंतजिन्वा विश्ववबोधि-

तनयं तजित्वा विश्वं तद्भद्रं यदवंति देवा वृहद्वदेम विदथे सुवोरा: व्रह्मणाते व्रह्मयुजा युनज्मि हरी सखाया सधमाद आशू स्थिरं रथं सुखमिन्द्राधितिष्ठ प्रजानन्विद्वाँ उपयाहि सोमं" इत्युक्त्वा पद्मासनस्थं जटिलं चतुर्मुखमक्षमालास्रुव-पुस्तक – कमण्डलुधारिणं कृष्णाजिनवाससं पार्श्वस्थितहंसं वृहस्पति प्रत्यधिदवं ब्रह्माणमावाहयामि ।

प्राग्दले पूर्ववद्व्याहृत्युच्चारणानन्तरं शुक्रं ते अन्यदित्यस्य मंत्रस्य भरद्वाज ऋषि: शुक्रो देवता स्त्रिष्टुप् छंद: "शुक्रं ते अन्यद्यजतंते अन्यद्विषुरूपे अहनी द्योरिवासि विश्वाहि माया अवसि स्वधावो भद्रा ते पूषन्निहरातिरस्तु" इत्युक्त्वा भगवन्भार्गव समस्तदैत्यगुरो भर्गिवगोत्र भोजकटदेशेश्वर रजतोज्वलांगद्युते चतुर्भुज दण्डकमण्डलु–अक्ष– सूत्र वरदानांकित शुक्लाम्वर माल्यानुलेपन वज्राभरणभूषितांग समस्तनीति-शास्त्रनिपुणमते नमस्ते शुक्लध्वजापताकोपशोभितेन शुक्लाश्वसहितेन रथेन मेरुं प्रदक्षिणीकुर्व्वन्नागच्छेन्द्राणींद्राभ्यां सह पद्मपूर्वदलमध्ये प्रतिमां प्राङ्मुखीं पंचकोणपोठेऽधितिष्ठ पूजार्थं त्वामावाहयामि । तद्दक्षिणपार्श्वे पूर्ववत् व्याहृत्युच्चारणानन्तरं इन्द्राणीत्यस्य मंत्रस्य वृषाकपि ऋषिरिन्द्राणी देवता पंक्ती छंद: "ओं इंद्राणी मासु नारिषु सुभगामहमश्रवं न ह्यस्या अपरं चनरजसामरते पतिर्विश्वस्मादिंद्र उत्तर:" इत्युक्त्वा संतानमञ्जरीवरदानधरद्विभुजां शुक्राधिदेवतामिन्द्राणीमावाहयामि ।

तद्वामपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं इंद्रवो इत्यस्य मंत्रस्य वृषाकपि ऋषि: इंद्रो देवता पंक्ती छन्द: "ओं इन्द्रंवो नर: संख्यापसेषुर्महोयंत: सुमतये चकान: महोरिदाता वज्रहस्तां अस्तमहामुरण्यमवसे मजध्वं" इत्युक्त्वा चतुर्भुजं गजारूढ

वज्राकुंशधरं प्राचीपतिं नानाभरणभूषितं भार्गवस्य प्रत्यधिदैवं इन्द्रमावाहयामि ॥

पश्चिमदले व्याहृत्युच्चारणानन्तरं शमग्निरग्निरित्यस्य मंत्रस्य दुरिपढ़ि ऋषिः शनैश्वरो देवता उष्णिक् छन्दः "शमग्निरग्निभिः करच्छंनस्तपतु सूर्यः शंवातो वात्वरपा अपस्रिधः" इत्युक्त्वा भगवन् शनैश्चर भास्करतनय काश्यपगोत्र सौराष्ट्रदेशेश्वर कज्जलभिन्नांग—कान्ते चतुर्भुज चापतूणीरकृपाणाभयांकित नीलाम्बर माल्यानुलेपन नीलरत्नभूषणालंकृत—सर्वांग समस्तभूषणालंकृत—सर्वांग समस्तभुवनभीषणामर्षमूर्त्ते नमस्तेसन्नद्धनीलध्वजपताकोपशोभितेन नीलगृध्ररथवाहनेने मेरुं प्रदक्षिणीकुर्व्वन्नागच्छ प्रजापतियमाभ्यां सह पद्मपश्चिमदलमध्ये प्रतिमां प्राङ्मुखीं चापाकारपीठेऽधितिष्ठ पूजार्थं त्वामावाहयामि ॥

तद्दक्षिणपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं प्रजापते इत्यस्य मंत्रस्य हिरण्यगर्भ ऋषिः प्रजापतिर्देवतास्त्रिष्टुप् छंदः "ओं प्रजापते नत्वदेतान्यन्योविश्वाजातानि परिता वभूव यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्यामपतयोरयीणां" इत्युक्त्वा यज्ञोपवीतिनं हंसस्थमेकवस्त्रमक्षमालास्रक पुस्तककमण्डलुसहितचतुर्भुजं शनैश्चराधिदैवं प्रजापतिमावाहयामि ॥

तद्वामपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं यमाय सोमेत्यस्य मंत्रस्य यम ऋषिः सोमो देवताऽनुष्टुप् छंदः "यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः यमंह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरं कृतः" इत्युक्त्वा ईषत्पीनं दण्डहस्तं रक्तसदृशपाशधरं कृष्णवर्णं महिषारूढं सर्वाभरणभूषितं शनैश्चरस्य प्रत्यधिदेवतायममावाहयामि ॥

प्राग्दक्षिणदले व्याहृत्युच्चारणानन्तरं कयान इत्यस्य मंत्रस्य

वामदेव ऋषि: राहुर्देवता गायत्री छंद: "ओं कयानश्चित्र आभूव दूती सदा वृध: सखा कया सचिष्ठया वृता" इत्युक्त्वा भगवन् राहो रविसोमार्द्दन सिंहिकानंदन पैठीनसगोत्र वर्वर-देशेश्वर कालमेघद्युते व्याघ्रवक्त् चतुर्भुज खड्ग-चर्म-शूल-वर-दानांकित कृष्णाम्वर माल्यानुलेपन गोमेदकाभरणभूषित-सर्वांग सौर्यनिधे नमस्ते सन्नद्ध कृष्णध्वजपताकोपशोभितेन रथेन कृष्णसिंहरथवाहनेन मेरुं प्रदक्षिणो—कुर्व्वन्नागच्छ सर्पकालाभ्यां सह पद्मनैऋत्यदलमध्ये प्रतिमां दक्षिणाभिमुखीं सुर्प्पाकारपीठेऽधितिष्ठ पूजार्थं त्वामावाहयामि ॥

तद्दक्षिणपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं आयंगौरित्यस्य मंत्रस्य सर्पराज्ञी: ऋषि: सर्पा देवता गायत्री छंद: "ओं आयं गौ: पृश्नि रक्रमीदसदन्मातरं पुर: पितरं च प्रयान्त्स्व:" इत्युक्त्वा अक्षसूत्रवरान्कुण्डिकारपुच्छयुक्तानेकभोगांस्त्रिभोगान् भीषणान् राह्वधिदेवान्सर्पानावाहयामि ॥

तद्वामपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणान्तरं परंमृत्योरित्यस्य मत्रस्य सकुषिका ऋषि: मृत्युर्देवतास्त्रिष्टुप् छंद "ओं परं मृत्यो-अनुपरे हिपंथांयस्तेस्वइतरो देवयानात् चक्षुष्मते श्रृण्वते ते ब्रवीमिमान: प्रजां रीरिषोमोतवोरान्" इत्युक्त्वा करालवदनं नित्यविभीषणं पाशधरं, केतुमस्य मंत्रस्य मधुछंदा: ऋषि: केतुर्देवता गायत्री छंद: "केतुं कृण्वन्न केतवे पेशो मर्या अपेशसेसमुषद्भिरजा यथा:" इत्युक्त्वा भगवन् केतो कामरूप जैमिनिगोत्र मध्यदेशेश्वर धूम्रवर्णध्वजाकृते द्विभुज गदावर-दानांकित चित्राम्वर माल्यानुलेपन वैडूर्य्यमयाभरणभूषित-सर्वांग चित्रकेतो नमस्ते सन्नद्ध ध्वजपताकोपशोभितेन चित्र-कपोतरथाश्ववाहनेन मेरुं प्रदक्षिणीकुर्व्वन्नागच्छ ब्रह्म-चित्र-गुप्ताभ्यां सह पद्मवायव्यदलमध्ये प्रतिमां दक्षिणाभिमुखीं

ध्वजाकारपीठेऽधितिष्ठ पूजार्थं त्वामावाहयामि ॥
तद्दक्षिणपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं ब्रह्मयज्ञानमित्यस्य मंत्रस्य नकुलो ऋषिः ब्रह्मा देवतास्त्रिष्टुप् छंदः "ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः सुबुध्न्या उपमा अस्यविष्ठाः शतश्च योनिमसतश्च विवः" इत्युक्त्वा पद्मासनस्थं जटिलं चतुर्मुखमक्षमालास्रुवपुस्तककमण्डलुधरं कृष्णाजिनवाससं पार्श्वस्थितहंसं केत्वधिदेवं ब्रह्माणमावाहयामि । तद्वामपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं सचित्रचित्रमित्यस्य मंत्रस्य भरद्वाज ऋषिश्चित्रगुप्तो देवतास्त्रिष्ठुप् छंदः "ओं सचित्रचित्रं चितयतमस्मे चित्रक्षत्रचित्रतमं वयोधां चन्द्रं रयिं पुरुवीरं वृहंतं चंद्रं चंद्राभिर्गृणते युवस्व" इत्युक्त्वा उदीच्यवेषधरं सौम्यवेषधरं सौम्यदर्शनं लेखनीपत्रोपेतद्विभुजं केतुप्रत्यधिदेवताचित्रगुप्तमावाहयामि ॥

इति श्रीशेषावतारयुगलमूर्त्तिसंकर्षणबलदेवप्रथमजन्माभिषेके प्रथमप्रतिष्ठायां सूर्य्यादीनां नवग्रहाणामधिदेवता-प्रत्यधिदेवता-सहितानां आवाहनपूजनं नाम द्वितीयक्रमः ॥

अथ तृतीयक्रमारम्भः—

कर्मसादगुण्यदेवतावाहनं रक्ततन्दुलपीठेषु कुर्य्यात् । तत्रायं क्रमः—शनैश्चरस्य वामप्रदेशे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं आतून इन्द्रेत्यस्य मन्त्रस्य काण्व ऋषिः विनायको देवता गायत्री छंदः आतून इन्द्र क्षुमंतं चित्रं ग्राभंसंगृभाय महाहस्ती दक्षिणेन" इत्युक्त्वा चतुर्भुजं त्रिनयनं गजाननं कालनागयज्ञोपवीतिनं चन्द्रधरं दण्डाक्षमालापरशुमोदकोपेतं विनायकमावाहतामि ॥ तद्दक्षिणपार्श्वे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं जातवेदस्य इत्यस्य मंत्रस्य कश्यपो ऋषिः दुर्गा देवता त्रिष्टुप्

छंद: "ओं जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतोनिदहाति वेद: सन: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेवसिंधु दुरितात्यग्नि:" इत्युक्त्वा शक्तिबाण-शूलखड्गचक्रविवकपालमुकुटोपपेतदश-भुजां सिंहारूढां दुर्गाख्यदैत्यहारिणीं दुर्गामावाहयामि ॥

तद्दक्षिणतो व्याहृत्युच्चारणानन्तरं क्षेत्रस्य पतिनेत्यस्य मंत्रस्य वामदेव ऋषि: क्षेत्रपति त्रिवेणी संकर्षणो देवता अनुष्टुप छंद: ओं क्षेत्रस्य पतिना वयं हि तेनेव जयामसि ग्रामश्वं पोष-यित्न्वासनो मृलातीदृशे, "क्षेत्रस्य पते मधुमंत मूर्मिं धेनुरिवद्वयो अस्मासु धुरच मधुश्च्युतं धृतमिव सुपूत ममृतस्य नः पतयो मृलयंतु मधुपतो ओषधीर्द्यावा आपो मधुमन्नो भवत्वंतरिक्षं क्षेत्रस्य पति मधुमान्नो अस्तिरिष्यंता अन्वेनं चरेम हलिनं युगलं शेषं गंगादित्रिवेणीस्थातव्यं भगो नमस्ते रोहिण्यास्तनयमा-शु मे" इत्युक्त्वा श्यामवर्णं त्रिलोचनमूर्द्धकेशं सुदृष्टं भ्रूकुटिकुटि-लाननं नूपुरालंकृतांघ्रिसर्पमेखलायुतं सर्पांगमतिक्रुद्धं क्षुद्रघ-ण्टिकावद्धगुल्फावलंबिनिनृकरोटीमालाधारिणं उदरकौपीनं चंद्रमौलिं दक्षिणहस्तैः शूलखड्गदुंदुभीन् दधानं वामहस्तैः कपालघंटाचर्मचापान् दधानं भीमं दिग्वाससममितद्युतिं क्षेत्र-पालमावाहयामि ॥

तद्दक्षिणतो व्याहृत्युच्चारणानन्तरं क्राणाशिशुरित्यस्य मंत्रस्या-त्रिऋषि: वायुर्देवता उष्णिक् छंद: "ओं क्राणा शिशुर्महीनां हिन्वन्नृतस्य दीधितिं विश्वा परिप्रिया भुव दधद्विता" इत्युक्त्वा हरिणपृष्ठगतं ध्वजवरदानधारिणं धूम्रवर्णं वायुमावा-हयामि ॥

तद्दक्षिणतो व्याहृत्युच्चारणानन्तर आदित्प्रत्नस्येति मंत्रस्य वत्सो ऋषि: अन्तरिक्षं देवता गायत्री छंद: "ओं आदित्प्र-त्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यंति वासरं परो यदिध्यते दिवा"

इत्युक्त्वा नीलोत्पलाभं नीलाम्बरधारिणं चन्द्रार्कोपेतं द्विभुजमाकाशमावाहयामि ॥ तद्दक्षिणतो व्याहृत्युच्चारणानन्तरं अश्विनावर्त्ति रित्यस्य मंत्रस्य रहूगणो गौतमोत्तम ऋषिः अश्विनीकुमारो देवता उष्णिग् छंदः "ओं अश्विनावर्त्ति रस्मदागोमद्दस्रा हिरण्यवत् अर्वाग्रथंसमनसा नियच्छतं" इत्युक्त्वा ओषधी--पुस्तकोपेतदक्षिणवामहस्तावन्योन्यदेहसंयुक्तदेहावेकस्य दक्षिणपार्श्वे अपरस्य वामपार्श्वे रत्नभाण्डवरशुक्लाम्बरधारिनारीयुग्मोपेतौ देवभिषजावश्विनीकुमारावावाहयामि ॥

इति श्रीशेषावतारसंकर्षणप्रथमजन्माभिषेके प्रथमप्रतिष्ठायां कर्मसाद्गुण्यकर्म्मणः कर्त्तृकानां देवतानां पूजनप्रकारं नाम तृतीयः क्रमः ।

अथ चतुर्थक्रमारम्भः—

ततः क्रतुसंरक्षकानामष्टदिग्पालानामावाहनपूजनादिस्थापनम् । पूर्ववत् तन्दुलपोठेष्वावाहनं कुर्यात् । तत्रायं क्रमः—ततः प्राग्दलाग्रे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं इन्द्रंवइत्यस्य मंत्रस्य मधुच्छन्दा ऋषिः इन्द्रो देवता गायत्री छंद. "ओं इन्द्रंवोनरः सख्याय सेंशुर्महोयंतः सुपतये च कामाः । महोहिदाता वज्रहस्तो अस्ति महामुरण्यमयसे यजध्वं" इत्युक्त्वा स्वर्णवर्णं सहस्राक्षं वज्रपाणिं शचीप्रियमिन्द्रमावाहयामि ॥

आग्नेयदलाग्रे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं अग्निमील इत्यस्य मंत्रस्य मधुछंदा ऋषिः अग्निर्देवता गायत्री छंदः "ओं अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजं होतारं रत्नधातमं" इत्युक्त्वा स्वर्णवर्णं सप्तहस्तं सप्तार्चिषं शक्त्युंजस्त्रुक् स्रवतोमरव्यजनघृतपात्राणि दधानं स्वाहाप्रियं मेषवाहनमग्निमावाहयामि ॥

तद्दक्षिणदलाग्रे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं यमाय सोममित्यस्य मंत्रस्य सोम ऋषिः यमो देवताऽनुष्टुप् छंदः "ओं यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरं कृत" इत्युक्त्वा रक्तवर्णं दंडधरं महिषवाहनं नमिलाप्रियं यममावाहयामि ॥

नैऋत्यदलाग्रे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं मोषुण इत्यस्य मंत्रस्य घोर—ऋषिः कृण्वो देव निऋतिः देवता गायत्री छंदः "ओं मोषुणः सोम मृत्यवे परुद्राः पश्ये मनु सूर्यमुच्चरंतं द्युभिर्हितो जरिमासू नो अस्तु परातरं सुनिऋति जिहीतां" इत्युक्त्वा नीलवर्णं खड्गचर्मधरमूर्द्धकेशं नरवाहनं कालकालिकाप्रियं निऋतिमावाहयामि ॥

पश्चिमदलाग्रे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं उदुत्तमंमुमुग्धिनो विपासं मध्यमं चृत अवाधमानि जोवसे" इत्युक्त्वा रक्तवर्णं नागपाशधरं मकरवाहनं पद्मिनीप्रियं वरुणमावाहयामि ।

वायव्यदलाग्रे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं तव वा इत्यस्य मंत्रस्य आंगिरसो ऋषिः विश्वेदेवा देवता गायत्री छंदः "ओं तववायवृतस्यतेत्वष्टुर्जामातरद्भुत आवांस्या वृणीमहे" इत्युक्त्वा श्यामवर्णं हेमदण्डधरं कृष्णमृगवाहनं जगत्प्राणरूपं मोहिनीप्रियं वायुमावाहयामि ॥

उत्तरदलाग्रे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं त्वं नः सोम विश्वतो रक्षाराजमित्यस्य मंत्रस्य गौतम ऋषिः सोमो देवता गायत्री छंदः "ओं त्वं नः सोम विश्वतो रक्षाराजन्नघायतः नरिषेत्त्वावतः सखा" इत्युक्त्वा स्वर्णवर्णं नीलाम्बरधरं कुंतपाणिमश्ववाहनं चित्रिणीप्रियं कुवेरमावाहयामि ।

ईशानदलाग्रे व्याहृत्युच्चारणानन्तरं "कद्रुद्रायेत्यस्य मंत्रस्य प्रस्कण्वो ऋषिः रुद्रो दवता गायत्री छंदः "ओं कद्रुद्राय प्रचे-

तस्यै मीह्लष्टमायतव्यसे वोचेमसंतमं हृदे, पंथानो अदितिः करत्पश्वे नृभ्यो यथा गवे यथा तोकाय रुद्रियं यथ नो मित्रो वरुणो यथा रुद्रश्चिकेतति यथा विश्वे संजोषगः गाथं पतिं मेधपतिं रुद्रं जलाशभेषजं तच्छंयो सुम्नमीमहेयः शुक्रे इव सूर्य्यो हिरिण्यमिव रोचते श्रेष्ठो देवानां वसुः" इत्युक्त्वा शुद्धस्फटिकवर्णं वरदाभयशूलाक्षसूत्रधरं वृषवाहनं गौरीप्रियमीशानमावाहयामि ।

एवमेकचत्वारिंशद्देवता आवाह्य कलशे वरुणं पूर्वोक्तवदावाह्य नमोंतैश्चतुर्थ्यंतैः स्वस्वनामभिः पूर्वोक्तद्रव्यैः पुष्पसमर्पणांतं गृहदेवतापूजां कृत्वा कर्मसाद्गुण्यदेवताक्रतुसंरक्षकदेवतावाहनं मलयजगंधाक्षतपत्रपुष्पैस्तथैव पूजयेत् ।

इति श्रीशेषावतारयुगलवलदेवाभिषेकप्रथमप्रतिष्ठायां अष्टदिग्पालपूजनं नाम चतुर्थः क्रमः ॥४॥

अथ पंचमक्रमारम्भः—

ततः षोडशमातृकाणं च षट् कृत्तिकानां पूजनम् । ततो पूर्वोच्चारितपुण्यतिथौ श्रावणशुक्लपंचम्यां रविवारहस्तानक्षत्रसंयुक्तायां श्रीयुगलशेषावतारवलदेवाभिषेकोत्सर्गप्रतिष्ठायां प्रथमजन्मन्युत्सवे कर्मणि षोडशमातृकान् च षट् कृत्तिकान्पूजयेदिति संकल्प्य नवग्रहाणां समीपे रक्तवस्त्रं निधाय तस्योपरि तन्दुलस्य षोडशभागान् कृत्वा षोडशमातृकानां भिन्नभागानि कृत्वा ततस्तस्यैव वस्त्रस्योपरि तन्दुलस्य षट् कृतिकानां षट् भागानि कृत्वा तत्रैव षोडशप्रतिमाः षोडशपूंगीफलानि षोडशेष्वक्षतपुंजेषु निधाय तत. षोडशमातृकानां प्रतिष्टां कुर्य्यात् । तदस्तु मित्रेति मंत्रणामन्त्रयेत् । "तदस्तु मित्रा वरुणा तदग्ने शंयोरस्मभ्यमिदमस्तु शस्तं अशीमहि गाधमुतप्रतिष्ठां नमो दिवे वृहते सादनाय गृहावै प्रतिष्ठासूक्तं तत्प्रतिष्ठिततमया-

वाचा शंस्तव्यं तस्माद्यद्यपि दूरैव पशून् लभते गृहाने वै नाना जिगमिषति गृहादि पशूनां प्रतिष्ठा प्रतिष्ठा, 'गौर्यादि मातर इहागच्छत सुप्रतिष्ठिता वरदा भवंत:" तत: प्रणवादिव्याहृतिभिर्नमोऽन्तैर्नामभि: पृथक् पृथक् पूजां कुर्य्यात् ।

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातर: ।
हृष्टि: पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मदेवतया सह ।
शिवा संभूति: संज्ञा च विभूति: प्रीतिरेव च ।
अनसूया क्षमा चैव षडेता: कृत्तिका मता: ॥

तत्रैव स्थाने रक्तवस्त्रोपरि अष्टभूतीनां स्थानान्यष्टानि तन्दुलस्य कुर्यात् ।

ब्रह्मादि: मातरश्चाष्टावणिमाद्यष्टमूर्त्तय: ।
अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा ।
प्राप्ति: प्राकाम्यमीशत्वावशिष्टाश्चाष्ट भूतय: ॥
नवग्रहैश्च सहिता लोकपालादिभि: सह ।
दुर्गाश्रीगणेशादिभि: सहोपचारै: पूजयेत् ॥

तत: वसोर्धारां कुर्य्यात्—

"वसो: पवित्रमसि शतधारं वसो: पवित्रमसि सहस्रधारम्, देवस्त्वा सविता पुनातु वसो पवित्रेण शतधारेण सुप्त्वा" अनेन कुंडलग्नां पंच सप्त वा नातिनीचान् चोच्छ्रिता घृतधारा: कुर्य्यात् । तत: मंत्रान् पठेत् 'रूपं देहि जयं देहि भाग्यं भगवति देहि । पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि मे" इति प्रार्थयेत् । इयं च सर्वथा कर्त्तव्या वृद्धिश्राद्धपूर्वांगत्वेन ।

अकृत्वा मातृयागं तु य: श्राद्धं परिवेषयेत् ।
तस्य क्रोधसमाविष्टा हिंसामिच्छन्ति मातर: ॥

सगणाधिपा: पंचमक्रमे "पूजनीया: प्रयत्नेन पूजिता: पूजयन्ति च" । "पुष्पै: धूपैश्च नैवेद्यै गन्धाद्यैर्भूषणैरपि ।। पूज

थित्वा मातृगणं कुर्य्याच्छ्राद्धत्रयं बुधः"। इति शांतातपमनुकौर्मस्मरणात्। इति श्रीत्रिवेण्यास्तटस्थे श्रीवलदेवाभिषेके मातृकापूजनं नाम पंचमः क्रमः॥

अथ षष्टक्रमः प्रारम्भः अथ होमप्रयोगः–

वेदिकाग्रेऽग्निकुंडं रचयित्वा अनन्तरमाचार्य्यः प्रत्यगग्नेरासीनः प्राणानायम्य पूर्ववत्संकल्प्याग्निमुखप्रकरणोक्तप्रकारेण प्रागुक्तलक्षणे कुंडे स्थण्डिले चोपलेप्याद्यग्निप्रतिष्ठापनांतं कृत्वा ऋत्विग्भिरचारब्धः समिद्वयमादाय पुनर्देशकालौ संकीर्त्य श्रीमन्नारायणाख्यसंप्रदायकवैष्णबपरमभागवतनारायणभट्टशर्माहं त्रिवेण्यास्तटे श्रीवलदेवयुगलमन्दिरे गृहहोमे वा देवतापरिग्रहार्थमन्वाधानं करिष्ये–

अस्मिंजन्वाहिताग्रावित्यादि चक्षुषी आज्येनेत्यंतमुक्त्वा प्रधानदेवमादित्यमधिदेवता आपः प्रत्यधिदेवमग्निं प्रत्यधिदेवं रुद्रमर्कसमिच्चर्व्वाज्यैर्होमयेत् पूर्वोक्तमंत्रैस्तु ततः प्रधानदेवं सोममधिदेवता आपः प्रत्यधिदेवतां गौरीं पलाशसमिच्चर्व्वाज्यैर्होमयेत्। प्रधानदेवमंगारकमधिदेवं स्कांदं खदिरसमिच्चर्व्वाज्यैः जुहुयात्। ततः प्रधानदेवं शुक्रमधिदेवं इन्द्राणीं प्रत्यधिदेवमिन्द्रं उदुंवरसमिच्चर्व्वाज्यैः पूर्वोक्तमन्त्रैस्तु जुहुयात्। ततः प्रधानदेवं शनैश्चरमधिदेवं प्रजापतिं प्रत्यधिदेवं यमं समीसमिच्चर्व्वाज्यैः पूर्वोक्तमंत्रैस्तु जुहुयात्। प्रधानदेवं यमं राहुमधिदेवान्सर्पान्प्रत्यधिदेवं कालं दूर्वासमिच्चर्वाज्यैः पूर्वोक्तमंत्रैस्तु जुहुयात्। प्रधानदवं केतुमधिदैवं व्रह्माणं प्रत्यधिदैबं चित्रगुप्तं कुशसमिच्चर्व्वाज्यैः पूर्वोक्तमन्त्रैस्तु जुहुयात्। विवक्षितसंख्योक्तैः पार्श्वदेवताः प्रधानदशमांशेन क्रतुसागुदण्य देवताविनायकं दुर्गां क्षेत्रपालं वायुमाकाशमश्विनौ क्रतुसंरक्षकदेवताः इन्द्र-

मग्निमयं निऋर्ति वरुणं वायुं सोममीशानं प्रधानविंशांशेन अग्निवायुसूर्यप्रजापतीन् तिलव्रीहिभिर्विवक्षितसंख्यया सूर्यमाज्येन त्रयोदशवारं अग्निं चतुस्त्रिंशद्वारं प्रधानं रुद्रं द्वात्रिंशद्वारं शेषेण स्विष्टकृतमित्यादि सद्यो यक्ष्य इत्यंतमुक्त्वा भुर्भुवः स्वः स्वाहेति मन्त्रेण समिद्वयमग्नावाधाय प्रजापतय इदं नम इत्युद्दिश्य त्यजेत् । ततो वर्हिः संनहनाद्याज्येन दर्भाग्रद्वयनिधानांतं कृत्वा लौकिकसिद्धांजधान्यतिलयवैः सहाज्यं त्रिः पर्य्यग्निं कृत्वा ज्योद्वासनं कृत्वा वर्षिं निधाय स्रुक् स्रुव संमार्जनं कृत्वा अंजं पात्रान्तरे पृथक् कृत्वा ग्रावधिश्रित्य स्रुवेण्यधार्योदगुद्वाद्वास्य आज्या दक्षिणतो वर्हिष्या साद्य प्रत्यभिधार्णा अग्न्यलंकरणादि आज्य-भागांतं कृत्वा क्रमेणादित्यादीशानांतेभ्य एकचत्वारिंशदेवेभ्यस्तत्तन्मत्रैः समिच्चर्वाज्यैः प्रागुक्तसंख्याकाहुतोर्जुहुयात् । तत्रायं क्रम—समिधं मूलतो द्वयंगुलं विहाय मध्यमानामिकांगुष्ठैः गृहीत्वा जुहुयात् । तत्रायं क्रमः समिधं मूलतो द्वयंगुलं चरुं ग्राससमं पाणिनैव आज्यं स्रुवेण तदभावेऽश्वत्थपत्रेण वा ततो व्यस्तसमस्तव्याहृतिभिः प्रभूततिलयवधान्यानि पाणिना हुत्वा सूर्यपावकरुद्रानाज्येन जुहुयात् । इति श्रीयुगलशेषावतारवलदेवाभिषेके प्रथमप्रतिष्ठायां होमप्रयोगः ।

अथ श्रीयुगलसंकर्षणवलदेवाभिषेकप्रारम्भः—

अभिषेकपद्धतिनिषेधः गौतमीये—

कदाचिद्दैवयोगेन पुस्तिका लभ्यते क्वचित् ।
मूर्खाचार्यस्तदा कुर्य्याद्बलदेवाभिषेचनम् ।
कृष्णाभिषेकपद्धत्या अयोग्येन सुयोग्यकृत् ।
प्रतीपमभिषेकं च कुर्य्यान्मूर्खो स पापभाक् ॥
त्रीणि तत्र भविष्यन्ति दुर्भिक्षं मरणं भयम् ।

ज्येष्ठपुत्रो विनश्यति कदाचित् ज्येष्ठः न स्थितः ।
लघुश्च सुस्थितो भूत्वा दरिद्रेण सदान्वितः ।
हलेन वलदेवश्च तत्कुटुम्बं निवारयेत् ।
परिवारिकस्य दोषो जडस्य स्वार्थिनस्तदा ।
आचार्याय दरिद्रं सः परिपूर्णकरोद्बली ।
मूर्त्तिश्च क्षीणतां याति कल्याणरहिता स्थिता ।
एतस्माच्छेषपद्धत्या अभिषेकं च कारयेत् ।
वार्षिके वत्सरे प्राप्ते मत्कुले प्रभवो जनः ।
भक्तियुक्तः समासीत रेवतीरमणं यजेत् ।
अभिषेकं स्वहस्तेन ज्येष्ठोऽसौ मत्प्रसूतिजः ।
वलदेवस्य यः कुर्याद्धनधान्यैः सदा सुखी ॥२
कदाचित्समये प्राप्ते मूर्तिवृद्धिश्च जायते ।
कुलोत्पन्नश्च दौहित्रस्त्वभिषेकं करिष्यति ॥३
दोषो नास्ति च संकष्टे शरीरे व्याधिसंयुते ।
ममेष्टवलदेवश्च श्रीकृष्णाज्ञा वभूवह ॥४
गोदावरीतटे प्राप्ते मयि श्रीकृष्णः प्राप्तवान् ।
द्वादश-वर्षरूपेण राधया सहितो हरिः ॥५
युगलस्तु तदाज्ञाय मम वालस्वरूपिणः ।
वर्षद्वादश पूर्णः स्याद्दीक्षितस्याकरोद्हरिः ॥
मंत्रोपदेशं कर्णे च त्वष्टसिद्धिसमन्वितम् ।
युग्ममंत्रोपदेशेन हलिनं त्विष्टमाप्नुयाद् ॥७
ममोपासकभक्तोऽसि सर्वदा भव दीक्षित ।
मदाज्ञया वलदेवमजं त्वं मत्प्रभुं भज ॥८
अहं ते संगमाप्नोमि यत्र यत्रैव गच्छसि ।
उपदेशं च दास्यामि तत्र तत्रैव यामि च ॥९
मम भ्रातरमिष्टं च मोहनं मत्स्वरूपकम् ।
द्वाविष्टौ तव भूयास्तां वलदेवसुमोहनौ ॥१०
विहारोपासनाशक्तः व्रजोद्धारं करिष्यसि ।
चतुः सहस्रवर्षैस्तु व्रजो छिन्नोऽस्य भूतले ॥११

विधिपूर्वं समाचख्यत् नारदाय स्वयं हरिः ।
अवतारप्रसंगेन भट्टः दीक्षितसंभवः ।
इति किंचित्सूचनिकां निषेधाय प्रवक्ष्यते ।
व्रजप्रदीपिकायां च पूर्वार्द्धे विस्तरेण च ॥
उत्तरार्द्धे चन्द्रिकायामुत्सवानां च सूचनम् ।
व्रजप्रदीपिकायां च सर्वमूलं प्रवक्षितम् ॥
कथितं च द्वयोर्मध्ये पूर्वार्द्धे चोत्तरार्द्धके ॥१४

इति चतुर्दशश्लोकैः नारायणभट्टोक्तै निषेधकारणात् ॥

दक्षिणे दीपिका कार्या श्रीकृष्णस्योपदेशतः ।
व्रजे च उत्सवानां च चन्द्रिका च मया कृता ॥
एक ग्रंथस्य द्वौ भागौ रचितौ देशभिन्नतः ।
चतुर्दशसहस्राणां संख्या ग्रन्थस्य चोच्यते ॥ इति भट्टोक्तिः—
श्रीकुंडमास्थितो भट्टः यदुक्तं चिन्हमीक्षते ।
व्रजप्रकाशकं ग्रंथं व्रजजनप्रजकम् ।
तच्चिन्हं विस्मितं ज्ञात्वा दीक्षितश्चकितो भवत् ।
यत्क्षणे चिन्त्यमानोऽसौ तत्क्षणे हरिरग्रतः ।
पीताम्बरधरः स्रग्वी युगलस्तत्र प्राप्तवान् ।
रात्रौ भट्टस्य संदेहं छित्वा चिन्हमदर्शयत् ।
उच्छिन्नं व्रजमध्ये तु पुरग्रामव्रजादिषु ।
काममोहननामाऽसौ श्रीकृष्णो बालरूपधृक् ॥

भविष्योत्तरे—

चिन्हं गोप्यं नारदाय प्रकाशं कुरुते हरिः ।
त्रिकोणस्य व्रजस्यार्द्धं द्विचत्वारित्रिकोणकम् ॥४२
उत्तरस्यां दिशि स्थेयो सूरसेनप्रवासकः ।
गोत्रे मधु छंदसि संभवोऽसौ गोप्ता यदूनां पतिः सूरसेनः ।
तस्यात्मजोऽभूद्वसुदेवनामा यस्यात्मजौ द्वौ बलदेवकृष्णौ ॥
सुन्होदं नाम वर्हदं द्वयोश्च ग्रामयोरपि ।
सुन्होदवर्हदौ ग्रामौ सीमा मर्य्यादमुत्तरे ॥

दक्षिणस्यां दिशि स्थेयौ पहाद्यर्खौहग्रामकौ ।
नाम्नौ सीम्नश्च मर्यादा त्रिकोणस्य व्रजस्य च ॥
मथुरामण्डलं मध्ये व्रजस्य वसतेर्यदि ।
नन्दग्रामाच्च गोपानं मध्ये च मथुरा पुरी ॥
चतुरशीति क्रोशानां मर्यादा व्रज उच्यते ।
गोपानं सीम मर्यादा त्रिकोणं गणयेद्बुध: ।
नारदस्यानुसारेण भट्टाय कथितो हरि: ।
तानि चिन्हानि पश्यंति विष्णुना कथितानि च ॥
कृष्णावतारमर्यादा बालचरित्रलाञ्छिता ॥

एवं मदाराधितदेवकीसुतो चिन्हानि गोप्यानि प्रकाशयेन्मम ।
उत्पात उच्छिन्न समस्तकानि व्रजानि लीलाचरितानि बिष्णुना ॥

व्रजस्य वर्तुलाकारं गोलाकारं विचिन्वितम् ।
उत्पातशान्ति प्रकाशे व्रजस्यैव प्रकाशितम् ॥
तैरेव कारणै: छिन्ना: उत्सवा प्रभवन्ति च ।
पुनः प्रकाशयेदेतं पुरग्रामव्रजादिषु ।
गोलाकारं समस्तं च ब्रजमण्डलमीरितम् ।
सर्ण सर्ण मयाख्यात दीपिकायां प्रविस्तरे ॥ इतिमर्यादा—

विष्णुरहस्ये—

जलं प्रियं च शेषस्य रेवतीरमणस्य च ।
जलमध्ये विराजते पातालमधितिष्ठति ॥
एक स्वरूपं पाताले द्वितीयमवनीतले ।
शिला पृष्ठे विराजते पुच्छदेशं रसातले ।
शिलापृष्ठं पृथिव्यां च सर्वांगावयवो पुमान् ।
मुखात्पादाब्जपर्यन्तं शिलापृष्ठं स्थितं भुवि ।
पुच्छभागं शिलायास्तु पातालमधितिष्ठति ।
तस्मात्कारणतो देवी त्रिवेणी निकटास्थिता ।
जलप्रियस्य देवस्य रेवतीरमणस्य च ।
हलायुधस्य पार्श्वस्था त्रिवेणी वहते सदा ॥

उत्सर्गे समये प्राप्ते शिलापृष्ठं सखन्यते ।
द्वात्रिंशद्धस्तमानेन शिलापृष्ठं खनेदधः ।
तत्क्षणे भगवदाज्ञा दीक्षितस्य भवेद्यदि ।

भविष्यपुराणे—

मच्छिला पृष्ठपातालेऽधितिष्ठति सेवक ! ।
अमित्वा निखनेत् पृथ्वीं नारदो अमितोऽत्र च ।
तस्मात्त्वया शिलापृष्ठं जनाकृतिस्वरूपकम् ।
एतत्प्रमाणं खण्डं च कृत्वा मे प्रतिमां कुरु ॥
त्रिवेणी तटके रम्पे मत्प्रिये सर्वथा स्थिते ।
हिंसवृक्षं च मूर्द्धि नस्थं छित्वा मन्दिरमुच्छ्रितम् ।

इति श्री शेषावतारश्रीवलदेवस्थाननिर्णयः ॥

अथ वार्षिकाभिषेकप्रारम्भः—

संज्ञं वार्षिकसंभूतमभिषेकं विधानतः ।
प्रतिवर्षमितिख्यातं पंचम्यां जन्ममुत्सवे । इतिनारदीये प्रथमप्रतिष्ठायामपि कर्त्तव्यः ॥

ततो पूर्वमेव त्रिवेण्याः निकटतटस्थाने मन्दिरे भूस्थलं संस्कृत्य तत्र चतुः स्तम्भादियुक्तं मण्डपं कुर्यात् । तदुपरि वितानं वध्नोयात् । तत्रैव मन्दिरे हस्तमात्रपरिमितां वेदिकां द्वितीयहोमवेदिकानिकटे कुर्यात् । प्रथमप्रतिष्ठायां द्वितीया वेदिका कार्य्या, द्वितीयायामैव मण्डपं त्रिगुणितंतुवेष्टितं चतुर्द्वार तोरणध्वजासहितं कुर्यात् । तत्र वेदिकायाः निकटे सर्वतोभद्रमण्डलं कुर्यात् । ततः सर्वसामग्रीः संपाद्य पुन आचार्यादिवरणं कुर्यात् । संकल्पः—दक्षिणदेशे गोदावरीतटस्थले श्रीयुगलकृष्णावतारमहाविष्णोराज्ञाप्रवर्त्तमानोऽस्मिन् श्रीव्रजदेशे जन्ममरणोद्धारके साफल्यस्वरूपके त्वागतः संवत् द्वादशोत्तरषोडशशते १६१२ वत्सरे श्रावणे मासि शुक्लपक्षे तिथौ पंचम्यां

रविवारहस्तानक्षत्रशिवयोगसमन्विताायां श्रीशेषावतारसंकर्षण-श्रीयुगलवलदेवाभिषेकं प्रारम्भे। श्रीयुगलमूर्त्तिश्रीकृष्णोपासकः श्रीकृष्णाज्ञायुगलश्रीवलदेवोपासकः श्रीमन्नारायणसंप्रदायका-श्वलायनशाखापस्तंवसूत्रयजुर्वेदान्तर्गत — भार्गवच्यवना-प्लुवानौरवयामदग्येति पंचप्रवरान्वित श्रीवत्सगोत्रोत्पन्नश्री-नारायणभट्टगोस्वामिशर्म्माहं—

त्रिवेण्यास्तटस्थले उच्चग्रामस्य दक्षिणे भागे स्थाने मधुछंदस् गोत्रोत्पन्नस्य श्रीशेषाबतारस्य श्रीयुगलवलदेवाभिषेकार्थं दश नाड्यगतसूर्योदयात्समये सिंहलग्नस्य सप्तमनवमांशके तुल-राशिगते एतत्समये त्वामाचार्यत्वेनाहं वृणे इति ब्रुवन् यथाशक्त्या वस्त्रकुण्डलमुद्रिकादिभिः पूजयेत्। एवमृत्विगमपि पुनः वर्णयेत्। ततः वृतोऽस्मीति ब्रूयात्। ततः प्रतिसरं वध्नीयात्। अथ मन्दिरमध्ये दिग्वन्धनं कुर्यात्। श्वेतसर्ष-पान् दक्षिणहस्ते गृहीत्वा "प्राच्यै दिशे सप्तनागसहिताय कुमु-दनामानागेन्द्राय स्वाहात्र स्थीयतां" इति ब्रुवन् अनेन क्रमेण पूर्वदिगारभ्य चतुर्दिक्षु श्वेतसर्षपान् विकिरेत्। पूर्व-कोणादारभ्य चतुर्षु कोणेषु प्रक्षिपेत्। ततः "दक्षिणायै दिशे सप्त नागसहिताय प्रभुगदनामनागायोपानुचराय यमावताराय नागरक्षकाय स्वाहा" ततः अवाच्यै दिशे "सप्तनागसहिताय महाभुजनामनागाय शेषस्योपानुचराय कुवेरावतारनागरक्षकाय स्वाहा" उत्तरायै दिशे सप्तनागसहिताय दलदनामनागाय शेषस्योपानुचराय कुवेरावताराय नागरक्षकाय स्वाहा" इति चतुर्दिक्षु स्थानान् दत्वा ततस्त्रिगुणितरक्तसूत्रेण सप्तस्तम्भान् परिवेष्टयेत्। ततः "श्रीभगवच्छेषावतार श्रीयुगलमूर्त्तिश्रीकृष्णा-ज्ञयादौ प्रवर्त्तमानस्य पुनरवतरणस्य संकर्षणस्य श्रीवलदेवस्य वार्षिकप्रथमजन्मोत्सवे मण्डपं रक्षस्व" इति पठित्वा ततः

मन्दिरस्य चतुर्षु कोरणेषु पूर्वदिगादिक्रमेरण चतुर्दिक्षु सद्य परिषिचेत् । ततस्त्वष्टदिग्पालान् पूजयेत् । ततः पुनः मन्दिर-मध्ये पूर्वस्यां दिशि कोरणे "पंचनागसहिताय वायुनामनागाय इन्द्रावताराय कपिशवर्णध्वजादण्डाय नमः" अनेन क्रमेरण चतुर्षु पूर्वादिदिग्सु उक्तकृतस्थापनादग्रतस्तेभ्यः पूर्वमेव स्थि-तेभ्यः परिचारकनागेभ्यः पंचांगुलप्रमाणतः स्थानं दद्यात् । ततः विदिग्सु अग्निकोरणमारभ्य चतुर्षु पूर्वस्थापना न कृता, तस्मादयं क्रमः न भवति । न्यून्याधिक्यकर्त्तव्यता यदा भवति तदा भूमिकंपेन प्रतिमा विघ्नतां प्राप्नोति कलाहीना भवति उत्पातेन सेवाकर्त्तुः स्वामिनः कुटुम्वो क्षयं गतः इति वचना-दस्तव्यस्तेन न कुर्यात् । ततः अग्निकोरणे "चतुर्नागसहिताय पोतवर्णाय प्लवंगनामनागाय अग्नेरवताराय कपिलवर्णध्व-जादण्डाय नमः स्वाहा" मंत्रेरण क्रियाभाक् पताकादशं अर्च-येत् । दक्षिरणस्यां दिशि "षट् नागसहिताय पतंगमनामनागाय यमावताराय नोलवर्णाय नीलध्वजादंडाय नमः स्वाहा" नैऋतिकोरणे "नवनागसहिताय श्यामवर्णाय भुजंगमनाम-नागावताराय नैऋतावताराय श्यामध्वजादन्डाय नमः" पश्चिमस्यां दिशि "अष्टनागसहिताय मनोरमनामनागाय वरु-णावतारायारुणवर्णाय श्वेतध्वजादण्डाय नमः" वायव्यकोरणे "त्रिनागान्विताय श्वेतवर्णाय सागरेशनामनागाय धूम्रवर्ण-ध्वजादन्डाय पवनावताराय नमः" उत्तरस्यां दिशि "नवनाग-सहिताय धूम्रवर्णाय अमलवर्णध्वजादण्डाय सोमकुवेराय महांगदनामनागाय नमः स्वाहा" ईशानकोरणे "दशनागसहि-ताय नीलांगदनामनागाय श्वेतवर्णध्वजादण्डाय गौरवर्णाय शिवावताराय शिवस्वरूपाय नमः स्वाहा" उपरिष्टाद्देशे "ज्वलितवर्णाय हेमांगमनामनागाय त्रयोदशनागसहिताय ब्रह्मा-

वताराय ब्रह्मस्वरूपाय रक्तवर्णध्वजादण्डाय नमः स्वाहा" अधोभागे "कर्बुरवर्णाय द्वादशनागसहिताय कनकांगदनाम-नागाय गौरध्वजादण्डाय शेषरूपाय नमः स्वाहा"। ततः सहस्र-कलापरिपूर्णस्य श्रीयुगलसूर्त्तश्रीवलदेवस्य सन्मुखावलोकने द्वारदेशे "एकविंश नागसहिताय कज्ज्वलवर्णाय वारांगदनाम-नागाय मुख्यद्वारपालकाय नमः स्वाहा"। एवं "श्रीशेषावतार-स्य बलदेवस्य युगलविराजमानस्य मण्डपं रक्षस्वेति" पठित्वा सर्वत्र धूपदीपादिभिरर्चयेत्। सद्यदुग्धेनाभिषिंचेत्। ततः सहस्रकलां मन्दिरव्याप्तां दुग्धेन परिषिंचेत्। ततो निषेधः

पाद्मे– युगला भवति मूर्त्तिर्वामांगे रेवती स्थिता।
शिलापृष्ठे द्वयोर्मूर्त्तिरवतारो स्वयं प्रभुः॥
त्रयश्च कलशास्तत्र भवन्ति ह्यभिषेचनम्।
पूर्वमेव प्रतिष्ठायां विधिरेष उदाहृतः।
वार्षिकाख्येऽभिषेकेऽस्मिन् द्वौ घटौ भवतस्तदा।
एकवारं द्वयोरेव मंत्रेण युगलेन च॥

द्वौ मंत्रौ पठितव्यौ च दंपत्योर्मूर्त्तिसंस्थिता।
तृतीयेण च मंत्रेण फणानां पूजनं कृतम्॥
मंत्रौ च युगलावुक्त्वा बलदेवं प्रपूजयेत्।
भिन्नमूर्त्तिर्यदा भूत्वा दंपत्योः रामकृष्णयोः॥
एका विधिः समाख्याता कस्यांचिन्मूर्त्तिसंस्थिते॥

इति निषेधः॥

ततः द्वितीयकर्म्मणः। युगलमूर्त्त्यभिषेकस्य सर्वतोभद्रमंडपस्य निकटे उपविश्य तदुपरि द्वितीयकलशं स्थापयेत्। प्रथमप्रति-ष्ठायां द्वितीयं कलशं भवति। वार्षिकाभिषेके ह्येकं कलशं धार्य्यं, श्रीवलदेवस्वरूपः सहस्रकलाव्याप्तः, चतुःषष्ठिकलाभिः व्याप्तः श्रीकृष्णस्वरूपो विराजते, सर्वाभिः कलाभिः परिपूर्ण-

स्वरूपो श्रीकृष्ण:, अन्यास्त्रयो स्वरूपा: श्रीमदनमोहनश्री-गोविन्ददेवश्रीगोपीनाथा: ये स्वरूपास्त्रयस्ते षोडश षोडश कलाभि: व्याप्तपरिपूर्णस्वरूपा: अष्टचत्वारिंशत् कलाभिस्त्रयो मूर्त्तयश्चोक्ता: सन्ति, चतु: षष्टिकलापरिपूर्णस्वरूपो श्रीकृष्ण-चन्द्र: इति व्याख्यातम् ।

सर्वतोभद्रमण्डलोपरि स्थितं कलशं सर्वतो भद्रमण्डलपूजन-पूर्वकं त्रिगुणितं तंतुवेष्टितं मुखं आम्रपल्लववेष्टितं धूपितं च कुर्य्यात् ॥

विष्णुरहस्ये—

एकदा समये कृष्ण: राधायै वाक्यमब्रवीत् ।
त्वां लोका: परकीयां च स्वकीयां ललितां तथा ॥
वदन्ति ह्यपवादेन सीताशापसमुद्भवाम् ।
यस्मान्मामभि निंदति निन्देयुरपि नारदम् ॥
मृषावाक्यानि हे देवि ! नारदं प्रति गृह्यतां ।
पतन्ति नरके घोरे यावच्चंद्रदिवाकरौ ॥ इति
यस्मान्माऽऽज्ञापयद्विष्णुः वलदेवमुपासये: ।
युगलं शेषमूर्त्तिं त्वं ममोपासक: सर्वदा ॥
प्रसन्नवरदो भूत्वा श्रीकृष्ण: सन्मुखे स्थित: ।
युगलोपासकस्त्वं हि विहारं च प्रकाशयेत् ॥
इति श्रीभट्टोक्ति: ।

तत्र कामवीजस्मरणपूर्वकं तत्र कुम्भे पंचरत्नं नवरत्नं गंधाष्टकं क्षीरवृक्षक्वाथतोयं धाष्टकं प्रक्षिप्य मूलमंत्रं च पठन् जलं पूरयेत् । ततोऽंकुशमुद्रया त्रिवेणीव्यतिरिक्ततीर्थानामावाहयेत् । अंगुष्ठानामिकायुक्तया मुद्रया विलोडयेत् । तत्र कुंभे विष्णु-क्रान्तामिन्द्रवल्लीं दूर्वां च निक्षियेत् । तर्जनीमध्यमे प्रसार्य्या-ऽनामिकाकनिष्ठागुंष्ठै: कुशं गृहीत्वा अस्त्रमन्त्रं पठन् प्रोक्षणं कुर्यात् । ततोऽस्त्रमंत्रेण ताडनं, "करवीरस्य पुष्पाणि गृहीत्वा-

क्षरसंख्यया । ततस्तौ ताडयेन्मंत्रं कामवीजेन मंत्रवित्," काम वीजं पठन् अभ्युक्षणं, कुशेनावगुंठनं, ततः षडंगन्यासं कुर्यात् । ततो धेनुमुद्रयाऽमृतिकरणं, श्रीयुगलमूर्त्तिशेषावतारश्रीवलदेवाभिषेकेऽधिकाः भिन्नाः कला वर्त्तन्ते । ततो "अष्टोत्तरशतकलाव्याप्तसौम्यमूर्त्तिवन्हिमण्डलाय नमः स्वाहा" ततः "षोडशोत्तरचतुः शत ४१६ कलाव्याप्तसोममण्डलाय नमः स्वाहा" ततो "शतकलाव्याप्तमूर्त्यै त्रिवेण्यै नमः" इति श्रीकृष्णाभिषेकादधिककर्त्तव्यता श्रीवलदेवाभिषेकेऽस्ति । तमोऽष्टोत्तरशतं सहस्रं वा मूलमंत्रं जपेत् । "ओं ह्रीं अस्त्राय फडिति" मंत्रेण शंखं प्रक्षाल्य ततस्तत्र गंधाक्षतान् प्रक्षिपेत् । हृदयमन्त्रमुच्चरन् ततः मातृकाक्षरप्रतिलोमै शंखे जलं पूरयेत् । "ट ठं डं ढं णं" इति मातृकाक्षरैः शंखजलं विलोडयेत । ततः शंखपाठे "अष्टोत्तरशतकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नमः स्वाहा" इति मन्त्रं पठन् शंखं पूजयेत् । ततः शंखजले "षोडशोत्तरचतुः शतकलाव्याप्तसोममंडलाय नमः स्वाहा" इति मंत्र पठन् गंधादिभिस्त्रिभिर्वारैः शंखं प्रपूजयेत् ।

त्वं पुरा सागरोत्पन्नः विधृतो हलिना करे ।
निर्म्मितोऽखिललोकेषु तीव्रघोष नमोऽस्तु ते ॥

"तीव्रघोषाय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तन्नो शंखः प्रचोदयात्" इत्यभिषेके श्रीवलदेवस्य शंखमंत्रः । ततः स्थालिकायां पित्तलिमय्यां मया लिखितमिष्टदेवनिवगारुप्रभावमंडलयंत्रं गंधादिभिः पूजयेत् । श्रीयुगलमूर्त्तेरग्रे स्थालिकां निधाय मंत्रः "ओं ह्रीं क्लीं सौरिष्टपूर्णेश्वरि सर्वव्रजोद्धारिणि मम सकलमनोरथानि पूर्णानि कुरु कुरु स्वाहा" इत्यनेन मंत्रेण संमोहन–तंत्रोक्तेन श्रीकृष्णस्योपदेशतः मया गोदावरीतटे लिखितं स्थालिकायंत्रमिष्टदेव प्रपूजयेत् । ततः लाडिलेयश्रीकृष्ण-

वालस्वरूपप्रभाव: भविष्यपुराणे—

नारदावतारस्य मम श्रीकृष्णो युगलमूर्त्तिस्थमुपदेष्टव्य: ॥

श्रीकृष्णोवाच—

मम मूर्त्तिं वालरूपं लाडिलेयाख्यमिष्टकम् ।
तवेष्टं परिपूर्णं च करोति सकलेप्सितम् ।
यस्मात्त्वं भट्ट गृन्हीष्व लाडिलाख्यं स्वरूपकम् ॥
पूजनं नित्यमेव त्वं विधिपूर्वं यजेद्धरिं ।
प्रथमं लाडिलं पूज्यं ममेष्टं कृष्णवालकम् ॥
लाडिलेयं तथा यंत्रं पूजनं नैव कारयेत् ।
कामना: निष्फला: भूयाद्दारिद्रेण परिप्लुत: ।
विपरीती गृहे जाता: दुर्भिक्षं राजविग्रहम् ।
संततिर्नाशमायाति लालपूजां विना यदि ।
पूजने सुखसंपत्ति: संतति: पुत्रपौत्रकी ।
परमं सुखमाप्नोति कामना सुफला भवेत् ॥
श्रीकृष्णेन प्रदातव्या मम मूर्ति: स्वकीयसी ।
देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ।
प्राप्नोति मत्कुले जात: लाडिलेयप्रसादत: ।

इति श्रीवलदेवमन्दिरे श्रीकृष्णवालस्वरूपलाडिलेयमूर्त्तिपूजननिर्णय: । सर्वारम्भेषु वा ततो गंधादिभि: लाडिलेयं पूजयेत् गौतमीयतन्त्रोक्तमन्त्रेण ॥

गोदावरीप्रसादेन सन्मुखो हरिरीश्वर: ।
बलदेवाभिषेकेऽस्मिन्निष्टं दत्वा प्रपूजतेत् ॥

इति सिंहासने वामभागस्थं लाडिलेयं संपूज्य दक्षिणभागस्थितपित्तलिस्थाल्यां लिखितमण्डलाकारयंत्रं पूजयेत । तत: सिंहासने शिलापृष्ठस्य पृष्ठदेशे कुंकुमेन रोहिणीप्रतिमां लिखेत् पूजयेद्गन्धादिभि: अनेन मंत्रेण "दशमासि धृते देवि योगमायाप्रभावत: । शेषावतारपुत्रं त्वं मात: सद्य प्रसूयसे" इतिपाद्यं

पातालखंडे । ततो द्वारदेशस्थां विहाय क्रां गोमयेनालिख्य तस्या अग्रे गोधूमभागं कृत्वा तस्यैकभागस्यं द्वौ भागौ कुर्वतः "द्वौ भागौ कुरु हे देवि लोकेषु परिपूजिते । त्वं सर्व्वदैवते मातर्नारायणि नमोऽस्तु ते" ततो रोहिण्यग्रे युगलमूर्त्तेः पृष्ठदेशे किञ्चित् फलं निधाय छुरिकया द्वौ भागौ कुर्यात् ।

नारं छिनद्धि हे मातः प्रसवोऽसि नमोऽस्तु ते ।
कलाव्याप्तं महाराध्यं सर्वकामप्रदायकम् ॥ आदिवाराहे—

शेषीनागस्य दशसहस्रफणाः स्युः । शेषनागस्यैकसहस्रफणाः स्युः । तप्तोदकनिषधः :

युगलमूर्त्त्यवतारं शेषाख्यं मुशलायुधम् ।
तप्तोदकेन न स्नायात्कदाचित् जडता यदि ।
भ्रमेण तप्तयोगेन जलेन स्पर्शनं कृतः ।
शेषावतारं वलदेवमुष्णोदकविवर्जितम् ।
सकुटुम्बपरीवारः क्षयं प्राप्नोति सेवकः ।
मत्कुलप्रभवो ज्येष्ठो कुटुम्बस्य च नायकः ।
तस्माच्छीतोदकं ग्राह्यं वलदेवाभिषेचने ।
परमैश्वर्यमाप्नोति पुत्रपौत्रादिसन्ततिम् इति ।
गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ! ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधौ भव ॥

ततस्तत्रैव मन्दिरे तीर्थावाहानमंकुशमुद्रया । ततः शिखामन्त्रेण युगलमूर्त्त्यै गालिनीमुद्रां प्रदर्शयेत् । ततः सद्यजलं प्रपश्येत् । ततो पंचांगन्यासं कुर्यात । ततश्चक्रधेनुमुद्रादिदर्शनम् । ततोऽष्टधा मूलमंत्रं जपेत् ॥

मंत्रनिषेधः वामनपुराणे—

स्वकीयं मूलमंत्रं च स्वकुलेभ्यः प्रदीयते !
कुलोद्भवा पुत्रपौत्रप्रपौत्रादिभ्य एव हि ।
दौहित्राय न दातव्यं स्वकीयं चेष्टसाधनं इति ।

मूलमंत्रं व्रजोत्सवाल्हादिन्याः ग्रन्थे लिखितमिदम् : व्रजोत्सवाल्हादिनीनाम्नि त्वेकादशसहस्रके ग्रंथे पूर्वमयाख्याते सर्वोत्सवसमन्विते ॥ ततः सर्वप्रोक्षणं, ततः मधुछन्दस्य गोत्रोद्भवस्य श्रीशेषावतारस्य युगलमूर्त्तेः संकर्षणस्य श्रीवलदेवस्य दृढ़ासने उपवेश्योपचरेत् । यथा भागशः तत्रैव स्थाने पंचदश नव वा त्रीणि पात्राणि स्थापपेत् । तत्रायं क्रमः—मूलमंत्र–मुच्चार्य्य "भो सहस्रफणैः संयुक्त भगवन् श्रीयुगलमूर्त्ते श्रीवलदेव स्वागतं" इति मंत्रेणाभिनन्द्य पुष्पषट्कं दद्यात्। श्रीयुगलमूर्त्तेः मस्तकोपरि चतुर्दश फणाः सन्ति, तेषु चर्दुदश फणेषु षडशीत्युत्तर नव शत सख्यकाः फणा विराजन्ते । श्रीसंकर्षणस्य श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि सप्त फणा विराजन्ते । श्रीरेवत्याः मस्तकोपरि सप्त फणा विराजन्ते । तेषां सप्तानां फणानां मध्येषु त्रिनवत्योत्तरचतुः शतानि ४९३ फणानि विराजन्ते । श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि एवं रेवत्याः मस्तकोपरि स्थितानां सप्तानां फणानां मध्येषु त्रिनवत्योत्तरशतानि ४९३ फणानि विराजंते । श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि स्थितमध्यभालदेशे विराजमानमेकफणं तस्मिन्नेकस्मिन्फणे त्रिनवति९३ संख्यकाः फणाः विराजंते । तत्रैवैकस्मिन्नफणे त्रिनवतिसंख्यकानां फणानां चिन्हानि दृश्यन्ते । अन्येषु शेषेषु षट्संख्याकफणेषु श्रीवलदेवमस्तकोपरि स्थितेषु नवति नवति संख्यकाः फणाः पृथक् पृथक् विराजन्ते । श्रीवलदेवस्य त्रय फणाः भालदेशादारभ्य वामभागे स्थिताः सन्ति । एकस्मिन् भागे त्रयः संख्यकाः फणाः भालदेशमारभ्य द्वितीयस्मिन् भागे दक्षिणतः स्थिताः सन्ति येन प्रकारेण श्रीशेषावतारस्य श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि स्थिताः पंचशत् ५०० संख्यकाः फणाः विराजन्ते तथैव तेनैव प्रकारेण प्रथमप्रतिष्ठायां रेवत्याः साकलगोत्रोद्भवायाः मस्तको-

परि स्थिताः पंचशतसंख्यकाः फणा विराजन्ते। प्रथमप्रतिष्ठायां प्रथमजन्मन्युत्सवेऽस्मिन्नादौ वार्षिकाभिषेकेऽपि सहस्रसंख्यकानां मस्तकोपरिस्थितानां फणानां प्रतिष्ठां कुर्यात्। तत्र फणानां प्रतिष्टारहिते सति निषेधः वामनपुराणे—

फणानां च प्रतिष्ठां च शेषनागस्य मूर्द्धनि।
उत्सवे नैव कुर्य्याच्च कुष्ठी भवति कारकः।
आचार्यो कष्टमाप्नोति हलिनश्चाभिषेचने।
वलदेवस्य सेवायां नारीकुलसमुद्भवाः।
विभवाऽविभवा चैव कुलजाता तु कन्यका।
अन्यकुलसमुत्पन्ना पुत्री नारी यदा भवेत्।
सौभाग्या विधवा वापि युगलस्य स्पर्शात्तदा।
कुष्ठिनी भवति नारी कदा पुत्रं न पश्यति॥ इतिस्त्री-

परिचर्यानिषेधः॥

युगलं वलदेवं च शेषाख्यरूपमास्थितम्।
त्रिवेणीतटसन्यस्तं ललिताग्रामवासिनम्।
काचिद्भिः कामनाभिश्चाराधितो रेवतीप्रियः।
ताभिस्ताभिः कामनाभिः परिपूर्णं करोति सः।
सेवकं कामनाभिश्च परितोषं च कारयेत्। इतिविष्णुपुराणे।

ततः जन्मदिने तु भगवद्युगलमूर्त्तिशेषावतारमधुछंदस्गोत्रोद्भवश्रीवलदेवाविर्भावं संभाव्य सप्त पुष्पाण्यंजलौ गृहीत्वा— "भो भो श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरिस्थिताः सप्तफणास्त्रिनवत्योत्तरचतुःशतसंख्याकैः ४९३ फणैः सहिताः स्वागताः" इति पठित्वा श्रीवलदेवमस्तकोपरिस्थितानां सप्त संख्यकानां फणानां त्रिनवत्योत्तरचतुः शत संख्याकैः फणैः सहितानां सप्तानामुपरि सप्त पुष्पाणि सप्तधा दद्यात्। पश्चात्स्वागतादिप्रश्नं ब्रूयात्। ततो मूलमंत्रमुच्चार्य्य आसनं गृहीत्वा "भो भो श्रीवलदेवमस्त-

कोपरि स्थिताः सप्तसंख्यकाः फणाः इमान्यासनानि आस्यता-मिति वदन्नासनेषु दशसंख्यकाः फणाः इमान्यासनान्यास्यता-मिति वदन् नव संख्यकानि पुष्पाणि कूर्चदूर्वासहितानि आस-नेषु दद्यात्। ततः भगवन् श्रीशेषावतार संकर्षण बलदेव इदमासनमास्यतामिति वदन् श्रीबलदेवस्यासने पंचपुष्पाणि कूर्चदूर्वासहितानि दद्यात्। ततः रैवतपुत्रि साकलीगोत्रोद्भवे भगवति श्रीशेषावतारसंयुक्तमूर्त्ते इदमासनमास्यतामिति वदन् श्रीरेवत्याः आसने पंचपुष्पाणि कूर्चदूर्वासहितानि दद्यात्। ततस्तत्रैव ताम्रमयं पात्रं निधाय तस्मिन् शालिग्रामं विष्णु-स्वरूपं संस्थाप्य प्रथमं युगलमूर्त्तिं स्नानादिभिः सर्वेस्तु संस्कृत्य पश्चात् शालिग्रामं स्नपनादिभिः संस्कुर्यात्। पंचा-मृतस्नानादिपूर्वमेव श्रीयुगलमूर्त्तिं संस्कृत्य पश्चात् शालिग्रामं स्नापयेत्। ततः श्यामार्कपंचकं दूर्वापंचकं अब्जपंचकं विष्णुक्रान्तापंचकं एतत्सहितं पलचतुष्टयं जलं गृहीत्वा मूल-मंत्रमुच्चार्य्य प्रथमं फणेभ्यः पाद्यं दद्यात्। "भो श्रीबलदेवस्य मस्तकोपरि स्थितास्त्रिनवत्योत्तरचतुःशतसंख्यकैः फणैः सहिताः सप्तफणाः इमानि पाद्यानि युष्मभ्यं नमः" इति ब्रुवन् श्रीबलदेवस्य पृष्ठदेशे सप्तानां नागानां पुच्छभागेषु सप्त-स्थानेषु पाद्यानि दद्यात् सप्तधा विभज्य, ततः पुनरिदं जलं गृहीत्वा "भो भो रेवतीमस्तकोपरि स्थिता स्त्रिनवत्योत्तरचतुः शतफणैः सहिताः सप्तसंख्यकाः फणाः इमानि पाद्यानि युष्मभ्यं नमः" इति ब्रुवन् श्रीरेवत्याः पृष्ठभागे सप्तनागानां पुच्छदेशेषु सप्तधा स्थानेषु पाद्यानि दद्यात्, ततः पुनरिदं जलं गृहीत्वा मूलमंत्रमुचार्य्य श्रीभगवन् श्रीशेषावतार संकर्षण श्रीबलदेव इदं ते पाद्यं नमः" इति ब्रुवन् श्रीबलदेवचरणा-म्बुजयोः पाद्यं दद्यात्। ततः पुनरिदं ते पाद्यं नमः इति ब्रुवन्

ततः पुनरिदं जलमादाय मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीभगवति शेषावतारसंयुक्तमूर्त्तेरिदं ते पाद्यं नमः" इतिब्रुवन् श्रीरेवत्याश्चरणाम्बुजयोरेव पाद्यं दद्यात् ॥

ततः जातीलवंगककोलानां षट्पलक्वाथं गृहीत्वा मूलमन्त्रमुच्चरन् "श्रीभगवत्संकर्षणस्य मस्तकोपरि विराजमानाः सप्तसंख्यकाः फणाः युष्मभ्यं स्वधा" इति सप्तसंख्यकानां नागानां मुखेषु कांस्यपात्रेणाचमनं दद्यात् ॥

ततः क्वाथं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चरन् "श्रीरेबत्याः मस्तकोपरि विराजमानाः सप्तसंख्यकाः फणाः युष्मभ्यं स्वधा" इति सप्तानां नागानां मुखेषु कांस्यपात्रेणाचमनं दद्यात्। ततः पुनरिदं क्वाथं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य जपन् च सन् "श्रीशेषावतारश्रीयुगलमूर्त्त्यैं संकर्षणप्रियायै रेवत्यै स्वधा" इति कांस्यपात्रण रेवत्याः मुखे त्वाचमनं दद्यात् ॥

ततश्चन्दनागरुकर्पूराद्यात्मको गंधः पुष्पाणि अक्षतं यवाः दूर्वा तिलश्वेतसर्षपा-कुशसहितं चतुः पलं जलमादाय मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीभगवतः शेषावतारस्य संकर्षणस्य मस्तकोपरि विराजमानेभ्यः सप्तफणेभ्यस्त्रिनवत्योत्तरश्चतुः शतफणसहितेम्यः स्वाहा" इति पठन् श्रीवलदेवमस्तकोपरि स्थितानां सप्तानां फणानां उपरि निःक्षिपेत्। ततः पुनश्चतुः पलं जलं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीरेवतीमस्तकोपरि विराजमानेभ्यः सप्तफणेभ्यस्त्रिनवत्योत्तर चतुः शत फणसहितेभ्यः स्वाहा" इति पठन् फणानां सप्तानां रेवत्याः मस्तकोपरिस्थितानामुपरि निःक्षिपेत् ॥ ततः पुनरिदं जलमादाय मूलमंत्रमुच्चार्य्यं "श्रीशेषावताराय वलदेवाय स्वाहा" इति पठन् श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि निःक्षिपेत् ॥ततः पुनरिद जलं चतुः पलपरिमितं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्यं "श्रीसंकर्षणयुगलमूर्त्यैं रैवन्यै नमः स्वाहा"

इति पठन् रेवत्याः मस्तकोपरि निःक्षिपेत् ।

लोकदुःखहरं दिव्यं परोत्कृष्टस्य लिंगकम् ।
सर्वज्वालाभिसंत्यक्तास्तेभ्योऽर्घ्यं कल्पयाम्यहम् ॥ इतिमंत्रमुच्चरन्

श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि स्थितानां सप्तानां फणानामुपरिष्टा-दर्घ्यं सप्त स्थानेषु दद्यात् । ततः पुनरपि शंखेऽर्घ्यजलमादाय "रेवत्याः मस्तके धार्य्यास्त्रिनवत्य चतुः शतैः सहिताश्च फणास्तेभ्यो कल्पयाम्यर्घ्यमित्यहं" इति मंत्रमुच्चरन् रेवत्या उपरि-स्थितानां सप्त फणानां शिरस्सु सप्तधा दद्यात् । ततः पुनरपि शंखेऽर्घ्यजलमादाय—

श्रीशेषावतारसंभूत लोकानां हितकारकः ।
ललिताग्रामप्रगट तवार्घं कल्पयाम्यहं ॥

इति वृहन्नारदीयोक्तमंत्रेण भगवतः संकर्षणस्य श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि त्रिधाऽर्घ्यं दद्यात् । विष्णुरहस्ये—

एक वासरजन्मासि पंचम्यां रात्रिसंभवे ।
नवनाडीभिः शेषायां तव जन्मोऽभवत्तदा ।
श्रावणस्य सिते पक्षे चित्रानक्षत्रसंधिगे ।
रविवारे च वेलायां लग्ने च मिथुनोदये ॥
यस्मात्त्वं वलदेवस्य त्वर्द्धांगी भवसि प्रिये ।
शिलापृष्ठे सदा त्वं हि प्रसीद परमेश्वरि ॥
त्रिवेणी वहते यत्र प्रीत्या कृष्णाज्ञयागता ।
नित्यं त्वामभिषिंचन्ती वल्लभा तव हे प्रिये ।
तस्मात्त्वं युगला मूर्ति र्भविष्यति नमोऽस्तु ते ॥
निर्मलं शंखमानीतं तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् ॥ इति

मंत्रमुच्चरन् रेवत्याः मस्तकोपरि क्षिपेत् । ततः पाद्यमर्घ्यंजल-मादाय—

वात्स्यायनमहर्षेश्चापि वक्तारो मस्तके स्थिताः ।
संकर्षणस्य सहास्तु तेभ्यो पाद्यं प्रकल्पये ॥ इति

पाद्मोक्तमंत्रं पठन् इदं पादार्घ्यं सप्तानां फणानां श्रीबलदेवस्य मस्तकोपरिस्थितानां पुच्छदेशेषु संकर्षणस्य पृष्ठभागे सप्तधा विभज्य विभागशः पाद्यं दद्यात्। ततः पुनरपि पाद्यजलं शंखे त्वादाय—

परिचर्यारताः संतु रेवत्याः मस्तके स्थिताः।
शेषावतारसंभूताः युष्मभ्यं पाद्यं कल्पये॥ इति

रुद्रयामलोक्तमंत्रमुच्चरन् सप्तानां नागानां रेवत्याः मस्तके विराजमानानां सप्तस्थानेषु पुच्छदेशेषु पृष्ठभागेषु श्रीरेवत्यास्तु सप्तधा दद्यात्। ततः पुनरपि शंखे पाद्यजलमादाय—

शेषावतार त्वद्भक्तस्त्विष्टभक्तिसमन्वितः।
श्रीकृष्णाज्ञाप्रकाशाय ललिताग्रामवासिने॥
त्रिवेणीतटसंस्थाय रेवतीरमणाय च।
हलायुधाय देवाय गौरांगाय नमोऽस्तु ते॥
पादाब्जाय तव तस्मै पाद्यं शुद्धाय कल्पये॥ इति

बृहद्गौतमीयोक्तमंत्राण्युच्चरन् श्रीबलदेवस्य चरणकमलयोः पाद्यार्घं दद्यात्। ततः पुनरपि शंखे पाद्यार्घ्यजलं गृहीत्वा—

परमानन्दरूपायै रेवत्यै रमणप्रिये।
ललितासुखदायै च अर्द्धांग्यै हलिनो नमः।
तस्यै ते चरणाब्जायै शुद्धायै पाद्यमाचरेत्॥ इति विष्णु-

यामलोक्तमंत्रं पठन् रेवत्याश्चरणोत्पलयोः पाद्यार्घं दद्यात्। इत्येव प्रकारेण चतुः स्थानेषु युगलमूर्त्तेर्बलदेवस्याचमनं दद्यात्। ततः मधुपर्कं—प्राज्यदधिमधुचतुः पलं कांस्यपात्रे निधायानामिकया अंगुल्या संमिश्र्य द्वाभ्यां हस्ताभ्यां गृहीत्वा सन्मुखे स्थितः संमोहनतन्त्रोक्तानि इमानि चतुर्मन्त्रान् पठेत्।

सर्वदोषविनाशाय सर्वकामार्थदायिके।
मधुपर्कमिदं तेभ्यो फणेभ्यो कल्पयाम्यहम्॥ इति

पात्रसंयुक्तांजलिना संकर्षणस्य मस्तकोपरि स्थितान् सप्त फणान् विज्ञाप्य ततः पुनरपि—

सर्वसौभाग्यसंभूत्यै कल्याणाय नमो नमः।
सुखात्मकं मधुपर्कं कल्पयामि तमद्भुतम्॥ इति

पुनरपि पूर्ववत् पात्रसंयुतांजलिना रेवत्याः मस्तकोपरि स्थितान् सप्त फणान् विज्ञाप्य ततः तुनरपि—

सर्वकालुष्यहीनाय परिपूर्णसुखात्मके।
मधुपर्कमिदं शेष कल्पयामि प्रसीद मे॥ इति

मधुपर्कमिदं पात्रसंयुतांजलिना श्रीवलदेवं विज्ञाप्य ततः पुनरपि—

सर्वारिष्टप्रक्षिप्ताय परमानन्दहेतवे।
मधुपर्कमिदं देवि प्रपन्ना भव रेवति॥ इति सारदोक्तमंत्रं

पठन् मधुपर्कपात्रसंयुक्तांजलिना रेवतीं विज्ञाप्य ततस्तन्मधुपर्कपात्रं वामहस्ते निधाय तस्मात्पात्रात् लघुपात्रं दक्षिणहस्तेन मधुपर्कं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीभगवतः शेषावतारस्य संकर्षणस्य मस्तकोपरि स्थितेभ्यस्त्रिनवत्योत्तरचतुःशतफणैः संयुक्तेभ्यः सप्तफणेभ्यः स्वधा" तेभ्यस्त्वा चमनं देयं स्वनामानं च उच्चरन् इति पठन् सप्तानां नागानां मुखेषु सप्तधा दद्यात्। ततः पुनरपि लघुपात्रेणोदं मधुपर्कं गृहीत्वा "रेवत्याः मस्तकोपरि स्थितेभ्यस्त्रिनवत्योत्तरचतुः शतफणैः संयुक्तेभ्यः सप्तफणेभ्यः स्वधा" इति पठन् रेवत्याः मस्तकोपरि स्थितानां सप्तानां नागानां मुखेषु सप्तधा दद्यात्। ततः पुनर्मधुपर्कं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीभगवते शेषावताराय संकर्षणाय वलदेवाय स्वधा" इति पठन् श्रीवलदेवस्य मुखारविन्दे दद्यात्। ततः पुनरपि मधुपर्कं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीयुगलमूर्त्यै रेवत्यै स्वधा" इति पठन् रेवत्याः मुखे दद्यात्।

ततः शंखे त्वाचमनार्थं पलमेकं जलं गृहीत्वा "पाताललोक-रक्षायै स्थिताः पातालवेश्मनि। भूमेर्भारावताराय शेषेण मस्तके धृताः। तेभ्यस्त्वाचमनं देयं भूम्यां कल्याणमिच्छता" इति पाद्मोक्तमंत्रं पठित्वा श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि स्थितानां नागानां सप्तसु मुखेषु सप्तधाचमनं दद्यात्। ततः पुनरपि शंखे त्वाचमनार्थं जलमादाय—"सर्वसौन्दर्य्यरक्षायै रेवत्याः मस्त-कोपरि स्थितेभ्यः सप्तनागेभ्यः फणेभ्यस्त्वाचमनं ददे" इति पाद्मोक्तमंत्रं पठन् सप्तनागानां रेवत्याः मस्तकोपरिस्थितानां मुखेषु सप्तस्थानेषु सप्तधाचमनं दद्यात्। ततः पुनरपि शंखे त्वाचमनार्थं पलमेकं जलं गृहीत्वा—

वालानां वलदेवाय संकर्षणगुणात्मने।
तेऽर्घ्यमाचमनं ग्राह्यं शुद्धाय मूशलायुध॥ इति

विष्णुपुराणोक्तमंत्रं पठन् श्रीवलदेवस्य मुखे आचमनं दद्यात्। ततः पुनरपि शंखे जलमादाय—

रामाणां रमणीमुख्यै वल्लभायै नमो नमः।
गृहिण्यै वलदेवस्य कन्यायै रैवतस्य च॥
सुपीतारुणवर्णायै मंगलायै नमोऽस्तु ते।
तेऽर्घ्यमाचमनं ग्राह्यं मुखं त्वां परिमार्जये॥ इति

विष्णुयामलोक्तमंत्रं पठन् रेवत्याः मुखे त्वाचमनं दद्यात्। ततस्तिलपृष्टं गृहीत्वा—

"भगोऽर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वा दुर्गार्हपत्याय देवाः। तां पूशंतां छिवितमा मेरपस्य यस्यां वीजं मनुष्याः आवपंति" इत्यनेन वेदोक्तमंत्रेण तिलं श्रीशेषावतारवलदेवस्य मूर्द्धनि ततः पुनरपि तिलपृष्टं गृहीत्वा—"सा न ऊरू उशती विहर यस्या मुशंतः प्रहराम शेपं, तुभ्यमग्रे पर्यवहन्सूर्यां वहतु नासह" इति वेदोक्तमंत्रं पठन् तिलपृष्टेन रेवत्याः मूर्द्धनि

इत्यनेन क्रमेण यजुर्वेदोक्तयुगलमंत्रौ पठित्वा युगलमूर्त्तेरभिषेकमाचरेत्। ततः श्रीवलदेवस्य वस्त्राणि गृहीत्वा—पुनः "पतिभ्यो जायांदाग्ने प्रजया सह," पुनः "पत्नी रग्निर्ददायुषा सह वर्चसा" इत्यनेन मंत्रेण श्रीसंकर्षणस्य वलदेवस्य वस्त्रपरिवर्त्तनं कारयेत्। ततः रेवत्याः वस्त्राण्यादाय—"दीर्घायुरस्यायुः पतिर्जीवतु शरदः शतं" "सोमः प्रथमो विविदे गंधर्वो विविद उत्तरः" इत्यनेन मंत्रेण रेवत्याः वस्त्रपरिवर्त्तनं कारयेत्। ततः पंचाशत्पलसंख्यकं जलमादाय—"संगोभिरांगिरसो नक्षमाणो भग इवे दर्यमणं निनाय जने मित्रो नदंपती अनक्ति वृहस्पते वाजयाशूंरिवाजौ मा विदन्परिपंथिनोय आसीदंति दंपती" इत्यनेन मंत्रेण शीतलशंखोदकेन रेवत्या सहितस्यैकशिलापृष्ठस्थितस्य युगलमूर्त्तेर्वलदेवस्य स्नानार्थं स्थानं दद्यात्। ततः "आशंनविशसन मधो अधिवितर्कंनं सूर्यायाः पश्य रूपाणि तानि व्रह्माथ शुधती" इति मंत्रं च पठन् श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरिस्थितान् सप्त फणान्सप्तधा सप्तस्थानेषु स्नापयेत्। ततः "गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जर दष्टिर्यथासः सौभाग्यमस्यैदत्वाय प्यास्तं विपरेतनः" इति पठन् मूलमंत्रं च पठन् रेवत्याः मस्तकोपरि स्थितान्सप्तफणान् स्नापयेत्। ततः पुनः "त्वमर्यमा भवसि यत्कनीनां नाम स्वधावन्गुह्यं विभर्षि प्रणमद्भिः प्रन्नस्वधेहि पितृन् लोकान्प्रणीहि नः स्वाहा" इति पठन् श्रीशेषावतारं योगमायाकृतसंकर्षणाभिधानं वलदेवस्वरूपं स्नापयेत्। ततः पुनः "अंजंति मित्रं सुधितं न गोभिर्यद्दंपती समनसा कृणोषि अस्याः प्रजावतो गृहे सश्चरती दिवे दिवे इडधेनुमती दुहे" इति पठन् मूलमंत्रं च पठन् रेवतीं स्नापयेत्। ततः पंचामृतेन स्नापनं—

पूर्वमेव पंचपलसंख्यकपरिमितसद्यदुग्धमादाय—

दुग्धनिषेध: पाद्मे —

वलदेवाभिषेकेऽस्मिन्सद्यदुग्धं समाददे ।
स्नापनं सद्यदुग्धेन वलदेवस्य कारयेत् ।
शेषावतारभूतस्य रेवत्या संयुतस्य च ।
प्रथमं मस्तके धार्य्यान्फणान्सप्तान्श्च स्नापयेत् ।
सद्यदुग्धेन पूर्णेन रेवत्याः मस्तके स्थितान् ।
सप्त संख्यान्भणांश्चापि स्नापयेद्भिन्नमंत्रतः ॥
तथैव वलदेवं च तथैव पुन रेवतीम् ।
भिन्नैश्चतुर्भिर्मंत्रैस्तु चतुः स्थानेषु स्नापनमिति ॥
सर्वान्कामानवाप्नुवन्ति मत्कुले प्रभवा: जना: ।
मदुक्तविधिना कार्य्याः परिचर्यासु तत्परा: ॥ इतिभट्टोक्तिः

उष्णदुग्धपरिहार: वायुपुराणे—

शेषावतारं देवं च योगमायाविकर्षितम् ।
सहस्रफणसंयुक्तं युगलं मूर्त्तिसंस्थितम् ।
कदा नु भ्रमतो भूत्वा सेवकोऽज्ञानतोऽपि वा ।
आचार्यो शठको वापि स्नापयेदुष्णदुग्धत: ।
उष्णदुग्धकृतस्पर्शो वलदेवस्वरूपक: ।
सकुटुम्बं क्षयं नीत्वा कुष्टीं करोति मानवम् ।
प्रतिमा विघ्नतां याति युगलो संस्थितो हली ।
पापिष्ठो भवते लोके अपराधी तिरस्कृतः ।

अपराधपरिहार: वामनपुराणे—

दंडं संकर्षणस्यापि कृत्वा नैवेद्यद्रव्यकम् ।
पूपपायससंयुक्तं पूर्णदण्डं समाचरेत् ।
इच्छापूर्वकभोगं च हलिने कामनार्पितम् ।
ब्राह्मणान्भोजयेद्यत्र दण्डमुक्तो भविष्यति ॥
तदैव कामनां पूर्णां करोति मूषलायुधः ।

कदा नु समये वापि व्रूत्वा देवाय नाकरोत् ।
नाशो भवति द्रव्याणां मानवस्य न संशयः ॥
दरिद्रं भजते सोऽपि सेवको वाक्यकारकः ।
अमन्त्रणं कृतं शेषं नैव कुर्य्यान्निवेदनम् ।
सकलं चयमाप्नोति वामनो वलीमव्रवीत् ॥
व्राह्मणान्भोजयेद्यत्र संख्यासाहस्रकानपि ।
अपराधविमुक्तोऽभूद्बलदेवस्य दण्डतः ।
तामेव कामनां पूर्णां करोति मूषलायुधः ॥

इति परिहारनिषेधः ॥

अथ दुग्धमंत्रः "पय" रतृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्तेमनुष्यजाः सोमो दददगन्धर्वाय गन्धर्वोऽदददग्नये रयिं च पुत्राꣳश्चादादग्निर्मह्यमथो इमां" इति पठन् दुग्धेन श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि स्थितान्सप्त फणान्सद्यदुग्धेन सप्तधा स्नापयेत्। ततः पुनरपि सद्यदुग्धमादाय–"इहैवस्तमाव्यौष्टं विश्वमायुर्विष्णु तं क्रील्लतौ पुत्रैः नप्तृभिर्मोदमानाः स्वगृहेषु" इति पठन् रेवत्याः मस्तकोपरि स्थितान्सप्तफणान्सद्यदुग्धेन सप्तनागान् स्नापयेत्। पुनरपि सद्यदुग्धमादाय—"दुग्धमातः प्रजां प्रजनयतु प्रजापति राजसाय समन त्वयँमा अदुर्मंगलीः पतिलोकमाविः—शशन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे" इति मंत्रं पटन् श्रीसंकर्षणं दुग्धेन स्नापयेत्। पुनरपि सद्यदुग्धमादाय "अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः, वीरसूर्द्दवकामास्योनाशंनो भव द्विपद शं चतुष्पदे" इति मंत्रमुच्चरन् दुग्धेन रेवतीं स्नापयेत्।

ततः पंचपलसंख्यकपरिमितं दधि गृहीत्वा—"दधी मां त्वमिद्र मी ꣳ सपुत्रां ꣳ सुभगां कृणु दशास्यां पुत्रा ना धेहि पतिमेकादशं कृधि" इति मंत्रमुच्धरन् श्रीवलदेवोपरि-

स्थितान्सप्तफणान्दधिना स्नापयेत् । ततः पुन र्दधि गृहीत्वा— "दधि" संमातरिश्वा संधाता समुदेष्ट्री दधातु नौ अविभवाभवर्षाणि शतं साग्रं च सुव्रत" इति मंत्रमुच्चरन् रेवत्याः मस्तकोपरि स्थितान्सप्त फणान् दध्ना स्नापयेत् । ततः पुनर्दधिमादाय "प्रातर्यावारगारथ्येव वीराजे वयमावरमास चेथे दधिमेनोऽइव तन्वा आ आ आशुंभ माना दंपती" इमं मन्त्रमुच्चरन् श्रीसंकर्षणं दध्ना स्नापयेत् । ततः पुनर्दधि गृहीत्वा- "दधि" सम्राज्ञीश्वरे भव संम्राज्ञी श्वशुरां भव ननांदरि संम्राज्ञी भव संम्राज्ञी अधितेदषु" इत्यनेन मंत्रेण रेवतीं स्नापयेत् । ततः चतुः पलसंख्यकपरिमितं घृतमादाय—"ध्रुवोधिपोस्यामयि मह्यं त्वादाद्वृहस्पतिर्मया पत्या प्रजावती संजीव शरदः शतं" इत्यनेन मंत्रेण वलदेवस्य मस्तकोपरि स्थितान्सप्त संख्यकान्फणान् घृतेण स्नापयेत् । ततः पुनः घृतमादाय "विहिसोतो रत्नक्षतनेंद्र देवममंसत यत्रामादद्वृषाकपिरर्यः पुष्टेषु मत्सखा विश्वस्मादिंद्र उतरः" इत्यनेन मंत्रेण रेवत्याः मस्तकोपरि स्थितान्सप्तफणान् घृतेन स्नापयेत् । ततः पुनः घृतमादाय—,,अंहो मुचे प्रभरेमा मणीषा मोषिष्ठदावुन्ने सुमतिं गृणानाः इदमिंद्र प्रति हव्यं गृहापषीमहो" इत्यनेन मंत्रेण श्रीसंकर्षणं घृतेन स्नापयेत् । ततः पुनः घृतमादाय—"तेजस्वीं च यशस्वीं च धर्मपत्नीं पतिव्रतां पुत्रान्वहुशः प्रजनयंतु रेवत्यास्तु सदा सुखं" इत्यनेन मंत्रेण रेवतीं घृतेन स्नापयेत् ॥

ततः मधु गृहीत्वा—"अर्यमणं वृहस्पतिमिंद्रं दानाय चोदय वाचं विष्णुं स्मस्वतो सवितारं च वाजिनं" इत्यनेन मंत्रेण श्रीवलदेवस्य मस्तकोपरि स्थितान्फणान्मधुना स्नापयेत् । ततः पुनः मधुमादाय "सोमा पूषणा जननारयीणां जननादिवो

जनना पृथिव्याः जातौ विश्वस्य भुवनस्य गोपौ देवा अकृण्वन्नमृतस्य नाभि" इत्यनेन मंत्रेण रेवत्याः फणान् स्नापयेत्। ततः पुनः मधु आदाय "मधुरग्निरायुष्मान्सवनस्य प्रति रायुष्मान्नेव त्वा युष्मं तं करोमि सोम आयुष्मान् संतु औषधीभिरायुष्मां त्वनेमं त्वायुष्मतं करोमि ते" इत्यनेन मंत्रेण वलदेवं स्नापयेत्। पुनः मधुआदाय "अमृतं पाते भव भर्त्तारमर्धपरायणो भवस्त्वां शुमगापतिव्रता त्वं भवसि लोकेषु स्नाया त्वं मधुना सह" इति पठन् रेवतों स्नापयेत्॥

ततः शर्करां गृहीत्वा "यज्ञऽआयुष्मान्भूमि रक्ष सदक्षिणाभिरायुष्माँ स्तेनत्वायुषयुष्मंतं करोमि" इत्यनेन मंत्रेण वलदेवस्य मस्तकोपरि स्थितान्सप्तसंख्यकफणान् शर्करया स्नापयेत्। ततः पुनः शर्करां गृहीत्वा "शर्करं शूक्र व्रह्मायुष्मांस्तद् व्राह्मणैरायुष्मान् तेन लोकान् धारयायुष्मान् करोमि" इत्यनेन मंत्रेण रेवत्याः मस्तकोपरि स्थतान् नागान् स्नापयेत्। ततः पुनः शर्करां गृहीत्वा "देवाऽआयुष्मन्त स्तेऽमृतेनायुष्मंतस्तेनत्वायुषायुष्मंतं करोमि शुक्रमग्नि रायुष्मान्नित्य हस्तं गृन्हात्येते वै देवा आयुष्मतस्त एवास्मिन्नायुर्दधति सर्वमायुरेति" इति मंत्रं पठन् संकर्षणं स्नापयेत्। ततः पुनः शर्करां गृहीत्वा "घृत शुक्रं निष्पिवत्यायुर्वैधृतममृतꣳ हिरण्यमृता देवायुनिष्पिवति शतमानं भवति शतायुः पुरुषः शतेंद्रिय आयुष्येवेंद्रिये प्रतितिष्ठति" इत्यनेन मन्त्रेण शर्करया रेवतीं स्नापयेत्। ततः आम्रपल्लवदूर्वाकुंरान् गृहीत्वा दक्षिणहस्तेन युगलमूर्त्तिं शेषावतारसंकर्षणं श्रीवलदेवमभिषिंचेत्। सप्तपलजलं गृहीत्वा—"सप्त तेऽग्ने समिधः सप्त जिव्हाः सप्त ऋषयः सप्त धाम प्रियाणि सप्त होत्राः सप्तधा त्वायजंति सप्तयोनीरापृणस्वा घृतेन स्वाहा"—

"सुरास्त्वामभिषिंचंतु ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः ।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणो विभुः ॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च जायते विजयाय ते ।
आखण्डलोऽग्निर्भगवान् यमो वै निऋतिस्तथा ॥
वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः ।
ब्रह्मणा सहिताः सर्वे दिग्पालाः पान्तु ते सदा ॥
कीर्त्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा भक्तिः श्रद्धा क्रिया मतिः ।
बुद्धि र्लज्जावपुः शान्तिस्तुष्टिः क्षान्तिश्च मातरः ।
एतास्त्वामभिषिंचन्तु धर्मपत्न्यः समागताः ।
आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधजीवसितार्कजाः ।
ग्रहास्त्वामभिषिंचन्तु राहुकेतुश्च तर्पिताः ।
देवाः दानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ।
ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च ।
देवपत्न्यो द्रुमाः नागाः दैत्याश्चप्सरसां गणाः ।
अस्त्राणि सर्व शास्त्राणि राजानो वाहनानि च ।
औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये ॥
सरितः सागराः शोणास्तीर्थानि च ह्रदा नराः ।
एतास्त्वामभिषिंचन्तु सर्वकामार्थसिद्धये ॥

इत्येभिर्मन्त्रैराम्रपल्लवेन सप्त जलेन श्रीयुगलमूर्त्तिं शेषावतारं वलदेवं मार्जयेत् । ततः संस्कृतं सर्वतोभद्रघटजलं सर्वघटेषु प्रक्षिपेत् । तत्राष्टदिक्षु अष्टघटेषु अनुक्रमेण सर्वौषधिर्महौषधि-वीजाष्टकनवरत्नं पुष्पं फलं गंधं चन्दनं प्रक्षिपेत् । नवमघट-मग्रे दशमं सहस्रधारकलशं निधाय तत्र नवमकलशजलेन दूर्वापुंजसहितेन चतुर्दश फणसहितसर्वांगयुगलमूर्त्तिं श्रीवल-देवं शेषावतारं स्नापयेत् । आपोहिष्ठेति त्रिभिर्वारैः पठित्वा "आपोहिष्ठामयो भुवः तान्ऽऊर्जेदधातन महेरणाय चक्षसे योवः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते हनः उशतीरिव मातरः

तस्मा अरंगमामवः यस्य क्षयाय जिन्वथ आपोजन यथाचनः" इति युगलमूर्त्तिं चतुर्द्दश फणसहितं स्नापयेत् ।

ततः पूर्वदिशि स्थितं कलशं सर्वौषधिद्रवसहितं गृहीत्वा—"या आषधो पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुग पुरामनै तु वभ्रूणा महं सतधानि सप्त च अस्मै देवासो वपुषे चिकित्सतया माशिरा दंपती वामष्मुतः" इति पठन् युगलमूर्त्तिं स्नापयेत् । सहस्रफणसंयुक्तसर्वांगमेव स्नापयेत् । ततः कर्त्तव्यता भिन्नः

रोमशिखा मुरामांसी (वचा कुष्ठं) शैलेयं रजनी द्वयम् ।
सरी चंपक मुस्तं च सर्वौषधिगणः स्मृतः ॥

विष्णुयामले—

मन्त्रौ द्वौ युगलावुक्तौ मूर्त्योश्च युगलस्थयोः ।
रेवतीहलिनोरेव फणसंयुक्तयोस्तथा ।
स्वरूपाचलयोरेव शिलापृष्ठस्थयोरिति ॥
अभिषेकस्य प्रारम्भे ताम्रपात्रे शिलां धृतः ।
शालिग्रामाभिधानां तां विष्णोश्चक्रेण लाञ्छिताम् ।
गण्डकीतीर्थसंभूतां श्यामवर्णसमन्विताम् ।
एकं स्वरूपं संपूज्य द्वितीयं परिवर्जयेत् ॥
संस्कृत्य युगलां मूर्त्तिं पूर्वमेव क्रमेण च ।
प्रथमं बलदेवं च सप्तभिस्तु फणैः सह ।
ततस्तु रेवतीं लक्ष्मीं गौरांगारुणवर्णकाम् ।
फणैश्च सप्तभियुक्तां स्नापयेद्विधिवत्ततः ।
पश्चाच्छालिग्रामं स्नायाद्विधिपूर्वं क्रमात्ततः ।
क्रमस्य व्यतिरेकं च कदा नु भवेत यदि ।
सकला निष्फला जाता कामना विधिपूर्वका ।
प्रतिघोररूपेण सा संस्थिता भयकारिणी ।
दरिद्रपरिपूर्णश्च सेवको विधिकारकः ॥ इति बृहन्नारदीये ।

ततः महौषधिद्रव्यरससहितं घटं गृहीत्वा प्रथममेव श्रीसंकर्षणं स्नापयेत्। "पुमान् पुत्रो जायते मंगलीभिर्विदतेव स्वथ विश्वे अरपा एधते गृहः, इमा ७ृ स आशीर्वा या दंपती वा मश्नुतामरिष्टो रायः सचंता ७ं समोकसा" इति मंत्रं पठन् सप्तफणसहितं बलभद्रं स्नापयेत्। ततः शालिग्रामं स्नापयेत्। ततः पुनरपि महौषधिघटमादायार्द्धजलेन रेवतीं स्नापयेत्। "य आर्षिचत्सदुग्धं कुंभ्या सहेष्टे न यामन्त मतिं जहातुसः सर्पि ग्रीवा पोवर्यस्य जया पीवानः पुत्रा अकृशासो अस्य स्वधा" इत्यनेन मन्त्रेण सप्त फणसहितां रेवतीं स्नापयेत्। ततः पुनरेवतीमेव घटमादाय "धाता प्रजाया उत्तराय ईशे धातेदं विश्वं भुवनं जजान" इति मन्त्रं पठन् अर्द्धप्रमाणेन जलेन सप्त फणसहितां रेवतीं स्नापयेत्। मत्स्यपुराणे—

वज्रमौक्तिकपुष्पार्थं विद्रुमं पद्मरागकम्।
नीलमाणिक्यतश्चैव माणिक्यं स्वर्णमेव च।
नवरत्नमिति प्रोक्तं सर्वदेवाश्रयं महत्॥ इति

मात्स्योक्तनवरत्नम्॥

ततः पंचाशदधिकपुष्पयुक्तं कलशं गृहीत्वा—"धाता पुत्रं सरस्वत्यै यजमानाय दाता तस्मा उहव्यं घृतवद्धिधेम, भैषज्येन दधातु धाता रयिं नो प्राची जीवातुमक्षितां" इत्यनेन मन्त्रेण सप्तफणसहितं शेषावतारं श्रीवलदेवमर्द्धपरिमाणजलेन स्नापयेत्। ततः पुनः रेवतीमेव घटमादाय "वीर्यापानाद्याभिषिंचामि वयं देवस्य धीमहि सुमति ७ं सत्यराधसः, धाता दधातु दाशुषे वसूनि प्रजाकामाय मोढुषेडुरोणे" इतिमंत्रं पठन् सप्तफण सहितां रेवतीं स्नापयेत्। ततः पुनः शालिग्रामं स्नापयेत्। ततः फलयुक्तं कलशं गृहीत्वा तस्मात् कलशादर्द्धं जलमादाय "तस्मै देवा अमृता संव्ययंतां विश्वे देवासो अदि-

तिः स जोषा:" इत्यनेन मन्त्रेणार्द्ध जलेन संकर्षणं सप्तफणसहितं स्नापयेत्। ततः पुनः रेवतीमेव कलशमादाय "शतायुधायु शत वीर्याय शतो तयोभिमतिषाहे, शतं यो र नः शरदो अजोतानिंद्रो नेषदति दुरितानि विश्वा" इत्यनेन मन्त्रेणार्द्धजलेन सप्तफणसहितां रेवतीं स्नापयेत्। ततः पुनः शालिग्रामं स्नापयेत्। गन्धोदकयुक्तं कलशं गृहीत्वा गायत्रीमन्त्रं पठन् युगलमूर्त्ति स्नापयेत्।

विष्णुधर्म्मोत्तरे—

चन्दनागरुकर्पूरमिश्रो गन्धमिहोच्यते।

ततश्चन्दनोदकघटमादाय "य चत्वारः पथयो देवा याना अंतरा द्यावा पृथिवी वियंति" इत्यनेन श्रीवलदेवं स्नापयेत्। ततः पुनरिदं घटमादाय "एषां यो अज्यानि मजोतिमावहात्तस्मै नो देवा: परिदत्तेह सर्वे" इत्यनेन मन्त्रेणार्द्ध जलेन सप्तफणसहितां रेवतीं स्नापयेत्। ततः सहस्रधारकलशे सर्व्वौषधिगणं महौषध्यष्टकं वीजाष्टकं सर्वरत्नानि पुष्पाणि फलानि प्रक्षिप्य तां "सवितु वरेण्यस्य चित्रामाह ग्रीष्मोहेमंत उतनो वृणे सुमति विश्व जन्यां वसंतः, यामस्य काण्वो प्रदुहत्, प्रयाणां शरद्वर्षाः सुतन्नो सहस्रधारापयसा महीगां" इति मन्त्रं पठन् सहस्रधारकलशेन सहस्रधाराभिर्द्वयोर्युगलमूर्त्तिं स्नापयेत्। ततः पुनः शालिग्रामं स्नापयेत्। ततः पुनः "अस्तुतेषामृतूनाँ शतशारदानां" इति पठन् पुनः स्नापयेत्। ततः पुनः "सुमंगली" रिति पठन् स्नापयेत्। ततः पुनः "विवात एषा मभये स्याम आव्रह्मन्निति" पठन् वीजाष्टकेन स्नापयेत्। ततः पुनः "हिरण्याक्ष" इति पठन् नवरत्नानि स्नापयेत्। ततः पुनः पुष्पोदकेन स्नापयेत्। "अग्नये यसस्विन्य शसेममर्यथेन्द्रावती मर्पाचती इहावहः" ततः पुनः फलोदकेन स्नापयेत्। केचित्सह-

स्रधारकलशेन सर्वौषध्यादि प्रक्षिप्य तत्तन्मन्त्रैः पटलैः स्नापयेयुः। अपरे सहस्रधारकलशे पूर्वं शुद्धोदकेन स्नापयेयुः। ततः सर्वौषधिप्रभृतीनां प्रत्येकं प्रत्येकं स्नापयन्ति। ततः पुनः सहस्रधाराघटेनैव शुद्धोश्केन स्नानं श्रीयुगलमूर्त्तिं कारयेत्। "एतान्विंद्र स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना शुद्धैः रुक्मैर्वा वृद्धां स शुद्ध आशीर्वान्मम रुद्रः शुद्धो न आगहि शुद्ध शुद्धाभिः भूतिभिः शुद्धो रयिं निधारय शुद्धो ममद्धि सौम्यः इन्द्रः शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दासुषे शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं शिखाभासे" इति मन्त्रं पठन् द्वयोर्श्रीवलदेवरेवत्योर्युगलमूर्त्तेः षडाशीत्युत्तर नवशतसहितचतुर्दशफणैः संयुक्ते शिखाभागे स्नापयेत्। ततो वस्त्रेण मार्जनम्। ततो न्यासं कुर्य्यात्। ततो युगलमूर्त्तोर्वस्त्राण्यादाय "अभिवस्त्रा सुवसनान्यर्षाणि धेनुः सुदुधी पूर्यमाणा अभिचंद्रां तर्त्तय वे माहिरण्येभिश्च पथिनो देव सोम" इति युगलमन्त्रं पठन् युगलमूर्त्तये वस्त्राणि दद्यात्। ततः सहदेवी—सदाभद्रासूर्य्यावर्त्ता कुशाग्रकैः शिरीषरजनीभ्यां निर्मथ्य निवराजीलवणराजीसर्षपैर्द्दृष्टिमुत्तार्य तोयादौ प्रक्षिपेत्। ततः सिंहासने श्रीशेषावतारं संकर्षणं युगलमूर्त्तिं दृढासनविधानेन श्रीवलदेवमुपवेश्य पाद्यादिभिरुपचरेदिति। ततः गंधादिभिः श्रीवलदेवस्य पाणिस्थमायुधं हलं प्रपूजयेत्। ब्रह्माण्डपुराणे—

कालिन्दी कर्षिता येन भूम्यां सम्पत्तिदायक!।
गोपुत्राभ्यां प्रवाहस्त्वं हलायुध नमोऽस्तुते॥
वलदेवस्य पाणिस्थस्तस्माज्जीवंति याः प्रजाः।
समृद्धान्तस्य कर्त्तस्त्वं ललिताग्रामरक्षकः॥
निर्मितो रजतेनापि रचितो हलिना स्वयम्।
त्वयायुध प्रभावेन हली नाम करिष्यसे॥

सर्वमंगलमांगल्य हलायुध नमोऽस्तु ते ॥ इति
हलायुधं प्रार्थयेत्। ततः गन्धादिभिर्मूशलायुधं प्रपूजयेत्।

सुवर्णनिर्मितो देव हलिनो मूशलायुध !।
बालस्य षष्ठिकां रक्ष सर्वदा नवघातकः ॥
प्रलम्बदैत्यप्राणान्तः कर्त्तस्त्वं मूशलायुध !।
सर्वमंगलमांगल्य सर्वसौभाग्यदायक !।
धन्य स्वच्छकृतः श्रीमान् शेषायुधं नमोऽस्तु ते ॥

इति स्कंदपुराणोक्तमन्त्रेण मूशलायुधं प्रार्थयेत्। ततो मंगलार्थं नारिकेरफलान्वितं तृतीयकलशं स्थापयेत्। घटस्य निषेधः स्कांदे—

पूर्वमेव प्रतिष्ठायामुत्सर्गे स्थापने कृते।
वार्षिकाख्येऽभिषेके च नैव प्रोक्ता त्वियं विधिः।
शिलापृष्ठे च रेवत्या सहिते मूशलायुधः।
मूर्त्तिस्तु युगलस्था च तस्मात् कारणतः कृता।
त्रयो घटाः शुभाः प्रोक्ताः गणेशेन च धीमता।
अन्यथा केवला मूर्त्तिरेकश्चापि स्वयं हली ॥
भिन्नावतारमूर्त्तिस्तु रेवत्या रहितस्तदा।
येषु येषु च स्थानेषु बलदेवस्य मूर्त्तयः।
नन्दग्रामादिके स्थाने गोष्ठीस्थानेषु देवस्य।
बलदेवाभिषेकेऽस्मिन् विधिरेषा उदाहृता ॥

इति स्वरूपनिषेधः। भविष्योत्तरे—

भिन्नावतारो दम्पत्योः स्त्रीपुंसोर्यदि जायते।
द्वौ घटौ भवतस्तत्र युगलव्यतिरेकतः।
स्त्री पुंसयोः शिलापृष्ठे युगला मूर्त्तिसंस्थिता।
सार्द्धमेकावतारे च युगलेन स्थिते हरौ।
त्रयो घटाः भविष्यन्ति शुक्रेण कथिताः शुभाः।
श्रीकृष्णाद्यवतारेषु मूर्त्तिषु युगलेषु च।
विधिरेषा शुभा प्रोक्ता बलदेवाभिषेचने ॥ इति घटनिषेधः॥

ततस्तत्रैव न्यासपूजादिकं कुर्य्यात् । ततोऽजनतिलककुंकुम-यज्ञोपवीतमालाभरणादिना द्वयोर्दम्पत्योर्युगलमूर्त्तो शृंगारं कृत्वा प्रतिसरं वध्नीयात् । एकं घटं अधिदेवताप्रत्यधिदेवता-सहितानां नवग्रहाणां पूजनस्य नारिकेरसंयुक्तं कलशं भवति। द्वितीयकलशं नारिकेरसंयुक्तं सर्वतो–भद्रस्य भवति। तृतीय-कलशं नारिकेरसंयुक्तं मंगलार्थं भवति । ततश्चतुर्द्दश संख्य-कानां फणानां कुंकुमादिगन्धाक्षतादिनैविद्यादिभिश्च रक्षांवंध-नेन पूजां कुर्य्यात् । ततः अनेनैव प्रकारेण युगलमूर्त्तेः पार्श्वे स्थिताश्चतस्रः नागपत्न्यश्चामरान् हस्तेषु गृहीतवत्यः द्वे नाग-पत्न्यौ श्री शेषावतारस्य वलदेवस्य द्वयोः समन्तात्पार्श्वेस्थिते द्वे नागपत्न्यौ रेवत्याश्चमरक रणकेः द्वयोः पार्श्वयोः स्थिते, तासां चिन्हानि द्वौ भागौ दृश्यंते । ताश्चतस्रः नागपत्न्यः सर्वसाम-ग्रीभिः गन्धादिभिरभ्यर्चयेत् । एषां चतुर्णां नागपत्नोनां चिन्हानि पाद्मे—

वलदेवस्य द्वौ पार्श्वौ कथितौ वामदक्षिणौ ।
तयोः द्वयोः स्थिते पत्न्यौ हस्तस्थे चामरे द्वये ।
सुखमत्यन्तकुर्व्वन्त्यौ वलदेवस्य वल्लभे ।
तयोश्चिन्हानि दृष्ट्वाथ पूजयेद्विधिपूर्वकम् ।
भिन्नत्वेन नमस्कृत्य हस्तयोश्चामरौ धृते ।
रेवत्याश्च द्वयोः पार्श्वे वामदक्षिणयोरपि ।
द्वये पत्न्यौ नमस्कृत्य चामरौ हस्तग्राहके ।
नागपत्न्यौ पृथक् पूज्ये गन्धादिभिः समस्तकैः ।
विधिवत्ते प्रपूज्ये च रेवत्यानंददायके ।
अनेनैव प्रकारेण पूजनं सफलं भवेत् ॥

इति नागपत्नीपूजनम् । एवं विधानेन हलमुशलायुधौ संपू-ज्यौ । पाद्मे पातालखंडे—

शेषावतारेण जगत्सु भूयाज्जन्मोत्सवं पूजननागपत्न्योः ।
शेषस्य पूजा जगति प्रकाशिता कुर्य्यान्मनोर्थां ल्लभते च नार्य्यः ॥
सद्येन दुग्धेन प्रपूजनं कृतं वर्षैदपि वर्षादपि मंगलं शुभम् ।
नागानां स्थानवासेषु सद्यदुग्धेन सेचनम् ।
कुरुते सकला नारी मंगलं वार्षिकं भवेत् ।
कदा नु कुरुते नारी नागानां पूजनं शुभम् ।
कुलधर्मविधानेन कुष्ठिनी भवते सदा ।
पर्य्यन्तं वार्षिकं यावत्पीडा भवति मन्दिरे ।
कुटुम्बेषु महापीडा दरिद्रो वसते सदा ॥

इति पूजाविधिनिषेधः ॥

अथ पंचमीनिर्णयः—वायुपुराणे—

श्रावणस्य सिते पक्षे चतुर्थी कलया युता ।
पंचमीक्षय धौमेन चतुर्थी परिपूरिता ।
द्वितीयेऽहनि षष्ठी च केवला यदि जायते ।
तदा च पूर्वविद्धा च पंचमी शुभदा भवेत् ।
जन्मोत्सवं सदा कार्य्यं वलदेवस्य कामदम् ।
पंचमी षष्ठिकाविद्धा परविद्धा शुभप्रदा ।
हस्तानक्षत्रसंयुक्ता शिवयोगसमन्विता ।
जन्मनि वलदेवस्य उत्सवं सकलं शुभम् ।
भविष्योत्तरे—पंचमी वृद्धिमाप्नोति द्वितीयेऽहनि जायते ।
रविवारसमायुक्ता हस्तनक्षत्रसंयुता ।
षष्ठी विद्धा यदा कार्य्या जन्मोत्सवसुखप्रदा ।
नागानां पूजनं शस्तं वलदेवाभिषेचनम् ॥
स्कान्दे—सूर्य्योदयवेलायां तु पंचमी किंचिद्दृश्यते ।
परविद्धा सदा ग्राह्या वलदेवस्य जन्मनि ।
अरुणोदयवेलायां पंचमी यदि जायते ।
षष्ठी तु केवला ग्राह्या सूर्य्योदयप्रवर्त्तिता ।
चतुर्थ्यां सर्वभोग्या स्याद्धस्तनक्षत्रसंयुता ।

पूर्वविद्धा सदा ग्राह्या वलदेवस्य जन्मनि ॥
नागानां पूजनं कार्य्यं वलदेवाभिषेचनम् ॥
ब्राह्मे—द्वितीयेऽहनि संप्राप्ता वृद्धा भवति पंचमी ।
षष्ठी विद्धा सदा कार्य्या ललिताग्राममन्दिरे ।
परविद्धा शुभा प्रोक्ता शेषजन्मनि चोत्सवे ।
रविवारसमायुक्ता शिवयोगसमन्विता ।
हस्तानक्षत्रसंयोगे रोहिणीतनयोऽभवत् ॥
मात्स्ये—चतुर्थ्यां सकला भोग्या पंचमी पूर्णतः शुभा ।
हस्तानक्षत्रसंयुक्ता द्वितीये षष्ठिका यदा ।
पूर्वविद्धा तदा कार्य्या देवजन्मनि चोत्सवे ।
शुभा प्रोक्ता ऋषिगणैः बलदेवस्य जन्मदा ॥
विष्णुधर्म्मोत्तरे—
वलदेवस्वरूपाणां यत्र यत्रास्ति मन्दिरे ।
तत्र तत्रैव संप्रोक्ता परविद्धा शुभप्रदा ।
पंचमी क्षयसंयोगे धौमेन सकला गता ।
चतुर्थी कलयाविष्टा सकला पंचमी यदि ।
पूर्वविद्धा सदा कार्य्या वलदेवस्य जन्मनि ।

यदा श्रावणशुक्लचतुर्थी किञ्चित् कला वर्त्तते सकला पंचमी यदि नरा अभ्यन्तरे भोग्या भवति द्वितीयवासरे केवला षष्ठी स्यात्तर्हि शेषावतारजन्मनि नागानां पूजने पूर्वविद्धा शुभा भवति । वलदेवस्याभिषेकं शस्तं दोषो नास्ति परविद्धाऽपि अतिशुभदाः सन्ति ।

गारुडे—चतुर्थी कलयाविष्टा पंचमी यत्र जायते ।
द्वितीयेऽहनि वर्त्तते पंचमी कलया युता ।
सूर्य्योदये प्रवर्त्तिते पंचमी पलमात्रतः ।
परविद्धा सदा ग्राह्या मुशलायुधजन्मनि ।
एवं विद्धा चतुर्थी स्यात्पंचमी ईदृशी भवेत् ।
चतुर्थी विद्धसंकार्ये त्वशुभा दुःखदा स्मृता ।

एतादृशे च संयोगे कुरुते जन्मपूजनम् ।
निष्फलं पूजनं जातं सकलेष्टं विनश्यति ।
विष्णुसम्बन्धिनश्चापि चोत्सवाश्च व्रताः भवन् ।
परविद्धाः गृहीतास्तु समस्तसुखदायकाः ।

इति पंचमीनिर्णयः ॥

अथ रक्षाबन्धनस्य निषेधः । वामनपुराणे—

श्रावणशुक्लपंचम्यां हस्तानक्षत्रसंयुते ।
यजुर्वेदात्मकानां च विप्राणामृषितर्पणम् ।
रक्षायाः बन्धनं शस्तं ब्राह्मणानां च दक्षिणा ।
कथितं वामनेनापि चतुर्वेदात्मकेषु च ।
श्रावणस्य दशम्यां तु शुक्लपक्षे यदा भवेत् ।
ज्येष्ठा नक्षत्र संयुक्ते रक्षाया बन्धनं शुभम् ।
सामवेदात्मकाणां च विप्राणां सुखदायकम् ।
ऋग्वेदाथर्वाणानां च विप्राणां कथितं शुभम् ।
रक्षाया बन्धनं श्रेष्ठमृषीणां तर्पणं तथा ।
श्रावणशुक्लपूर्णायां श्रावणेन समन्विते ॥

हेमाद्रौ—विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्यात्त्रिषु पर्वेषु संततम् ।
श्रावणस्य सिते पक्षे पंचमी तुर्यसंयुता ।
व्यतीतेऽवसरे भद्रा रक्षाया बन्धनं कृतम् ।
भद्रायां नैव कुर्वन्ति मुनीनां वचने यथा ।
कदा नु कुरुते यस्तु रक्षाया बन्धनं शुभम् ।
आयुः क्षीणं धनक्षीणं कलहं गृहमन्दिरे ।
दशम्यां पूर्वविद्धायां भद्रायाः रहिते यदि ।
रक्षाया बन्धनं शस्तं धनधान्यशुभप्रदम् ।
भद्रायां कुरुते यस्तु रक्षाया बन्धनं कृतम् ।
धनधान्यं क्षयं नीत्वा दरिद्रं वार्षिकं भवेत् ।
वर्णानां च चतुर्णां च विप्रादीनां प्रकाशितम् ।
रक्षाया बन्धनं राजन्पूर्णिमायां च निर्मले ।

भद्राया रहिते काले मंत्रेणानेन बंधयेत् ।
मंत्रः–येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ।
एतत्त्वं प्रतिबध्नामि रक्ष मा चल मा चल ॥१

इति वामनपुराणे वामनोक्तमंत्रेण चतुः वर्णानां रक्षाबंधनं कुर्यात् ।

आदिवाराहे–प्रसवसमये प्राप्ते शेषनग्नस्वरूपधृक् ।
सर्वेभ्यश्चागतेभ्यश्च दर्शनं स ददौ हली ॥
आरात्रिकं यदा कुर्यात्प्रसवसमये यदि ।
दर्शनं दास्यमानोऽसौ प्रथमं चैकतः कृतः ॥
पश्चात्शृंगारपर्यन्तं द्वितीयारात्रिकं भवेत् ।
दर्शनं सर्वलोकेभ्यो दीयते मुशलायुधः ।
बालकं योगिनं कृत्वा जन्मोत्सवमकारयेत् ।
मुखमण्डितरूपं च नृत्यमानं सदाशिवम् ।
निछावरिपरिधानं दत्वा तस्मै प्रतोषयेत् ।
योगी संतुष्टमानोऽसौ मन्दिरे शुभदो भवेत् ।

इति लैङ्गे । तथाहि पीतडोरकं गृहीत्वा "विश्वेत्ताते सवनेषु प्रावाच्याया चकर्थ मघवन्निद्रसुन्वते पारावतं यत्पुरुसंभृतं वस्वपा वृणोः शरभाय्ऋषि बंधवे, यज्ञेन यज्ञमयजंत देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्, तेहनाकं महिमानः सचंत यत्र पूर्वे साध्याः संति देवाः, बृहत्साम क्षत्रभृद्वृद्धवृष्ण्यं त्रिष्टुभौ जः सुभितमुग्रवीरं इन्द्रस्तोमेन पंच दशेन मध्यमिदं वातेन सगरेण रक्ष" इति यजुर्वेदोक्तमन्त्रान्नुच्चरन् श्रीभगवतः शेषावतारस्य संकर्षणस्य बलदेवस्वरूपिणः दक्षिणहस्ते बध्नीयात् रेवत्याः वामकरे बध्नीयाच्च ॥

तत आदर्शं गृहीत्वा—"प्रतिपदसि प्रतिपदेत्वामनुपदस्य अयं मूर्द्धा परमेष्ठी सुवर्चाः अनुपदे त्वा संपदसि समानाना मुत्तम श्लोको अस्तु संपदे त्वामनुपदस्य अयं मूर्द्धा परमेष्ठी सुवर्चाः

अनुपदे त्वा संपदसि समानाना मुत्तम श्लोको अस्तु० संपदे त्वा तेजोसि तेजसेत्वा" इति मंत्रमुच्चरन् श्रीयुगलमूर्त्तिभ्या-मादर्श दशयेत् । ततो भूषणादीनां गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य- "श्रीशेषावतार भगवन् श्रीवलदेवस्वरूपिन् युगलमूर्त्ते इदं पुष्पं षडशीत्युत्तरनवशत ९८६ फणसहितचतुर्दशफणान् वि-भ्रन् तुभ्यं निवेदयामि" इति सर्वाण्याभरणानि युगलमूर्त्तिभ्यां निवेदयेत् । ततो धूपदीपादिकं कृत्वा ततः पूपादिविविधनैवेद्य समर्पयेत् । ततस्ताबूलवोटिकाश्चतस्रः चतुर्णां नागपत्नीणां हस्तेषु चतुर्ध्र दत्वा पुनः नागपत्नीनां हस्तेभ्यस्ताम्वूलवीटिकां गृहीत्वा मूर्त्तिभ्यां दद्यात् । श्रीवलदेबस्य हस्ते एकवीटिकां दत्वा रेवत्याः द्वयोर्हस्तयोः द्वे वीटिके दद्यात् । ततः दूर्वा-पुंजमाम्रपल्लवं गृहीत्वा श्रीशेषावतारस्य युगलमूर्त्तेरभिषेक "समुद्रज्येष्टा" इत्यादिभिर्मंत्रैस्तु कुर्यात् । ततः पुनरेभिर्मंत्रै-र्युगलमूर्त्तिं पुनरभिषिंचेत् ।

ग्रहाणामादिरादित्यो लोकरक्षणकारकः ।
विषमस्थानसंभूतां पीडां दहतु ते विधुः ॥
भूमिपुत्रो महातेजा जगतां भयकृत्सदा ।
सुवृष्टिदृष्टि हर्त्ता च पीडां दहतु ते कुजः ॥
उत्पातरूपो जगतां चन्द्रपुत्रो महाद्युतिः ।
सूर्यप्रियकरो विद्वान् पीडां दहतु ते बुधः ॥
देवमंत्री विशालाक्षः सप्तलोकहिते रतः ।
अनेकशिष्यसंपूर्णः पीडां दहतु ते गुरुः ॥
दैत्यमंत्री गुरुस्तेषां प्राणदश्च महामतिः ।
प्रभुस्ताराग्रहाणां च पीडां दहतु ते भृगुः ॥
सूर्यपुत्रो दीर्घदेही विशालाक्षः प्रियाप्रियः ।
मंदवारः प्रसन्नात्मा पीडां दहतु ते शनिः ॥

अनेकरूपवर्णैश्च शतशोऽथ सहस्रशः ।
उत्पातरूपो जगतां पीडां दहतु ते शिखी ॥
आरोग्यं सविता करोतु भवतामिन्दुर्यशो निर्मलं
भूतिं भूमीसुतः सुधांशुतनयः प्रज्ञां गुरुर्गौरवम् ।
काव्यः कोमलवाग्विलासमतुलं मंदो मुदं सर्वदा
राहुर्बाहुबलं करोतु सततं केतुः कुलस्योन्नतिम् ॥

इत्येभिर्मंत्रैस्तु श्रीयुगलमूर्त्तिं संकर्षणमभिषिंचेत् । इत्येवं विधानेन नन्दग्रामादिषु श्रीशेषावतारस्य श्रीबलदेवस्य व्रक्षमोणगोष्ठीस्थानेषु नरीपुर्य्याख्यश्रीकृष्णावतारोद्भवस्थानेषु श्रीबलदेवस्वरूपमूर्त्तिस्थितानां जन्मोत्सवे एषः विधिरुदाहृता ॥ ततः सर्वे ऋषिस्वरूपाः ब्राह्मणाः पीताक्षतान् दक्षिणहस्तेषु गृहीत्वा श्रीयुगलमूर्त्तिभ्यां श्रीबलदेवरेवतीभ्यां मंत्राक्षतान् दद्युः ॥ मंत्र—अद्धीदिंद्र प्रस्थिते माहवोऽ षिचिनो दधिस्व पचतोत सोमं प्रयस्वंतः प्रति हर्यामसित्वा सत्याः संतु यजमानस्य कामाः सहस्राक्षण शतशारदेन शतायुषा हविषाहीर्षमेनं पुनर्दुः आहार्षंत्वा विदंत्वा पुनरागाः पुनर्नव सर्वांग सर्वं ते चक्षुः सर्वमायुश्चते विदं आयुष्मंतं वर्चस्वंतं ज्योतिष्मंतं अधिपतिं विशां अस्याः पृथिव्याध्यक्षं इमामिन्द्रवृषभं कृणु पूष्णः पौषेण मह्यं दीर्घायुत्वाय शतशारदाय शत ꣳ शरद्भ्य आयुषे वर्चसे जीवात्वै पुण्याय एतेन वै देवा जैत्वानि जित्वायं काममकामयंतमाप्नुवन् सजोषाः पौर्णमास्युदगाच्छोभमानाः आप्याययंतो दुरितानि विश्वाउरुं दुहां यजमानाय जज्ञं अपश्यंत्वा मनसा चेकितानं तपसाजातं तपसो विभूतं इह प्रजामिहरयिꣳरराणः प्रजायस्व प्रजया पुत्रकाम, सहस्रमाख्यात्रे दद्या च्छातं प्रतिगरित्र एतै चैवासने श्वेतश्चा श्वतरीरथो होतुः पुत्रकामाहाप्याख्यापये रंलभंतेह पुत्रान्सर्वस्याप्त्यै सर्वस्यजित्य

सर्वमेवतेनाप्नोति सर्वं जयति" "मंत्रार्थाः सफलाः संतु पूर्णाः संतु मनोरथाः। शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तथा" एभि ऋग्भिर्मंत्राक्षतान् युगलमूर्त्तिभ्यां दद्युः। श्रीयुगलमूर्त्तेर्वलदेवस्य मस्तके धार्याः रेवत्या अंके चले निधाय ततः मन्दिरस्योपरि शिखरिस्थाने ध्वजादण्डं पताकामारोपयेत्। ततः आरार्त्तिं द्वितीयाभिषेकस्य कुर्य्यात्। ततः एभिः ऋग्भिर्मंत्रैः श्रीशेषाबतारस्य युगलमूर्त्तेः श्रीवलदेवस्य नैवेद्यप्रसादं श्रीलक्ष्मीनारायणस्वरूपेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः भोजनान् कारयिष्ये। तत्र यजुर्वेदोक्त—मंत्रा—

एको विष्णु महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः।
त्रीन् लोकान्व्याप्य भूतात्मा भुंक्ते विश्वभुगव्ययः॥

अनेन ब्राह्मणसमाराधनेन श्रीगोपोजनवल्लभः अस्मिन्मन्दिरे त्रिवेण्यास्तटस्य निकटस्थले लाडिलेयस्वरूपः श्रीकृष्णः पुनः श्रीशेषावतारयुगलमूर्त्तिर्वलदेवस्वरूपः प्रसन्नः सन्सर्वदा प्रीयतां „ओं उपास्मैं गायता नरः पवमानायेंदवे अभिदेवाँ इयक्षते, अभिते मधुना पयोथर्वाणो अशिश्रयुः देवं देवाय देवयु सनः पवस्व शंगवे शंजनाय शर्मवते शंराजन्नोषधीभ्यःवभ्रवेनु स्वतवसे रुणाय दिविस्पृशे सोमाय गाधमर्चत हस्तच्युतेभिरद्रिभिः सुतं सोमं पुनीतन मधावातावता मधु ओदनमुद्ब्रुवते परमेष्ठी वा एषः यदोदनः परमामे वैनꣳश्रिय गमयतियंतु नदयो वर्षंतु पर्जन्याः सुपिप्पलाः ओषधयो भवंतु अन्नवता मोदनवता मामिक्षवता एषाꣳ राजा भूयासां सुभोज्यमस्तु" एभिंमंत्रै ऋग्भिः ब्राह्मणान्भोजयिष्ये॥

ब्रह्माण्डे— शेषस्य जन्मनि स्थाने मन्दिरे चोत्सवे तथा।
त्रिवेण्याः निकटे स्थाने ललिताग्रामसंनिधौ।
युगलस्य च नैवेद्यं वलदेवप्रसादकम्।

ब्राह्मणान्भोजयेद्यत्र सर्वकामानवाप्नुयात् ।
अद्यास्मिन् वचनं कृत्वा नारी वा पुरुषो यदा ।
मुण्डनं च विवाहं च धनधान्यं समीक्षयेत् ।
सर्वं च परिपूर्णं च भविष्यति न संशयः ।
चीरजीवी भवेद्बालो परमायुः स जीवति ॥

ब्राह्मे—वंध्या वा मृतवत्सा वा काकवंध्या वा कापि वा ।
पुष्पवंध्या नष्टपुष्पा नारी एतादृशी भवेत् ।
युगलस्य प्रसादेन रेवतीसहितस्य च ।
ललिताग्रामवासस्य पुनरेव प्रसूयते ॥
मनोरथानि सिद्धयन्ति पुरुषैर्वाञ्छितानि च ॥

पाद्मे—ब्राह्मणान्नैव भुंजीयाद्बलदेवस्य जन्मनि ।
उत्सवादिषु शेषस्य ब्राह्मणान्नैव भोजयेत् ।
सकला कामना एषां निष्फला जायते नृणाम् ॥
ब्राह्मणैश्च विना राजन्सेवको भक्षयेत्स्वयम् ।
वल्गुलीयोनिमापन्नश्चाण्डालसदृशो भवेत् ॥

इति यजुर्वेदोक्तशेषसंहितायां श्रीयुगलमूर्त्तिद्विभागकृतषडशीत्युत्तरनवशतसहित ९८६ चतुर्द्दशफणसहितश्रीशेषावतारश्रीबलदेवाभिषेकविधिः संपूर्णम् ॥

अभिषेकनिषेधः विष्णुधर्मोत्तरे—युगलमूर्त्तिस्वरूपे सति—

खण्डिते स्फुटिते त्वंगे स्थानभ्रष्टे च विग्रहे ।
चौरस्पर्शो शूद्रस्पर्शो मृतस्पर्शो यदा भवेत् ।
सिंहासनाद्धस्तपातत्वं गृहीणोऽपि जायते ।
बालस्पर्शे कुचीलत्वादभिषेकविधिः स्मृतः ॥
एतेषु स्पर्शयोगेषु अभिषेकः विधीयते ॥

स्कान्दे—युगलस्पर्शदोषेण सकलस्य कुलस्य च ।
नाशं च विपुलं कुर्यात्पुरुषो स्पर्शकारकः ।
बालस्त्वज्ञानतो दोषात्स्पर्शनं कृतवान् यदि ।

दोषो नास्ति कुलस्यापि दण्डं कृत्वा यथाविधिः ।
नैवेद्यं शतविप्राणां भोजनान् यत्र कारयेत् ।
युगलस्पर्शदण्डाच्च निर्मुक्तो बालको भवेत् ॥
यदा नैव प्रकुर्व्वति बालकस्य पिता तदा ।
अंगहीनो भवेद्बालो विक्षिप्तश्च प्रजायते ।
विक्षिप्तो दुःखसंतप्तो बलदेवं निमंत्रयेत् ।
ब्राह्मणान्भोजयेद्यत्र त्रिवेण्यास्तटमन्दिरे ॥

आग्नये—रेवतीसहितस्यापि युगलस्य निमन्त्रणात् ।
सुबुद्धिश्च भवेद्बालो सुखी च भवते नरः ॥
जन्मोत्सवादिषु कुर्यान्नैव ब्राह्मणभोजनम् ।
परिवारक्षयं नीत्वा सेवको दुःखभाग्भवेत् ॥
उच्चग्रामे विधिः प्रोक्तः बलदेवाभिषेचने ।
उक्तेषु विघ्नकार्येषु त्वभिषेकं न कारयेत् ।
विपरीतं कुटुम्बेषु विरुद्धो वार्षिके भवेत् ॥

विष्णुपुराणे उत्तरखण्डे—

बलदेवाभिषेकस्य युगलस्य विधिः स्मृतः ।
ललिताग्रामवासस्य संपूर्णफलदा स्मृता ॥
तदर्द्धफलदा प्रोक्ता नन्दग्रामे च मन्दिरे ।
नन्दस्य भवने यत्र रुद्रनाम्नि च पर्वते ॥
विराजमानकृष्णस्य समीपं लघुमूर्त्तिधृक् ।
नन्दपत्नीयशोदायाः अंकस्थौ कृष्णरामकौ ॥
केवलैका स्थिता मूर्त्ति रेवतीव्यतिरेकतः ।
श्यामस्वरूपो श्यामांगो कृष्णसांनिध्यवर्त्तकः ॥
अन्योन्यप्रीतिसंयुक्तौ भ्रातरौ रामकृष्णकौ ।
त्रिवेणीमन्दिरस्थाने कृष्णो गौरांगवर्णधृक् ॥
लाडिलेयस्वरूपेण भ्रातुरग्रे स्थितः सुखम् ।
यथैव बलदेवोऽसौ श्यामवर्णस्वरूपधृक् ।
नन्दस्य भवने तिष्ठन् कृष्णादपि लघुर्भवन् ॥

हरिपीठगोत्रोत्पन्नो पर्जन्यो घोषवृद्धकः ।
तस्यात्मजोऽभिमन्युश्च तत्पुत्रो नंदरायकः ॥
नन्दोपनन्दप्रतिनन्दैरधिनंदै विराजते ।
बालस्वरूपधारी च क्रीडते मुशलायुधः ॥
नवनीतप्रियो श्रीमान् यशोदांकं समागतः ।

नन्दोपनन्दप्रतिनन्दाधिनन्दनामानि—ब्रह्मवैवर्त्ते—

नवभिर्नवभिः प्रोक्ताः चतुर्भिरत्र संस्थिताः ।
नन्दः सुमतिः श्रीनंदो महानन्दः सुलष्टिकः ।
कामदो मार्गदो कामी कांचनांग उदाहृताः ॥
नवनन्दाश्च विख्याता अयुतैर्गोभिरन्जिताः ।

एषां पत्नीनां नामानि—

यशोदा सुखदा वामा कामदा सुप्रियार्थदा ।
विमला सुमला भीरु र्नवपत्न्यरुदाहृताः ।

उपनन्दनामानि—

सुनन्दः माधुरो धीमान्सुबुद्धिः सुखदायकः ।
प्रभावोऽनुप्रभावश्च महान्प्रभवो वै विभुः ॥
उपनन्दाः समाख्याताः नव संख्यकसंस्थिताः ॥

प्रतिनन्दनामानि—

प्रतिनंदो सुभावश्च परिभावो सुनन्दकः ।
श्रीप्रदो गोप्रदश्चैव नवनीतप्रदः शुभः ।
धनदश्चेति संख्यकाः नवभिः प्रतिनन्दकाः ॥

उपनन्दानां नवानां पत्नीनां नामानि—

दधिदा दुग्धदा चैव तक्रदा नवनीतदा ।
मनोर्थदा सुवेणी च पुण्यदा वसुदा सुधी ।
नवपत्न्यश्च प्रोक्ताश्चोपनन्दानां समासतः ॥

नवप्रतिनन्दानां नवपत्नीनां नामानि—

मानदा मोददा नंदा प्रियानन्दा शुभप्रदा ।
श्रीमती सुमती दामा भोगदा नवसंज्ञिकाः ॥

नवानां प्रतिनन्दानां पत्नीनां समुदाहृताः ॥

अधिनन्दानां नामानि–विष्णुयामले—

सुवेषो वहुवेषश्च प्रभुवेषस्तथैव च।
वालस्नेही प्रभुस्नेही शुभस्नेही शुभप्रदः।
रतिप्रदश्चाधिनन्दाः नवसंख्यकाः संस्थिताः।
अधिनन्दाः समाख्याताः नन्दग्रामप्रवासिनः॥

एषां पत्नीनां नवानां नामानि—

अधिनन्दा शुभानन्दा सुखानन्दा मनोरमा।
महिमी केलिका रामा प्रमोदी सुखनन्दिनी।
अधिनन्दानामिमाः पत्न्यः गोभिः गोपालैर्वेष्टिताः।
नवकाः नाम संज्ञाश्च पत्नीनां समुदाहृताः॥
उपनन्दाः विराजन्ते गोभिः सप्तसहस्रकैः।
अधिनन्दाः विराजन्ते सार्द्ध द्वयसहस्रकैः।
गोभिश्च शोभन्ते नित्यं नवनीतप्रिये रताः।
रञ्जिताः नन्दग्रामेऽस्मिन्नन्दाद्याः नवसंज्ञकाः।
नवकाः नवकाः प्रोक्ताश्चतुर्भिः संख्यया कृताः।
देवतानां स्वरूपास्ते आभीरवकुलोद्भवाः।
पृथिव्यामवताराः स्युः कृष्णपुत्रस्य वत्सलाः।
तैरेव पितृभिश्चैव कृष्णेनैव समन्वितः।
केवलैकस्वरूपश्च वलदेवो विराजते॥

नन्दग्रामस्थाने वलदेवाभिषेकविधिः।

पाद्मे—श्रावणशुक्लपंचम्यामभिषेको विधीयते।
समयस्य न भेदः स्याद्भेदश्चैवाभिषेचने।
अन्येषूक्तेषु गोष्ठीनां स्थानेष्वेकस्वरूपके।
रेवतीव्यतिरिक्ते च लक्ष्मणस्याभिषेचने॥
या विधिः लिखितास्तत्र तदैवमभिषेचनम्।
नव्यंडपुरगोष्ठे च वलदेवैकरूपके।
अभिषेकविधिश्चायं लक्ष्मणस्याभिषेचने॥
मासभेदस्तिथेर्भेदं नक्षत्रस्यापि भेदकम्।

समयस्यापि भेदं च जन्मनो सर्वभेदकम् ॥
वललक्ष्मणयोश्चैव शेषावतारयोस्तथा ।
अभिषेके न भेदोऽस्ति हलिनो लक्ष्मणस्य च ॥
रामाभिषेके लिखितं लक्ष्मणस्याभिषेचनम् ।
व्रजेषु वलदेवस्य स्वरूपाः शुभदायकाः ॥
सेतुवन्धसमुद्रस्य तटे रामस्य मन्दिरे ।
लक्ष्मणप्रतिमास्तत्र शुभदाः वाञ्छितप्रदाः ॥

व्रजेषु ग्रामेषु माहात्म्यम्—व्रह्मपुराणे—

ललिताग्राममुख्येषु स्थानेषु जन्मनोत्सवम् ।
महत्फलं त्रिवेण्याश्च तटेऽस्मिन्मुनिभाषितम् ॥
तदर्द्धफलमाप्नोति नन्दग्रामेऽभिषेचनात् ।
वालकस्य स्वरूपस्य वलदेवस्य जन्मनि ॥
तदर्द्धं च तदर्द्धं च गोष्ठस्थानेषु जन्मनि ।
उत्सवेषु च कार्य्याच्च स्थानेष्वन्येषु वर्जयेत् ॥
विनोक्तेषु च सर्वेषु मूर्त्तिं शेषस्य कल्पतेत् ।
विना योग्येषु स्थानेषु वलदेवं च कल्पयेत् ।
अकाले मृत्युतां गत्वा प्रेतयोनिमवाप्नुयात् ।
संपत्तिः क्षीयते नित्यं दरिद्रं भजते नरः ।
सेवको वलदेवस्य भक्तिं कर्त्तुमिच्छेदथ ।
आयुधौ वलदेवस्य स्वर्णरौप्येण निर्मितौ ॥
हलमुशलौ महान्तौ पूजयेद्विधिवच्छुचिः ।
नित्यं प्रपूजयेद्भक्त्या धनधान्येन पूरितः ।
परमायुः स जीवति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ।
ज्येष्ठपुत्रो भवेद्धीमान् आयुधस्य प्रपूजकः ॥ इति

वायुपुराणे—स्वयं त्ववतरेद्भूमौ युगलो संस्थितो हली ।
तत्र प्रतिष्ठां कुर्वीत मंदिरे तत्र निर्मिते ।
सिंहासनेऽथ कुर्य्याच्च यंत्रोद्धारं प्रयत्नतः ।
विधिवद् यंत्रं संलिख्य स्थाने तु शेषमूर्त्तिकम् ।

युगलोऽत्र विराजते रेवतीसहितोऽग्रजः ।
दंपत्यो युगलौ यंत्रौ संलिख्य चरणस्थले ।
सिंहासनस्य पीठेऽस्मिन्सर्वत्र शुभदायकौ ॥
चतुः कोणसमाविष्टो मध्ये च सप्तकोष्ठके ।
बलदेवस्य यंत्रेऽस्मिन्पादयोस्तु अधस्थले ॥
बीजाक्षरसमाविष्टो यंत्रोद्धारमिमं शुभम् ।
मंत्रेण संयुतं यंत्रं संलिख्य विधिपूर्वकम् ।

संमोहनतंत्रे—ओं ह्रीं श्रीं क्लीं हं सः इति बीजाक्षरं लिखेत् ।

द्वित्रीणि चतुः सप्त एक पंच च षष्ठकम् ।
हलायुधाय नमस्तुभ्यं मध्ये मंत्रं समुद्धरेत् ।
समन्तान्मंत्रं संलिख्य बलदेवस्य पादयोः ।
ओं युगलो संस्थितो देवः शेषोपत्तालवासिनः ।
अत्रास्थितो महावीरः सुभद्रो भद्रकारकः ॥
इति संलिख्य शेषस्य प्रथमं यंत्रपूर्वकम् ॥
उच्चग्रामनिवासिनं हलधरं गौरांगसंवर्द्धनं
लोकं शोभनकारकं सुवसनं नीलाम्बरं सुन्दरम् ।
रेवत्या सहितं रमापतिप्रभुं कृष्णाज्ञया संभवम्
कालिन्दीजलकेलिनं शुभप्रदं वन्दे त्रिवेणीस्थितम् ॥
इति श्रीबलदेवं ध्यात्वा यंत्रं नमस्कुर्यात् ॥

ततो द्वितीययंत्रं सिंहासने रेवत्याश्चरणयोरधस्तले संलिखेत् ।

पीठाकारं लिखेद् यंत्रं तन्मध्ये वत्तुलं लिखेत् ।
बीजाक्षरं लिखेद्यंत्रं यंत्रोद्धारं च कारयेत् ।
ओं क्लीं श्रीं भ्रीं सौं रौं त्रूीं ह्रीं नमः इति बीजाक्षरः ।
समन्ताद् यंत्रमध्ये तु लिखित्वा मंत्रपूर्वकम् । मंत्रः—
युगले संस्थिते देवि रैवतस्य च कन्यके ! ।
शुभं फलं प्रयच्छतु नमोऽस्तु परमेश्वरीम् ॥
इति यंत्रं समालिख्य नमस्कृत्य च रेवतीम् ।

युग्ममूर्त्तिसमाश्रितां शुभकरीं श्रीरेवतीं श्रीप्रदां
गोधूमारुणवर्णकां सुवसनालङ्कारभूषां प्रियाम् ।
शेषस्याप्यतिवल्लभां भगवतीं स्वर्णाचलं रम्यतां
श्रीगौरांगविवर्द्धनां सुखकरीं वन्दे त्रिवेणीस्थिताम् ॥

इति रेवतीं युगलमूर्त्तिं ध्यात्वा द्वयोर्यन्त्रयोरुपशिलापृष्ठे युगलं संयुक्तस्वरूपं निवेशयेत् ॥ ततोऽन्येषूक्तस्थानेषु श्रीवलदेवस्वरूपं—

दुग्धप्रियं केवलमेकसंस्थितं महावने रम्यवने स्थितं प्रभुं ।
महास्वरूपं कृतवन्तमीश्वरं हलायुधं भोजनपायसान्वितम् ।
नमामि देवं यमुनावने स्थितं प्रजातिरिक्तं वलदेवसंज्ञकम् ।

इति महावनस्वरूपं ध्यात्वा नंदग्रामे श्रीबलदेवस्वरूपं ध्यात्वा—

अष्टावर्षमुपाश्रितं हलधरं श्यामांगरूपं प्रभुं
श्रीकृष्णाल्लघुमूर्त्तिकं प्रियकरं श्रीमातृसंवत्सलम् ।
किंकिण्या परिवेष्ठितं शुभप्रदं ग्रामाभिरामं शुभं
वालं चेष्टितमाशुगं दधिप्रियं वन्दे महावालकम् ॥

ततोऽन्येषूक्तेषु गोष्ठस्थानेषु स्वरूपं ध्यात्वा—(ध्यानं)

गोष्ठालंकृतभूषणं शुभकृतं सूर्यप्रभादीपित
नानाभूषणसंयुतं हलधरं श्रीरेवतीनायकम् ।
नर्य्यादिपुरवासिनं सुखकरं रामं प्रियावल्लभं
वन्दे सुन्दरश्रीमुखं सुनयनं राधाप्रियस्याग्रजम् ॥

इति सर्वेषु गोष्ठस्थानेषु स्वरूपध्यानं ॥

बृहद्गौतमीये द्वात्रिंशे पटले ।

व्रजेषु सर्वेषु च स्थानेषुभवत् गोष्ठीप्रवासेषु च यंत्रमुद्धरेत् ।
मूर्त्तिं प्रतिष्ठां कुरुते च पूर्वकं यंत्रं लिखित्वा प्रतिमां निधाय च ॥

श्रों श्रीं प्लीं सौं इति वीजाक्षरान्संलिख्य एव द्वित्रिचतुर्भिश्च अंकानि क्रमतो लिखेत् ।

मध्ये च मंत्रमालिख्य यंत्रोद्धारं करिष्यसे ॥

मंत्र– श्रीरंकस्थितदेवाय मूर्त्तिकेवलसंस्थिते।
मुशलायुध तुभ्यं ते पातालवासिने नमः॥
मंत्रोपरि स्वरूपं स्थाययेत्॥

मलमासनिर्णयः–भविष्योत्तरे—

द्वौ मासौ श्रावणो भूतौ द्वितीये चैव श्रावणे।
जन्मोत्सवं तदा कुर्यात् युगलस्याभिषेचनम्।
रेवतीसहितस्यापि वलदेवस्य वार्षिके।
प्रथमश्रावणे कुर्य्यात्कदानु परिचारकः।
नरके च महाघोरे पतति सप्त जन्मषु॥ इति
मंत्रोद्धारः॥

श्री संकर्षणस्य श्रीवलदेवस्य शिलापृष्ठियुगलस्य नित्यमेव षोडशोपचारपूजनम्। आदित्यपुराणे–

शिलापृष्ठिस्थितां मूर्त्तिं युगलां हलिनश्च याम्।
अचलामुत्थापितुं नापि तीव्रभारेण संयुताम्।
तस्याचलस्वरूपेण पूजासंस्कारमाचरेत्।
शालिग्रामं पुरस्कृत्य सिंहासनादधस्तले।
आर्द्रवस्त्रेण संकुर्य्यात्सेवाराज समुच्यते।
केषाञ्चिद्देवतानां च त्वचला प्रतिमा स्थिता।
राजसेवा समाख्याता सिंहासने विराजिता॥

यद्वा स्वरूपं धातुमयं पाषाणस्थितमूर्त्तिकं यद्वा स्वरूपं आर्द्रवस्त्रेण संप्रोक्ष्य स्नानादिपरिचर्यया राज़द्वारं समाविष्टो शेषस्य युगलस्य च नित्यमेव स्नपनं कुर्यात्। वलदेवस्य पूजनं मंत्रौ च युगलौ सम्यगुच्चार्य्य मूर्त्तिमर्च्चयेत्।

प्रथमं वलदेवं च मंत्रमुच्चार्य्यं संस्कुरु।
रेवत्याः मन्त्रमुच्चार्य्य रेवतीमर्चयेच्छुचिः।

ततो शालिग्रामं संपूज्य विधिनैव समाचरेत्॥

पश्चात् लाडिलरूपं च श्रीकृष्णस्य स्वरूपकम् ।
स्वर्णादिधातुभिर्युक्तं प्रतिमां निर्मितां यजेत् ।
पश्चात्पित्तलिकास्थाल्यां मण्डलं यन्त्रधारितम् ।
पूजनं चैव कुर्य्याच्च विधिपूर्वं समाचरेत् ।

ततः विष्णुधर्मोत्तरे पूजाक्रमः ॥—

भगवन् शेष पातालादागच्छ युगलस्थित ।
अहं पूजां करिष्यामि ललिताग्रामसंनिधौ ॥ इति–

श्रीशेषावतारसंकर्षणयुगलमूर्त्या आवाहनम् । ततः नेत्रौ निमील्य कुर्यात्—

युगले रेवति देवि पातालस्थितिवासिनि ! ।
अहं त्वां पूजयिष्यामि त्रिवेणीतटसंस्थिते ॥ इति

नेत्रौ निमील्य रेवत्यावाहनं कुर्यात् ॥

सिंहाक्रान्तं सुवर्णस्य पीठं रत्नोपशोभितम् ।
सहस्रफणपत्रस्थे उपविश्यासने प्रभो ॥
अर्द्धासनमुपतिष्ठ प्रसीद परमेश्वरि ! ।
युगले परमामूर्त्ते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ इति

युगलमंत्रमुच्चार्य युगलस्वरूपाय आसनं दद्यात् ।

स्नानार्थं शीततोयानि पुष्पगंधयुतानि च ।
पाद्यं गृहाण देवेश ! भक्तकल्याणकारक ! ॥
भक्तकल्याणि हे देवि ललितासखिपूजके ।
शीततोयकृतं पाद्यं गृहाण परमेश्वरि ! ॥ इति

श्रीयुगलमूर्त्त्येऽर्घ्यं दद्यात् ॥

हलिना कर्षितायाश्च यमुनायाश्च सज्जलैः ।
स्नापितो शेषदेवेश गौरांग ! शान्तिं मे कुरु ।
अर्द्धस्नानजलेनापि स्नापिता परमेश्वरि ! ।
गोधूमांगविवर्णोऽस्मिम् वस्त्रेण परिवेष्टिते ! ॥

इति युगलमंत्रेण शंखोदकेन युगलं दर्शयित्वा शालिग्रामं

स्नापयेत् ।।

जलनिषेध:—श्रीशेषावतारं वलदेवमुष्णजलेन कदानु न स्नापयेत् । शूद्रहस्तरहितेन स्वहस्तानीतेन सद्यजलेन सर्वदा नित्यमेव स्नापयेत् । यदा तु अन्यथा स्पृशेत्तर्हि सेवको कुष्ठी भवति ।

गंगातोयं समानीतं सुवर्णकलशे धृतम् ।
नागेशाचमनं प्रीत्या गृह्यतां मुशलायुध ! ।
जलार्द्धेन तदर्द्धेन गृह्यतां मूर्त्ति संस्थिते ।
नागेश्याचमनं देवि शिलापृष्ठिसमाश्रिते ॥ इति

क्रमेणाचमनम् ।

शीतवातोष्णवर्णानां परलज्जानिवारणम् ।
सुवेषं धारितं नित्यं यस्माद्वासं प्रगृह्यताम् ।
भवति प्रभवे देवि वामांगस्थितरूपिणि ! ।
वासं गृहाण देवेशि ! हलिनोऽर्द्धांगि ते नमः ॥ इति

युगलमूर्त्तये वस्त्राणि परिधापयेत ।

ब्रह्मणा निर्मितं सूत्रं शेषग्रंथिसमन्वितम् ।
यज्ञोपवीतं परमं संकर्षण प्रगृह्यताम् ॥
मुक्ताभिर्रचितां मालां गृहाण भगवत्प्रिये ।
सर्वभूषणसंयुक्ते शेषपत्नि ! नमोऽस्तु ते ॥

इति युगलमूर्त्तये यज्ञोपवीतमालाभरणम् ।

मलयाचलसंभूतं शीतमानन्दवर्द्धनम् ।
काश्मीरवनराजाढ्यं चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥
सिन्दूरकुंकुमं कार्यं परमानन्ददायकं ।
पीतारुणनिभां देवि ! विन्दिकां कुरु चेश्वरि ! ॥

इतियुगलस्य तिलककरणम् ।

नानाविधानि पुष्पाणि ऋतुकालोद्भवानि च ।
मयानितानि सर्वाणि पूजार्थे प्रतिगृह्यताम् ॥

अर्द्धसंभूतपुष्पाणां गृह्यतां मालिकां शुभाम् ।
अर्द्धमालासमायुक्ते प्रसीद परमेश्वरि ! ॥

इति पुष्पम् ।

वनस्पतिसमुत्पन्नं सुगन्धाढ्यं मनोहरम् ।
आघ्राय रेवतीरामौ धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
इति द्वयोर्धूपं दद्यात् ।

घृतवर्त्तिसमायुक्तं तथा कर्पूरसंभवम् ।
दीपं गृहाण नागेश त्रिलोक्यां तिमिरापहम् ।
वामांगसंस्थितं दीपं गृह्यतां शेषवल्लभे ! ।
पीतज्योतिसमाविष्टं त्रिलोक्यां मंगलं कुरु ॥ इति

द्वौ मंत्रौ उच्चार्य्य श्रीयुगलमूर्त्तये दक्षिणोत्तरभागयोः द्वौ दीपौ निधाय ।

अन्नं चतुर्विधं स्वादु: रसैः षड्भिः समन्वितम् ।
भक्ष्यभोज्यसमायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥
अर्द्धभोजनमातिष्ठ प्रसीद रमणेश्वरि ! ।
युगलस्थे महामूर्त्ते एकपत्रे प्रगृह्यताम् ॥ इति नैवेद्यम् ॥
नागवल्लीदलं दिव्यं पुंगीकर्पूरसंयुतम् ।
वक्तूसुरभितं स्वादु ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥
नागपत्नीगृहीतं च वीटिकां प्रतिगृह्यतां ।
वक्तूं सुरभितं कार्य्यं नमामि परमेश्वरि ! ॥ इति तांबूलम्
उपचारैः समस्तैस्तु या पूजा च मया कृता ।
तत्सर्वं पूर्णतां यातु प्रदक्षिणाप्रभावतः ॥ इति
यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्या शतानि च ।
तानि तानि प्रणश्यंतु प्रदक्षिणाप्रभावतः ॥ इति–

मंत्रेण युगलमूर्त्तेश्चतुर्द्धा प्रदक्षिणां कुर्यात् । आरार्तिक-प्रमाणं चतुर्दशावृत्या प्रदक्षिणाप्रमाणं चतुरावृत्या मुख्या ।

यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्या शतानि च ।
तानि तानि प्रणश्यंतु प्रदक्षिणापदे पदे ॥ इति

मंत्रेण—त्राहि मां पापिनं घोरं धर्माचारविवर्जितम् ।

नमस्कारेण देवेश संसारार्णवपातिनम् ॥

मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं हलायुध ! ।

पूजितोऽसि मया देव परिपूर्णं भवस्तु ते ।

नारीषु भक्तिहीनासु कुटुम्बसकलेषु च ।

धनधान्यसमृद्धिं च कुरु मे सर्वदा स्थितः ॥

सहस्रफणचिन्हानि चतुर्दशफणान्वितम् ।

सर्वदा पूजयिष्यामि लाडिलेयसमन्वितम् ।

द्वावायुधौ च संपूज्यौ हलमूशलसंस्थितौ ।

द्वौ पाणिस्थौ प्रसीदन्तौ नित्यमेव प्रपूजकौ ॥

रक्षां कुरु कुटुम्बेषु त्रिवेणीतटसंस्थिते ।

आवाहनं न जानामि नैव जानामि पूजनम् ।

विसर्जनं न जानामि क्षम्यतां युगलस्थितः ॥

इति श्रीयुगलस्थश्रीवलदेवस्य नित्यमेव षोडशोपचारपूजनम् ॥

अथ श्रीवलदेवस्य सिंहासनस्थले श्रीकृष्णस्वरूपिणं लाडिलेयं नित्यमेव षोडशोपचारैर्विधिना पूजयेत् ।

किंकिण्या कटिवेष्टितं रुणझुनन् झंकार पीतांवरं

मात्रा चांगुलिलालितं शुभकरं स्वर्णाकृतिं सुन्दरम् ।

भ्रातृस्नेहसमाश्रितं वपुः शुभं श्रीलाडिलेयं विभुं

वालरूपमवस्थितं सुखप्रदं श्रीनन्दसूनुं भजे ॥

इति ध्यात्वा । विष्णुयामले—

कृष्णश्च लाडिलं रूपं कृत्वा मन्दिरमास्थितः ।

भ्रातुः स्नेहसमाविष्टस्त्विष्टसिद्धिप्रदायकः ॥

कृष्णसेवाविधानेन लाडिलेयं प्रपूजयेत् ।

श्रीकृष्णेन प्रदातव्यं स्वरूपं लाडिलेयकम् ।

स्वप्नसंदेहविच्छिन्नं नारदस्य करोत्ययम् ॥

अनेनैव विधानेन रामकृष्णादिमूर्त्तयः ।

कृष्णावतारे ये रूपाः नाम्ना तेऽपि पृथक् पृथक् ।

नृसिंहवामनस्यापि मुकुन्दादिशिलादिषु ।
षोडशोपचारपूजां कथयामि विधानतः ।
विष्णोरास्ते स्थिताः रूपास्तेषां पूजाविधिरियम् ॥
जन्मनि त्वभिषेकस्य भेदः स्यान्नैव पूजने ॥
इति पूजननिषेधः ।

ततः पूजनक्रमः ।—

भगवन् देवदेवेश आगच्छ परमेश्वर ! ।
अहं पूजां करिष्यामि प्रसादात्संनिधो भव ॥ इत्यावाहनम् ॥
सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं पीठं रत्नोपशोभितम् ।
अनन्तफणपत्रस्थे उपविशासने प्रभो ! ॥ इत्यासनम् ॥
स्नानार्थमुष्णतोयानि पुष्पगंधयुतानि च ।
पाद्यं गृहाण देवेश भक्तानुग्रहकारक ! ॥ इति पाद्यम् ॥
शंखतोयसमानीतं गंधपुष्पादिवासितम् ।
स्नापितोऽसि मया देव ! सदा त्वं संमुखो भव ॥
इतिस्नानम् ॥
गंगातोयं समानीतं सुवर्णकलशोद्धृतम् ।
देवेशाचमनं प्रीत्या गृह्यतां परमेश्वर ! ॥ इत्याचमनम् ॥
शीतोष्णसुखदुःखानां परलज्जानिवारणम् ।
सुवेषं धारितं नित्यं यस्माद्वासं प्रगृह्यताम् ॥ इति वस्त्रम् ॥
ब्रह्मणा निर्मितं सूत्रं ब्रह्मग्रन्थिसमन्वितम् ।
यज्ञोपवीतं परमं भगवन्प्रतिगृह्यताम् ॥ इति यज्ञोपवीतम् ॥
मलयाचलसंभूतं सुखमानंदवर्द्धनम् ।
काश्मीरवनराजाढ्यं चंदनं प्रतिगृह्यताम् ॥ इति चन्दनम्॥
नानाविधानि पुष्पाणि ऋतुकालोद्भवानि च ।
मयार्पितानि सर्वाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ इतिपुष्पम् ॥
वनस्पतिसमुत्पन्नं सुगंधाढ्यं मनोहरम् ।
आघ्राय देवदेवेश धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ इति धूपम् ॥
घृतवर्त्तिसमायुक्तं तथा कर्पूरसंभवम् ।

श्री ...दावन शोध संस्थान

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम् ॥ इति दीपम् ॥
अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम् ।
भक्ष-भोज्यसमायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यतां ॥ इति नैवेद्यम्
नागवल्लीदलं दिव्यं पूंगीकर्पूरसंभवम् ।
वक्त्रं सुरभितं स्वादुस्ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥
इति ताम्बूलम् ॥
उपचारसमस्तैस्तु विष्णोः पूजा मया कृता ।
तत्सर्वं पूर्णतां यातु प्रदक्षिणा पदे पदे ॥ इति प्रदक्षिणा ॥
यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्या शतानि च ।
तानि तानि प्रणश्यंतु प्रदक्षिणा पदे पदे ॥
त्राहि मां पापिनं घोरं धर्माचारविवर्जितम् ।
नमस्कारेण देवेश संसारार्णवपातिनम् ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर ! ।
पूजितोऽसि मया देव ! परिपूर्णं भवस्तु ते ॥
आवाहनं न जानामि नैव जानामि पजनम् ।
विसर्जनं न जानामि क्षम्यतां मधुसूदन ! ॥

इति श्रीत्रिवेणीतटस्थले श्रीयुगलश्रीवलदेवमन्दिरे स्वेष्टदेवस्य श्रीलाडिलेयस्वरूपस्य श्रीकृष्णस्य षोडशोपचारपूजनम् ॥

ततः पित्तलिस्थाल्यां लिखितमिदं यंत्रमंडलं पूजयेत् ।

ततः प्रसादोपायननिषेधः । विष्णुधर्मोत्तरे—

गंगापर्वतचंद्रमाशुभकरी वृष्टिस्तदाकाशकं
पुष्पं शंकरमग्निलोकभुवनं निर्माल्यमंगीकृतम् ।
चुल्ह्यापिश्युदकी च भस्ममजनी पंचैव ताः निर्मिताः
गेहस्थस्य प्रदीयतां शुभकरीं हंताख्यतां पत्तलीम् ॥
राजसेवा स्थिता ह्यत्र भाण्डारं रचते तदा ।
उपायनं न गृन्हीयात्कदाचु समयेऽपि च ॥
प्रभुकार्येषु कुर्वन्ति द्रव्याणां संचयस्तदा ।
आभूषणानि वस्त्राणि विष्णुनोत्तारणानि च ।

स्वरूपेण च त्यक्तास्ते वस्त्राद्या भूषणादयः ।
ब्राह्मणेभ्यो ददुः श्रीमान्न ंगीकारं कदाच न ।
लोभादंगीकृतं कुर्य्याद्बलदेवस्याप्युपायनम् ।
स कुटुंबं क्षयं नीत्वा दरिद्रं भजते सदा ।
निर्भाग्योऽंगीकृतः स्वामी सर्वलोकेष्वपूजकः ॥
तथा कृष्णस्वरूपाणां राजसेवाः पृथक् पृथक् ।
अनेकाः बहुधाः रूपाः मुकन्दादयः संस्थिताः ।
राजसेवासु न कुर्य्यादंगीकारमुपायनम् ।
कदानु समये कुर्य्यादंगीकारमुपायनम् ।
कुष्ठीतुल्यांगसंभूतो गोस्वामी भवते सदा ॥

भविष्यपुराणे—

बलदेवप्रसादं तु युगलस्य निवेदनम् ।
अंगीकारं न कुर्वंति निर्माल्यं चैवमर्पितम् ॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्स्वामी स्वयं नैव भुनंक्ति सः ।
कदा प्रसादभक्त्याऽसौ निर्माल्यं भक्षते क्वचित् ।
पतति नरके घोरे निर्वंशो जायते तदा ।
लाडिलेयप्रसादं च कुरुते सर्वदा गृहे ।
पुत्रपौत्रसमृद्धिः स्याद्धनधान्येन पूरितः ।
तथैव कृष्णरूपाणां राजसेवाः प्रतिष्ठिताः ।
तेषां नैवेद्यनिर्माल्यं ब्राह्मणेभ्यस्तु भोजयेत् ।
प्रसादं बालसेवायाः भक्त्या सोऽपि भुनंक्ति च ।
दरिद्रं भजते लोके निःसन्तानोऽभिजायते ॥
गोकुलेश्वर बालानां स्वरूपाणां निवेदनम् ।
प्रसादं नैव भुंजीयात् निर्माल्यं च प्रसादकम् ।
गृहेषु बालसेवायाः मुकुन्दादिप्रतिष्ठिताः ।
तेषां प्रसादं गृन्हीयात्सर्वसौख्यप्रदायकम् ।
गोकुलेश्वरमालोकां झांकिका समयं भवेत् ।
वार्षिकोत्सवमाख्यातं ग्रन्थपूर्वार्द्धं निर्मिते ।

व्रजोत्सवप्रदीपिकायां वलदेवस्य मन्दिरे ।
उत्सवाश्चैवमाख्याता: संपूर्णा: लिखिताः मया ॥

इति श्रीमद्भास्करात्मजश्रीनारदावतारश्रीनारायण-
भट्टगोस्वामिविरचितायां व्रजोत्सवचन्द्रिकाया-
मुत्तरार्द्धवृत्तौ व्रजसारोद्धारे
नवम: प्रकाश: ।

अथ श्रीकृष्णाभिषेकप्रयोगः

विष्णुरहस्ये—

श्रीकृष्णस्यावतारस्यानेकनाम्नः स्वरूपकाः ।
अवतारा: पृथग्भूता: स्वै: स्वैर्नामाभिः संस्थिता: ।
तेषामवस्था: वासाश्च वक्ष्यन्ते नामभि: पृथक् ।
गोकुले नगरे रम्ये चन्द्रमा गोकुलेश्वर: ।
"गोकुलचंद्रमा सार्द्धद्वयवर्षावस्थावतार:"
गोकुलचन्द्रमा नाम्ना स्वरूपो गोकुले स्थित: ।
सार्द्धद्वयसमावस्थस्त्ववतारो स्वयं स्थित: ॥

तस्य स्वरूपं—

पादौ नूपुरवेष्टितं सुखकरं श्यामांगसंवर्द्धनम्
हस्तौ कांचननिर्म्मितौ कटितटे क्षुद्ररणन्मेखलम् ।
श्रीवत्सांकसमन्वितं शुभप्रदं देदीप्यमानं रुचा
वर्षसार्द्धद्वयावतारममलं चन्द्रतिरस्कारिणम् ॥
वन्दे गोकुलचन्द्रमामतिप्रियं वालस्वरूपे स्थितं
चांचल्ये भ्रमरादिकं करतले वाल्येन लीलारतम् ॥

ईदृशे स्वरूपे स्थाने कृष्णावतारं ध्यात्वा जन्मोत्सवं कुर्यात् ।

गोकुलचन्द्रमामूर्त्तिं स्थापितुं गोकुलेश्वरं ।
यंत्रोद्धारं यदा कुर्य्यात् पीठस्योपरि यत्नतः ।
वर्त्तुलाकारयंत्रं च गदाकारं च मध्यमम् ।

बीजाक्षरसमाविष्टं ओं श्रीं ग्रीं क्लीं ह्रीं च ।
सप्त द्वि षट् पंच त्रिश्च मंत्रपूर्वं लिखेद्बुधः ॥
मंत्र—ओं श्रीगोकुलचन्द्रमाये सबालाय कोमलांगिने
बालस्वरूपिणे तुभ्यं नारायण नमोऽस्तु ते ॥
आदिवाराहे—यंत्रोद्धारं विना सेवा राजद्वारे प्रतिष्ठिता ।
निष्फला वसते सेवा दारिद्र्यं भजते सदा ।
प्रथमस्थापने मूर्त्तेः यंत्रोद्धारं करिष्यति
धनधान्येन पूर्णेन सर्वदा सुखमासते ॥
त्रिवर्षावस्थबालोऽभूत्तदा मृत्युमवाप्नुयात् ।
दर्शनात्परमायुश्च स बालो जीवति सदा ।
धनधान्यसमृद्धिः स्याद्दर्शनाच्च नात्र संशयः ।
उपायनं कृतं यत्र सहस्रगुणितं भवेत् ।
चतुर्णामवताराणां जन्मन्युत्सवमाचरेत् ।
राजसेवा बालसेवा मुकुन्दादिप्रतिष्ठिता ।
तेषु तेषु च द्वारेषु सर्वदा सुखमासते ।
लोकपूज्या भवेल्लोके धनधान्यसमावृत: ।
चतुर्णामवताराणां जन्मोत्साहं न कारयेत् ।
सर्वदा दु:खसंतप्तो सेवकश्च दरिद्रभाक् ।
यस्य गेहे वसेत्सेवा शालिग्रामादिमूर्त्तिषु ।
अवतारोत्सवं कुर्याज्जन्मनि सुखमाप्नुयात् ।
न कुर्याज्जन्मन्युत्साहं दरिद्रेण प्रपूरितः ।
इति श्रीगोकुलचन्द्रमाद्वारे गोकुलचन्द्रमसः जन्मोत्सवप्रतिष्ठा ॥
ब्रह्मवैवर्त्ते—गोपीनाथावतारो स्यान्मथुरायां विराजितः ।
दशवर्षमवस्थायां चतुः षष्ठि-कलान्वितः ।
दशवर्षावतारश्च गोपीनाथाभिधानतः ।
राजसेवाभिधानश्च ललिताराधयान्वितः ।
उत्सवेषु च सर्वेषु पूर्णैकादशिकासु च ।
युगलश्च विराजते नित्यमेव पृथक् स्थितः ।

स्वयमेव स्वरूपोऽयं गोपीनाथो विराजते ।
श्यामांगवर्णं कटिकिंकिणीरवं नारायणं माधव-गोपिकांचितम् ।
श्रीगोपीनाथं मथुराभिशोभितं वन्दे महाकारुण्यदेवकीसुतम् ॥

इति श्रीगोपीनाथस्वरूपं ध्यात्वा श्रीकृष्णाभिषेकविधिना जन्मोत्सवं कारयेत् ॥

प्रथमस्थापनं यत्र गोपीनाथस्य कारयेत् ।
यंत्रोद्धारं च पीठेऽस्मिन् कुरुते सुखमाप्नुयात् ॥
पीठाकारं लिखेद्यांत्रं वीजाक्षरसमन्वितम् ।

गौतमीये तंत्रे द्वाविंशे पटले—मंत्र: "श्रों प्लीं फ्रीं भ्रों क्षीं गौं गोपीनाथाय नम:" इति मंत्रं लिखित्वा—

श्रों मथुरायां पुरे रम्ये गोपीनाथाय ते नमः ।
निविष्टो राधया देव्या ललितासखिसंयुतः ।
केलिपूर्णं समाविष्टो गोपिकाकुलपालकः ॥इति मंत्र
यंत्रोद्धारं विना सेवा निष्फला जायते ध्रुवम् । इति

गोपीनाथप्रतिष्ठा ॥

संमोहनतंत्रे—

कामस्य मोहनार्थाय वर्षद्वादशरूपिणे ।
यंत्रोद्धारं विनार्थाय वर्षद्वादशरूपिणः ।
द्वादशवर्षमवस्थोयमवतारः स्वयं स्थितः ।
मदनमोहननाम्ना गोपालश्च विराजते ।
वृंदावने महारम्ये स्वर्गलोकमनोहरे ।
मदनमोहनावतारः द्वादशवर्षः ॥
पूर्वमेव प्रतिष्ठायां यंत्रोद्धारं च कारयेत् ।
पीठोपरि लिखेत् यंत्रं राजसेवा प्रतिष्टितम् ।
चक्राकारं लिखेद् यंत्रं विधिपूर्वं समाचरेत् ।

श्रीं सः वां ज्रीं ग्रं नां ठां घ छ गं मध्ये चत्वारवीजकं
श्रीं भ्रों क्षीं क्लों षट् पंच त्रि द्वितीयकम् ।

अथ स्वरूपध्यानं—

कामसोहनस्वरूपसुंदरो माखनेऽतिप्रियो हरिः स्वयम् ।
श्रीनिकेतन नमोऽस्तु ते सदा मोहनाय नवनीतवल्लभ ! ॥

पादौ नूपुरराजितं कटितटे घंटारवं घटिका
श्रीगोपालमहावतारममलं पीताम्बरालंकृतम् ।
वृन्दारण्यसुशोभितं शुभप्रदं गौडेश्वरालंकृतं*
वन्दे मोहनसुन्दरं सुनयनं वंशीधरोष्ठं शुभम् ॥

इतिस्वरूपं ध्यात्वा चतुर्षूत्सवेषु श्रीकृष्णाभिषेकविधिना कुर्यात् । इति श्रीमदनमोहनप्रतिष्ठा ।

आदिपुराणे—

गोवर्द्धनमुखद्वारे मानसीतटसंस्थिते ।
गोवर्द्धनगिरि रम्यं हस्तेनोद्धारितं तदा ॥
हरिदेवो महामूर्त्तिरवतारस्वरूपकः ।
सप्तवर्षमवस्थाया अवतारः स्वयं हरिः ।
राजसेवासमाख्यातं गंगातीरमुपाश्रितम् ।
पूर्वमेव प्रतिष्ठायां यंत्रोद्धारं करिष्यसि ।
शंखाकारं लिखेद् यंत्रं पीठोपरि विराजतम् ।
ओं श्रीं क्लीं सौः बीजाक्षरसमन्वितम् ।
हरिदेव नमस्तुभ्यं शंखहस्तसमन्वितः ।
पाणिना पर्वतोद्धारिन् गंगातीरमुपाश्रितः ।
पत्नीरहितमूर्त्तिस्तु कौमारं रूपमास्थितः ।
यंत्रोद्धारं विना सेवा निस्तेजा जायते सदा ॥

श्यामं रूपमवस्थितं शुभकरं रामानुजं सुंदरं
बालक्रीडनतत्परं सुखकृतं गोवोर्द्धनोद्धारिणम् ।
श्रीदेवं हरिदेव संभवमुदा वंदे महाबालकं
सप्तवर्षमवस्थया सुरुचिरं पीतांवरालंकृतम् ॥

---

* गौडेश्वरः—श्रीसनातनगोस्वामी

इति स्वरूपं ध्यात्वा चतुर्थ्ववतारामिषेकविधिना जन्मोत्सवं कुर्य्यात् । इति श्रीहरिदेवप्रतिष्ठा ॥

नृसिंहपुराणे ब्रह्मखण्डे—

गोवर्द्धनस्य नाथाख्यस्त्ववतारस्वरूपकः ।
पत्नीरहितमूर्त्तिस्तु कौमारो नाथसंज्ञकः ।
सार्द्धसप्तभिर्वर्षैश्च षण्मासोत्तरसप्तभिः ।
श्रीगोवर्द्धननाथः सार्द्धसप्तवर्षावतारः ॥ इति

श्रीगोपालपुरे रम्ये गोवर्द्धनतटस्थिते ।
पर्वतोपरि संस्थश्च हस्ते धृत्वा गिरिं च सः ।
राजसेवा समाख्याता गोकुलेश्वरदीयका ।
वहुदुग्धदधिघृतनवनीतसमाकुला ।
दोलाकारं महायंत्रं पीठोपरि विधानतः ।
यंत्रोद्धारं करिष्यंति वहुद्रव्यसमाकुलाः ।
ओं श्रीं श्रीं श्रीं क्लीं गोवर्द्धननाथाय नमः ॥

ओं नवनीतप्रियो नाथ सार्द्धसप्तसमास्थितः ।
पर्वतोद्धारकः स्वामिन् नारायण नमोऽस्तु ते ।
वहुदुग्धप्रदो देव नाथ ते भगवन्नमः ॥ इति मन्त्रः ।
श्रीराम-वरदानेन हस्तस्पर्शकृतो हरिः ।

संमोहनतंत्रे—

हस्ते धृतं गिरिवरं कमलाविरिक्तं श्रीनाथसंज्ञं नवनीतकोमलम् ।
श्यामस्वरूपं नयनाभिरामं मनोहरं सुन्दरवेशधारिणम् ।
सर्वैश्च नन्दादिभिरन्वितं प्रभुं सर्वाभिः गोपीभिर्समाकुलं भजे ॥

इति स्वरूपं ध्यात्वा चतुर्षु जन्मष्ववतारेषु जन्मोत्सवं कुर्यात् ।
इति ब्रह्मसंहितायां श्रीगोवर्द्धननाथप्रतिष्ठा ॥

वाक्ये— पुनर्वृन्दावने चैव वृंदादेवीप्रसादतः ।
वृन्दादेवीप्रसक्ताय पूर्णकामस्य हेतवे ।

इति स्वरूपं ध्यात्वा चतुर्ष्ववताराभिषेकविधिना जन्मोत्सवं कुर्य्यात् । इति श्रीहरिदेवप्रतिष्ठा ॥

नृसिंहपुराणे ब्रह्मखण्डे—

गोवर्द्धनस्य नाथाख्यस्त्ववतारस्वरूपकः ।
पत्नीरहितमूर्त्तिस्तु कौमारो नाथसंज्ञकः ॥
सार्द्धसप्तभिर्वर्षैश्च षण्मासोत्तरसप्तभिः ।
श्रीगोवर्द्धननाथः सार्द्धसप्तवर्षावतारः ॥ इति

श्रीगोपालपुरे रम्ये गोवर्द्धनतटस्थिते ।
पर्वतोपरि संस्थश्च हस्ते धृत्वा गिरिं च सः ।
राजसेवा समाख्याता गोकुलेश्वरदीयका ॥
बहुदुग्धदधिघृतनवनीतसमाकुला ।
डोलाकारं महायंत्रं पीठोपरि विधानतः ।
यंत्रोद्धारं करिष्यंति बहुद्रव्यसमाकुलाः ।
ओं ग्रीं ब्रीं श्रीं क्लीं गोवर्द्धननाथाय नमः ॥

ओं नवनीतप्रियो नाथ सार्द्धसप्तसमास्थितः ।
पर्वतोद्धारकः स्वामिन् नारायण नमोऽस्तु ते ।
बहुदुग्धप्रदो देव नाथ ते भगवन्नमः ॥ इति मन्त्रः ।
श्रीराम-वरदानेन हस्तस्पर्शकृतो हरिः ।

संमोहनतंत्रे—

हस्ते धृतं गिरिवरं कमलाविरिक्तं श्रीनाथसंज्ञं नवनीतकोमलम् ।
श्यामस्वरूपं नयनाभिरामं मनोहरं सुन्दरवेशधारिणम् ।
सर्वैश्च नन्दादिभिरन्वितं प्रभुं सर्वाभिः गोपीभिर्समाकुलं भजे ॥

इति स्वरूपं ध्यात्वा चतुर्षु जन्मष्ववतारेषु जन्मोत्सवं कुर्यात् ।
इति ब्रह्मसंहितायां श्रीगोवर्द्धननाथप्रतिष्ठा ॥

ब्राह्मे— पुनर्वृन्दावने चैव वृंदादेवीप्रसादतः ।
वृन्दादेवीप्रसक्ताय पूर्णकामस्य हेतवे ।

हृषीकेशो करोद्रूपं नाम्ना गोविन्दसंस्थितः ।
चतुर्दशसमावस्थस्तवतारो विराजते ।

पुनर्वृन्दादेवीसंयुक्ताय वृन्दापरिपूर्णकामाय श्रीगोविन्ददेवावतारश्चतुर्दश वर्षावस्थया विराजमानः ॥

गारुडे—पूर्वमेव प्रतिष्ठायां यंत्रोद्धारं करिष्यति ।
राजसेवा समाख्यातं युगलेन समन्वितम् ।
पद्माकारं लिखेद् यंत्रं चतुष्कोणसमन्वितम् ।
सत्यं ब्रूहि नमस्तुभ्यं वरदानप्रदायक ।
पद्माकारं लिखेद् यंत्रं बीजाक्षरं समं लिखेत् ।
ओं श्रीं हूं ह्रौं ह्रीं क्रीं ह्लीं सौः षः बीजाक्षरसमन्वितम् ।
अंकानि सप्त ७ त्रि ३ त्वेक १ चतुर्न ४ व ६ षड् ६ ऋषवः।
ओं गोविन्दाय नमस्तुभ्यं युगलस्थायते नमः ।
वृन्दादेवीप्रसीदाय वृन्दावनमुपाश्रितः ॥

संमोहनतंत्रे—

फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसं प्रियं
श्रीवत्सांकमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम् ।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गो-गोपसंघावृतं
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्यांगभूषं भजे ॥

इति श्रीगोविन्ददेवस्वरूपं ध्यात्वा चतुर्षु जन्मावतारेषु जन्मोत्सवं कुर्यात् । इति श्रीगोविन्देवावतारप्रतिष्ठा ॥

अथ श्रीराधावल्लभप्रतिष्ठा ।

ब्रह्मवैवर्त्ते राधाखण्डे—

अष्टोत्तरा षष्ठिकाश्च तीर्थाः सन्ति दिशि दिशि ।
यत्रासौ सर्वतीर्थानामाकर्षणमकुर्व्वतः ।
तत्र स्थले च श्रीकुंडे राधावल्लभसंस्थितः ।
एकादश समावस्थः द्वयोर्युगलमास्थितः ।
श्रीराधावल्लभो युगलस्वरूपैकादशवर्षावस्थः ।

राजसेवा समाख्यातं त्रैलोक्यशुभदायकम् ।
युगलस्य समावस्थं त्वेकपक्षोनसंयुतम् ।
पूर्वमेव प्रतिष्ठायां यंत्रोद्धारं करिष्यति ।
घंटाकारं लिखेद यंत्रं ओं त्रं ् खीं ब्रीं ज़ूं ह्लां ।
बीजाक्षरसमायुक्तमकेन रहितं कृतम् ।
मंत्रेणानेन संविष्टं सर्वमंगलदायकम् ।
ओं युगलाय नमस्तुभ्यं ललितापरिचारकः
राधावल्लभसंज्ञाय मोक्षाय परमात्मने ॥

नारदपंचरात्रे—

राधायाः प्रियवल्लभं सुखकरं पीताम्बरालंकृतं
युग्ममूर्त्तिसमाश्रितं सुरुचिरं देदीप्यमानं रुचा ।
नीलेन्दीवरतुल्यरूपमधिपं श्यामांगभूषं भजे
गोपीभिः परिसेवितं सुनयनं चक्रायुधं श्रीप्रदम् ॥

इति श्रीराधावल्लभस्वरूपं ध्यात्वा चतुर्षु जन्मावतारेषु जन्मोत्सवं कुर्य्यात् । इति श्रीराधावल्लभप्रतिष्ठा ॥

वृहद्गौतमीये द्वात्रिंशे पटले—

वृषभानुपुरे रम्ये लाडिलीलालसंस्थितः ।
सार्द्धैकादशवर्षैस्तु अवस्थाभिः स्वरूपकः ।
श्रीलाडिलीलालस्वरूपः षण्मासोत्तरैकादशवर्षावस्थावतारः ॥
गोपीभिः परिरञ्जितं सुनयनं पीताम्बरं सुन्दरं
राधाप्रीतिपदं सुकोमलरुचं श्यामांगसंदीपनम् ।
भानोर्मन्दिरमास्थितं प्रियकरं राधान्वितं श्रीप्रभुं
रासक्रीडनतत्परं सुखकरं श्रीलाडिलीलालकम् ॥
राजसेवासमाख्यातं लाडिलीलालसंज्ञकम् ॥

इति श्रीलाडिलीलालस्वरूपं ध्यात्वा चतुर्षु जन्मावतारेषु जन्मोत्सवं कुर्य्यात् । इति श्रीलाडिलीलालप्रतिष्ठा ॥

विष्णुपुराणे—

संकेतवटके स्थाने विहारीनामसंज्ञकः।
सार्द्धैकादशवर्षैस्तु अवस्थापरिकीर्त्तितः।
गोपीभिरन्वितश्चैव वृन्दावनवने वने।
पुलिने क्रीडमानोऽसौ विहारीरूपसंस्थितः।
सार्द्धैकादशवर्षस्य अवतारो स्वयं हरिः॥

श्रीसंकेतवटस्थितं सुनयनं राधान्वितं केलिनं
सार्द्धैकादशभिर्स्वरूपमधिकं वृन्दावने क्रीडितम्।
गोपीभिः परिवेष्टितं सुरुचिरं देदीप्यमानं रुचा
वंशीवादनतत्परं विहारिणं पीताम्बरं सुन्दरम्॥

इति स्वरूपं ध्यात्वा चतुर्षु जन्मावतारेषु जन्मोत्सवं कुर्यात्। इति श्रीविहारीप्रतिष्ठा॥

ब्रह्माण्डे—त्रिमासोनैर्द्वादशैश्च वर्षैः रूपो विराजते।
रूपो नटवरेवेषो नाम संज्ञा प्रशस्यते।
संकेतवटके स्थाने वृन्दायाः पुलिने वने।
रूपं नटवरं कृत्वा रासक्रीडां करोद्धरिः।
अवस्थामूर्त्तिमाख्याता पादोनैः द्वादशैः समैः॥

श्रीभागवते दशमे—

वर्हापीडं नटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारं
विभ्रद्वासं कनककपिशं वैजयन्तीं च मालाम्।
रंध्रान्वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृंदै
र्वृन्दारण्यं स्वपदरमणं प्राविशद्गीतकीर्त्तिः॥

इति श्रीनटवरस्वरूपं ध्यात्वा चतुर्षु जन्मावतारेषु जन्मोत्सवं कुर्य्यात्। इति श्रीनटवरस्वरूपप्रतिष्ठा गोपालपुरे॥

वाराहे—पंचवर्षैरवस्थाभिमुकुन्दो रूपसंस्थितः।
गोकुले नन्दग्रामेऽस्मिन् नवनीतप्रियो हरिः।
दधिभाण्डात् दधि क्षिप्त्वा भोजनं शीघ्रमाचरत्।
यशोदाप्रीतिसंयुक्तो वालक्रीडनतत्परः।

कृष्णेण भुंज्यमानोऽसौ यशोदा धावती स्वयम् ।
मुकुन्द वालरूपं च हस्तमाखनगोलकम् ।
भक्ष्यमाणं गोलकं च गृहीत्वा कृष्णवालकम् ॥
पत्नीविरहितं रूपं मुकुन्दनामसंज्ञकम् ।
दाम्ना वध्वा हृषीकेशं दामोदर विराजितम् ।
राजसेवा समाख्यातं सम्पूर्णसुखदायकम् ॥

विष्णुधर्मोत्तरे—

हस्ते गृहीतं नवनीतगोलकं भांडस्फुटं तं नवनीतकोमलम्
वालस्वरूपं कटनूपुरान्वितं मनोहरं श्यामवपुर्विराजितम् ।
मुकुन्दनामानमपि स्थितं हरिं पीताम्बरालंकृतं शोभितं भजे
वात्सलययुक्तं पितृमातृषु स्वयं विराजमानं नरदेवसंभवम् ॥

इति श्रीवालमुकुन्दस्वरूपं ध्यात्वा प्रतिस्थानेषु जन्मोत्सवं कुर्यात् । इति वालमुकुन्दप्रातष्ठा ॥

भविष्योत्तरे—

कृष्णावतारेस्ववतारसंभवाः व्रजेषु संस्थाः महाराजसंज्ञकाः ।
वक्ष्यन्ति नामानि मनोहराणि व्रजेषु सर्वेष्वधिकफलानि ॥

रामस्वरूपं कृष्णस्य जन्मन्यवसरो यदा ।
तदा रामस्वरूपस्य कृष्णजन्मविधानतः ।
कृष्णाभिषेकविधिना रामस्याप्यभिषेचनम् ।
चतुर्षु जन्मषु कुर्य्यादवतारविधानतः ।
चतुर्णामवताराणां विधानानि पृथक् पृथक् ।
रचिताः विधयस्तेषां कृष्णादीनां चतुर्विधाः ॥
अवतारप्रसंगेन स्वरूपस्याभिषेचनम् ।
कृष्णस्वरूपिणो मूर्त्ति विराजते स्वयं हरिः ॥
रामस्य दिवस्य जन्म नवम्यां चैत्र मासिके ।
रामाभिषेकपद्धत्या कृष्णस्याप्यभिषेचनम् ।
नृसिहस्य जन्मोत्साहं स्वरूपं रामकृष्णयोः ।
नृसिंहजन्मविधिना स्वरूपमभिषेचयेत् ।

स्वरूपोऽत्र नृसिंहस्य जन्मनि रामकृष्णयोः।
रामाकृष्णाभिषेकाभ्यां विधिभ्यामभिषेचनम्।

रामार्चनचन्द्रिकायाम्—

वामनप्रतिमा नास्ति अवतारोऽस्ति वामनः।
विष्णोश्चैवावताराणां स्वरूपास्तत्र संस्थिताः।
वामनस्यावतारस्य पद्धत्या विधिना यथा।
अभिषेकं प्रकुर्वीत द्वादश्यां भाद्रमासिके॥
अवतारप्रसंगेन विधिना नैवमाचरेत्।
विपरीतं भवेल्लोके कर्त्ता यमपुरे व्रजेत्।
विष्णोश्चैवावतारेषु भेदो नास्ति महीतले।
विधिनास्याभिषेकस्य भेदोऽस्ति गुरुरुच्यते।
कामना निष्फला भूयाद्विपरीतं यदा करोत्।

इति श्रीकृष्णादिचतुर्षु अवतारेषु चतुर्णामभिषेकविधिनां भेदाभेदप्रतिष्ठानिषेधः॥

पाद्मे—भाद्रस्य कृष्णपक्षे तु रोहिणीसंयुताष्टमी।
बुधवारसमायुक्ता कृष्णजन्माभिधायिनी।
सप्तमी किंचिद्दृश्यते सकला चाष्टमी यदि।
अष्टमी क्षययोगेन भौमयोगेन भोगिता।
द्वितीये नवमी शुद्धा तदा जन्माष्टमी तिथिः।
रोहिणी बुधवारेण संयुक्ता यदि जायते।
पूर्वविद्धा न हि ख्याता ईदृशो चाष्टमी भवेत्।
पूर्वविद्धामिमां क्वापि गणयेन्नबुधो जनः।
बलदेवादिद्वारेषु ईदृशी चाष्टमी भवेत्।
सुखसंपत्तिदा नित्यं सर्ववाञ्छितदायिनी।
उक्तेषु रूपद्वारेषु ईदृशी सुखदायिनी॥

विष्णुधर्मोत्तरे—

अष्टमी वृद्धितां प्राप्य द्वि दिने अष्टमी भवेत्।
सुखसंपत्तिदा ग्राह्या देवकीपुत्रजन्मनि॥

अष्टमी क्षययोगेन सप्तम्यां सर्वभोगिता ।
द्वितीये नवमी शुद्धा बुधरोहिणी संयुता ।
सप्तम्यामष्टमी भोग्या बुधरोहिणी हीनता ।
तदा शुद्धनवम्यां तु बुधरोहिणीसंयुते ।
परविद्धायां त्विदृश्यां जन्मोत्सवमकारयेत् ।
सकलं सुखमाप्नोति वैष्णवो नात्र संशयः ।
एतादृश्यां तु चाष्टम्यां रात्र्यां लग्ने वृषे गते ।
त्रयोदश घटी जाता शेषा सप्तदशा घटी ।
तत्समये देवकी कृष्णमुत्पादयति शीघ्रतां ।
द्वारपालाः समातस्थुः कंसकारागृहे स्थिताः ।
मथुरायां हृषीकेशमष्टमगर्भसंभवम् ॥

ब्राह्मे—वृषलग्ने व्यतीतेऽस्मिन्मिथुनोदयमागते ।
रात्रि सप्तदशैः संख्यैः घटिकाभिर्गता यदा ।
त्रयोदश घटी शेषा रात्रिसंस्था च गोकुले ।
नन्दपत्नी यशोदा सा लग्नगे मिथुनोदये ।
तत्समये योगमायायास्त्ववतारस्वरूपिणीम् ।
कन्यकां जनयत्साध्वी सर्वमंगलकारिणीम् ।
योगमायाप्रसादेन निद्रा सर्वेषु पूरिता ॥ इति मार्कण्डेये ।

ततः श्रीकृष्णस्य सख्योः सुवलमधमंगलयोः जन्मनिरूपणं—

भविष्योत्तरे—जैतकं पुरमाख्यातं मथुरायाः समीपकम् ।
तस्मिन्पुरे वसेद्धीमान् प्रतिनंदाभिधानकः ।
मानदा नाम भार्या च प्रतिनंदस्य तस्य सा ।
भाद्रे मास्यसिते पक्षे नवमी संयुताष्टमी ।
नक्षत्रमृगशीर्षेण संयुता नवमी यदा ।
पूर्वविद्धा सदा कार्या सुवलस्य च जन्मदा ।
भास्करोदयतो जाताश्चतुर्विंशाश्च नाडिकाः ।
शेषा षट् घटिकास्तत्र मकरे लग्नसंस्थिते ।
तत्समये मानदा सा सुवलं पुत्रमश्नुते ।

सुबलो नाम गोपालो श्रीकृष्णस्य सखा प्रियः ॥

मधुमंगलस्य–पाडरो नाम ग्रामोऽस्ति श्रीकुंडस्य समीपगः ।
सुभावो नाम नंदोऽभूत्तस्मिन् ग्रामे प्रवासकः ।
तस्य भार्या मोददाख्या पाडरग्रामवासिनी ।
मासि भाद्रे सिते पक्षे सप्तमी कृत्तिकान्विता ।
गोधूलिसमये प्राप्ते कुंभलग्ने समन्विते ।
मधुमंगलनामानं मोददा पुत्रमश्नुते ।
मधुमंगलगोपालो श्रीकृष्णस्य सखा प्रियः ॥
यत्र तत्र गमिष्यति वियोगोऽपि कदाच न ॥

इति श्रीकृष्णसख्यो सुवलमधुमंगलनाम्नोर्जन्मस्थाननिरूपणम् ।

ततः संकेतस्थले विह्वलस्वरूपस्यावस्थास्वरूपवर्णनम् ।

द्वादशवर्षसंख्याकै रवस्थाभिः स्वयं हरिः ।
विह्वलं गतः श्रीकृष्णः कदम्बलतिकासु च ॥
कृष्णे विह्वलमागते प्रियकरे क्रीडाश्रमेणान्विते
भूषाभिः स्खलिते दुकूलपतिते हस्ते गृहीते लताम् ।
तत्रास्मिन्समये गृहीतसुबले सख्यौ महासुन्दरे
वर्षद्वादशसंयुते सुखकरे जाते तदा विह्वले ।
एतस्मिन्समये कदम्बलतिकां कृष्णानुजे वल्लभे
तत्रास्मिन्मधुमंगलेन सखिना स्थित्वा सुवलो सखा ।
एवं यत्र चापि समागतास्ते कृष्णसुबलमधुमंगलांताः ।
लताः गृहीताः करपंकजैः स्थिताः मनोरमास्थाः नरदेवसंभवाः ॥
राधा विह्वलतां गता शुभकरा हारं स्खलंती तदा
हस्ते ग्राहवती कदम्बलतिकां स्थित्वा यदा सुन्दरी ।
तत्रास्मिन् ललिता गृहीतशुभगा जाता स्वयं विह्वला
तत्रास्मिंश्च विशाखया ग्राहयती तत्र त्रयो विह्वलाः ॥
षड्भिर्मूर्त्तिभिः संयुताः विरचिताः पाषाणमूर्त्तिस्थिताः ।
संकेतस्थलके विराजितशुभाः कृष्णादयो विह्वलाः ।
तेभ्योऽहं नमनं स्करोमि सततं पीताम्बरेभ्यो स्थले

श्रीगोविन्दकृपानुभावसुभगश्रीविठ्ठलाभ्यो नमः ॥

अथ व्रजेषु श्रीकृष्णजन्मोत्सवफलं—

ब्रह्मवैवर्त्ते कृष्णखण्डे—

गोकुले नगरे रम्ये श्रीकृष्णस्य च जन्मनि ।
चतुर्षु त्ववतारेषु ह्यष्टमादिचतुर्षु च ।
अष्टमी नवमी चैव द्वादशी च चतुर्दशी ।
तेषु संख्याफलं प्रोक्तं ग्राम ग्रामेषु त्विष्टदम् ।
जन्मोत्सवं प्रकुर्वतां फलं कोटिगुणं भवेत् ॥
गोकुले चंद्रमामूर्त्तेरभिषेकं समाचरेत् ।
मथुरायाऽभिषेकाच्च जन्मन्युत्सवसंभवात् ।
फलं लक्षगुणं प्रोक्तं गोपीनाथाभिषेचनात् ।
वृन्दावने फलं प्रोक्तं द्विलक्षगुणसंभवम् ।
गोवर्द्धने फलं प्रोक्तमयुतं गुणितं भवेत् ।
श्रीकुंडे ह्ययुतार्द्धं च गुणितं फलमाप्नुयात् ।
काम्यवने च विंशैस्तु सहस्रैः गुणितं फलम् ।
नन्दग्रामे त्रिभिः संख्यैरयुतैः फलमाप्नुयात् ।
वृषभानुपुरे प्रोक्तं चतुर्भिरयुतं फलम् ।
संकेतवटके प्रोक्तं षड्भिरयुतसंभवैः ।
गुणितं फलमाप्नोति कृष्णस्याप्यभिषेचनात् ।
त्रिवेणीतटसंस्थाने ललिताग्रामसंभवे ।
द्वादशायुतसंख्यकैः गुणितं फलमाप्नुयात् ।
लाडिलेयाभिषेकाच्च बलदेवस्य मन्दिरे ।
गर्जपुरे फलं प्रोक्तं सहस्रगुणितं भवेत् ।
छत्रवनेऽयुतैरष्ट गुणितं फलमाप्नुयात् ।
वने खदिरके नाम्नि फलं लक्षगुणं भवेत् ।
वनेऽस्मिन् कोकिलाख्याश्च द्विसहस्रगुणं फलम् ।
भाण्डीरवनके तस्मिन्सहस्रगुणितं फलम् ।
वटे जाववटे तस्मिन्सप्तभिश्चायुताधिकैः ॥

गुणितं फलमाप्नोति जन्मन्युत्सवकारकः ।
कर्हपुरे फलं प्रोक्तं त्रिसहस्रगुणं भवेत् ।
पुरे चिकित्सके प्रोक्तं दशायुतगुणं फलम् ।
कमर्य्याख्यां नगर्यां च द्विसहस्रगुणं भवेत् ।
स्वर्णपुरे फलं प्रोक्तं चतुर्भिरयुतैर्गुणैः ।
व्रजेषु व्रजद्वारेषु वलदेवादिषु क्रमात् ।
वनेषूपवनेष्वेषु वटेषु राजद्वारेषु ।
वर्षेषु मूर्त्तिपूक्तेषु वेश्मसु येषु तेषु च ।
फलं शतगुणं प्रोक्तं त्वन्यस्थाने चतुर्गुणम् ।
म्लेच्छस्थानेषु भ्रष्टेषु जन्मोत्सवप्रतिष्ठितम् ।
गृन्हन्ति राक्षसाः पूजां प्रतिष्ठां विधिवत्कृताम् ।
तीर्थस्थाने फलं प्रोक्तं सहस्रगुणिताधिकम् ।
गंगादिसर्वतीर्थानां स्थाने स्थाने फलाधिकाः ।
स्वरूपांश्च समाधाय जन्मोत्साहं समाचरेत् ।
श्रीकृष्णस्यावतारेषु राजसेवा उदाहृता ।
तेषु तेषु विधानेन जन्मोत्सवमकारयेत् ।
स्वरूपध्यानतः कुर्य्यात् क्रमतः क्रमतः शुचि. ॥

इति भविष्यपुराणे निषेधः ।

अथ श्रीकृष्णावतारजन्मन्यभिषेकप्रयोगविधिः—

श्रीवलदेवमन्दिरे त्रिवेणीतटस्थले ललिताग्रामे श्रीलाडिलेयं श्रीकृष्णस्वरूपमिष्टदेवं स्वयं श्रीकृष्णेन दत्तं स्वोत्थाय तस्यायं प्रयोगविधिः । पूर्वमेव भूस्थलं संस्कृत्य तत्र चतुः स्तम्भादि-युक्तं मण्डपं कुर्य्यात् । तदुपरि वितानं वध्नीयात् । तत्र हस्त-मात्रपरिमितां वेदिकां कुर्य्यात् । मण्डपं त्रिगुणितन्तुवेष्टितं चतुर्द्वा तोरणध्वजासहितं कुर्यात् । वेदिकानिकटे सर्वतो-भद्रमण्डलं कुर्यात् । ततः सर्वसामग्रीं संपाद्याचार्य्यादिवरणं कुर्यात् ।

संकल्प:—श्रीगोदावरीतटस्थदक्षिणदेशे श्रीकृष्णाज्ञाप्रवर्त्तमान-त्रिवेण्यास्तटस्थले श्रीललिताग्रामस्थिते श्रीयुगलमूर्त्ते वलदेव-मन्दिरे उच्चग्रामाभिधानके स्थाने यजुर्वेदान्तर्गताश्वलायन-शाखापस्तंबसूत्रान्वितभार्गवच्यवनाप्नुवानौरवजामदग्नेतिपंच-प्रवरान्वितश्रीवत्स-गोत्रोत्पन्न - श्रीनारायणभट्ट - श्रीकृष्णाज्ञा श्रीयुगलवलदेवकृष्णोपासक: श्रीमद्भट्टभास्करात्मज-श्रीनारा-यणभट्टगोस्वामिशर्म्माहं स्वकुलसकलमनोर्थवांछितफलसि-द्धयर्थं द्वादशोत्तरषोडशशते संवत्सरे मासोत्तमभाद्रपदेमासि कृष्णपक्षे रोहिणीबुधसंयुतामष्टम्यां तिथौ श्रीकृष्णस्वरूपे ष्टदेव — श्रीलाडिलेयस्याभिषेकार्थं कृष्णजन्मन्य - वसरे त्रयोदशघटीरात्रिव्यतितवृषलग्नोदये सप्तदशघटीरात्रिशेषे-त्वमाचार्यत्वेन त्वामहं वृणे इति ब्रूवन् वस्त्रकुण्डलमुद्रि-कादिभि र्यथाशक्त्या पूजयेत् । एवमृत्विगादिकमपि । ततो व्रतोऽस्मीति ब्रूयात् तत: प्रतिसरं वध्नीयात् । श्रीलाडिलेय-स्वरूपं वालं ध्यात्वा "अवतारप्रसंगेन शरीरांगस्य भेदत:। भिन्न-भिन्न समाख्याता: मंत्रा: ब्रह्मादिनिर्मिता: । अभिषेक-प्रयोगास्ते भिन्नभिन्ना उदाहृता:" इति ब्राह्मे । तत: पुण्याह-वाचनं "पुनंतु मां देवजना: पुनंतु मनसा धिय: । पुनंतु विश्वा भूतानि जातवेद: पुनीहि माम्" इति पठित्वा "अथास्य कर्मण: पुण्याहं भवंतो ब्रुवंतु ओं पुण्याहं ओं पुण्याहं ओं पुण्याहं अस्य कर्मण: स्वस्ति भंवंतो ब्रुवंतु आयुष्मते स्व-स्तिन इंद्रो वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा विश्ववेदा: स्वस्तिन-स्ताक्ष्यो अरिष्टनेमि: स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु । ओं अस्य कर्मण: ऋद्धिं भंवंतो ब्रुवंतु ऋध्यतामृद्धि: समृद्धि: इति पुण्याहवाचप्रयोग: ॥

अथ दिग्वन्धनं—दक्षिणे श्वेतसर्षपान् गृहीत्वा "प्राच्यै दिशे

देवतायै दिशे नमः स्वाहा, सरक्षगणायै दक्षिणायै दिशे नमः स्वाहा, सजलपरिचारकायै अवाच्यै दिशे नमः स्वाहा, सयक्षगणायै उत्तरायै दिशे नमः स्वाहा, इति पठन् चतुर्दिक्षु प्रक्षिपेत्। ततस्त्रिगुणितरक्तसूत्रेण सप्तस्तंभान् परिवेष्टयेत्। ततः श्रीभगवद्विष्णोर्मधुच्छंदस् गोत्रोद्भवाभीरकुलोद्दोपितस्य श्रीकृष्णावतारस्य लाडिलेयस्वरूपस्य "श्रीवलदेवमन्दिरे मण्डपं रक्षस्वेति" पठित्वा दिक्पालान्पूजयेत्, इत्यनुक्रमतः दश दिक्पालान् पूजयेत्। अग्निकोणे कपिलवर्णध्वजादण्डे "साग्निगणाय अग्नये नमः" इत्यग्निं पूजयेत्। दक्षिणस्यां दिशि नीलवर्णध्वजादण्डे "सरक्षगणाय यमाय नमः" इति यमं पूजयेत्। एवं क्रियाभाजः पताकाः दश अर्च्चयन्। नैऋतकोणे श्यामध्वजादण्डे "सगणाय नैऋताय नमः" पश्चिमस्यां दिशि श्वेतवर्णध्वजादण्डे "सजलपरिचारकगणाय वरुणाय नमः" इति वरुणं पूजयेत्। वायव्यकोणे धूम्रध्वजादण्डे "सयक्षगणसोमाय कुवेराय नमः स्वाहा" इचि चन्द्रकुवेरौ पूजयेत्। ईशानकोणेऽसितवर्णध्वजादण्डे "सगणाय ईशानाय नमः स्वाहा," अधोभागे गौरवर्णध्वजादण्डे "सहस्रफणपत्नीकाय शेषाय नमः स्वाहा," उपरिष्टाद्भागे "रक्तवर्णध्वजादण्डे "सपत्नीकाय ब्रह्मणे नमः स्वाहा" इति ब्रह्माणमर्च्चयेत्। मन्दिरे त्रिवेणीतटस्थितं ललिताग्रामवासिनं षडशीत्युत्तरनवशतफणसहितचतुर्दशफणान्वितं श्रीयुगलमूर्त्तिं वलदेवं हलमूषलायुधसहितं सिंहासनस्थले गन्धादिभिरभ्यर्च्चयेत् इति। "मण्डपं रक्षस्वेति" पठित्वा सर्वत्र धूप-दीपादिभिरभ्यर्च्चयेत्। ततः सर्वतोभद्रमण्डपस्य निकटे उपविश्य पंचवर्णरञ्जिताष्टदलपद्मं रचयित्वा तत्र तस्य कमलस्याष्टकर्णिकासु पंचवर्णरञ्जिततन्दुलान् पूरयेत्। तदुपरि दर्भकुशं निधाय तदुपरि

कलशं स्थापयेत्। ततः सर्वतोभद्रमण्डलपूजनपूर्वकं रक्तसूत्रैस्त्रिगुणिततंतुवेष्टितं मुखे आम्रपल्लववेष्टितं धूपितं च कुर्यात्। ततस्तत्र कामवीजस्मरणपूर्वकं कुम्भे पंचरत्न-नवरत्न-गन्धाष्टकं क्षीरवृक्षक्वाथतोयं प्रक्षिप्य ततः मूलमंत्रमुच्चरन् जलं पूरयेत्। ततोऽंकुशमुद्रया तीर्थानावाहयेत्। अंगुष्ठानामिकायुक्तया मुद्रया विलोडयेत्। तत्र कुम्भे बिष्णुक्रान्तामिन्द्रवल्लीं दूर्वां च निःक्षिपेत्। तर्जनीमध्यमे प्रसार्य्यार्ऽनामिकाकनिष्ठकांगुष्ठैः कुशं गृहीत्वा अस्त्रमंत्रं च पठन् प्रोक्षणं कुर्यात्। ततोऽस्त्रमंत्रेण ताडनं कुर्यात्।

भविष्योत्तरे—

करवीरस्य पुष्पाणि गृहीत्वाक्षरसंख्यया।
ततस्तै ताडयेन्मंत्रं कामवीजेन मंत्रवित्॥

कामवीजं पठन्नाभ्युक्षणं कुर्यात्, कुशेनावगुंठनं, ततः षडंगन्यासं ततो धेनुमुद्रयाऽमृतीकरणम्॥

आग्नये—धूमाच्छादनसंयुते यदि कलाः संख्यास्त्रयश्चान्विते
ज्वाला व्यालमुखी शुभांगसदृशा वन्हेश्च मूर्त्तिस्थिता।
तीव्रा प्रज्वलिता तदा शुभकरी पीतारुणा निर्मला
चत्वारश्च कलान्विता हविभुजो मूर्त्तिः स्थिता सुंदरी॥
निर्धूमा यदि जातवन्हिशुभगा स्यामासितास्ताः कला
संख्यकास्त्रय भस्मगा सुखकरी मूर्त्तिस्थिता कामदा।
एताभिश्च कलाभिरन्वितमयी दिग्भिः समा संख्यकैर्-
मूर्त्तिर्व्याप्तदिगंतरागतमयै वन्हेस्तु मूर्त्यै नमः॥
एतादृश्यै दशकलाव्याप्तदिगंतरायै वन्हेस्तु मूर्त्यै नमः।
एतादृशे दशकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नमः॥

आदित्यपुराणे—

कालत्रये द्वादशभि कलाभि र्विराजते भास्करतेजधामा।
चत्वारश्च कलाः स्थिताः ह्युदयके सिंदूरकान्तिप्रभा॥

क्रुद्धासारथिकान्विताय भगवत्सूर्याय तस्मै नमः
मध्यान्हे परिपूर्णमण्डला यदा माना शुभा तीव्रगा
लिंगाख्याभिः कलाभिरन्वितमय श्रीसूर्य तुभ्यं नमः।
अस्तं प्राप्तदिगंतरे यदि कलास्तीक्ष्णा सुवेणी २ गुणा ३।
तारास्पर्शवतीधृताय प्रभवे सूर्याय तुभ्यं नमः।
एतादृशे यद्द्वादशकलाव्याप्तसूर्यमण्डलाय नमः।
शुक्ले षोडशवासरेषु शुभगाः वृद्धिं गताः सुन्दरा
स्ताभिः षोडशाभिः कलाभिः सहितश्चंद्रो शुभो मंडलः।
कृष्णे क्षीणमुपगताः ह्यशुभदाः संख्याः षोडशास्ताभिः
संयुतचन्द्रमण्डलस्तदा त्याज्यो शुभे मंगले॥

चन्द्रस्य मण्डलं ग्राह्यं शुक्लपक्षसमुद्भवम्।
चन्द्रस्य मण्डलं त्याज्यं कृष्णपक्षसमुद्भवम्॥

इति चन्द्रमण्डलनिषेधः।

स्कान्दे–शुक्ले षोडशवासरे प्रतिदिनं वृद्धिं गतास्ताः कलाः
ज्योत्स्ना शुभ्रमयीति नेत्रसुखदा मोदा प्रमोदा शुभा।
कान्तिः स्वच्छमयी महागुणमयी शीता सुशीता गता
व्याप्ता लोकप्रकाशनमयी नीताः कलाः षोडशाः॥
एताभिः समुपस्थितो यदि शशी पूर्णो निशां दीव्यते।
एकैकां सकलां प्रवर्द्धति दिशं सोमाय तस्मै नमः।
इत्येतादृशाय षोडशकलाव्याप्तसोममण्डलाय नमः।

ततः अष्टोत्तरशतं सहस्रं वा मूलमंत्रं जपेत्। ततस्तेन जलेन सर्वं प्रोक्षयेत्। गोमयाम्भसा त्रिकोणमण्डले शंखस्थापनं कुर्यात्। ततः शंखासनं प्रक्षाल्य स्थापयेत्। "अस्त्राय फडिति" मन्त्रेण शंखं प्रक्षाल्य ततस्तत्र गंधाक्षतान् हृदयमंत्रमुच्चरन् क्षिपेत् ततः मातृकाक्षर-प्रतिलोमैः पूरयेत्। ततः शंखपीठे "दशकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नमः" इति मंत्रं पठन् पूजयेत्।

ततः "द्वादश कलाव्याप्तसूर्यमण्डलाय नमः" इति जपन् गंधा-दिभिः पूजयेत् ।

वृहद्गौतमीये—

त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विधृतो विष्णुना करे ।
निर्मितोऽखिलदेवेषु पांचजन्य नमोऽस्तु ते ॥

"पांचजन्याय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि स्तन्नो शंखो प्रचोदयात्"

गारुडे— गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ! ।
नर्मदे सिंधु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधो भव ।

ततस्तत्र तीर्थानामावाहनमंकुशमुद्रया । ततः शिखामंत्रेण गालिनीमुद्रां प्रदर्शयेत् । ततः जलं प्रपश्येत् । ततो पंचांगन्यासं कुर्यात् । ततश्चक्रधेनुमुद्रादिदर्शनं, ततोऽष्टधा मूलमंत्रं जपेत्, ततः सर्ववस्तु प्रोक्षणं, ततः श्रीकृष्णं लाडिलेयस्वरूपं दृढ़ासने उपवेश्य यथाक्रमेणोपचरेत् । ततः पंचदश नव बा त्रीणि वा पात्राणि स्थापयेत् । मूलमंत्रमुच्चार्य्य श्रीभगवत् कृष्णावतारस्वरूप लाडिलेय स्वागतमित्यभिनंद्य पुष्पषट्कं दद्यात् । "श्रीभगवत्कृष्णावताराय नमः" ।

वृहन्नारदीये सप्तविंशे पटले—

विष्णोश्चतुः षष्टिः कलाश्चतुः षष्टिः सखीषु च ।
व्याप्ताः लोके विराजंते ललितादिषु संस्थिताः ।
चतुर्भिश्च चतुर्भिस्तु चतुर्द्धैव विराजते ।
अष्ट अष्ट कलैकस्यां विराजन्ते पृथक् पृथक् ॥

गौरा श्यामा मनोहरा शुभकरी मानार्थदा सुन्दरी
पीता रामा सुखप्रदा सुमनसा श्रीकान्तिः कामप्रदा ।
रासक्रीडनतत्परा भगवती मेना सुकेशीरिताः
श्रीकृष्णस्य मुखारविन्दसरसि संस्थाः सुखं रम्यताम् ॥ ६
पुष्पा नीलरुचा शुभा प्रभवती कांतिः सुकांतिः सुखा
मोदा मोदमयी शुभांगदलिनी रामानुजा वल्लभाः ।

श्रीदामा सुखसुंदरी शुभरुचा कांचीरिताः षोडशाः
श्रीकृष्णस्य हृदि स्थिताः भगवते विष्णोः सुखं रम्यतां ॥१६
नानाक्षीरपयोधरा सुविमला भ्रान्ती सुकांची मना
कामा केलिप्रदायिनी सुखरिता शृंगारचेष्टा रमा।
वेणी वेणुरता सुकांचनमयी श्रीकृष्णक्रीडा रताः
बालाः षोडश संख्यकाः करतलाद्बाहोः स्थिताः सुंदराः ॥१६

प्रिया रतिः श्रीकमलासनस्था पद्मा सुपद्मा नवनीतकोमला।
वारांगना राजितश्यामकेशा शुभांगदाम्नी परिहारभूषणा।
नवीनीका श्यामलता लतास्रची मनोहरांगी नवनीतवल्लभाः
मनोरमा पादसरोरुहे स्थिताः कृष्णस्य विष्णोः सुखदायिन्यः सदा॥

"इति चतुः षष्टिः कलाः स्थिताः हरे,
सुखारबिन्दे हृदि बाहुपादयोः।
स्थानेषु चांगेषु विराजमाना-
श्चतुर्षु सर्वावयवेषु व्यापिताः।
एतैः कलाभिः समुपाश्रितो हरिः
श्रीलाडिलेयो भुवने प्रदीपितः॥"

जन्मदिने तु श्रीभगवत्कृष्णावतारैतादृशलाडिलेयस्वरूपस्य श्रीयुगलमूर्त्तेर्बलदेवस्य मन्दिरे त्वाविर्भावं संभाव्य पश्चात् स्वागतादिप्रश्नं कुर्य्यात्॥

ततो मूलमंत्रमुच्चार्य्य आसनं गृहीत्वा—
"श्रीभगवत्कृष्णावतार इदमासनमास्यतामिति" वदन् आसने पंच पुष्पाणि कूर्च-दूर्वासहितं दद्यात्। ततः—श्यामाकपंचकं अब्जपंचकं विष्णुकान्तापंचकं एतत्सहितं पलचतुष्टयं जलं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीभगवन्कृष्णावतारलाडिलेयस्वरूप इदं ते पाद्यं नमः" इति ब्रुवन् चरणाम्बुजे पाद्यं दद्यात्। ततः जातीलवंगकक्कोलानां षट्पलं क्वाथं गृहीत्वा मूलमंत्र-मुच्चरन् "श्रीभगवते श्रीकृष्णावताराय पीठगोत्रप्रदीपिताय

लाडिलेयस्वरूपाय स्वधा" इति श्रीभगवच्छ्रीकृष्णावतार-लाडिलेयस्वरूपमुखे कांस्यपात्रेण आचमनं दद्यात् ॥

ततश्चन्दनकर्पूराद्यात्मको गंधः पुष्पाणि अक्षतं यवाः दूर्वा-तिलश्वेतसर्षपाकुश-सहितं चतुः पलं जलमादाय मूलमंत्रमुच्चार्य "श्रीभगवते श्रीकृष्णावताराय लाडिलेयस्वरूपाय स्वाहा"

आदिवाराहे--

"तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रयविनिर्मुक्तस्तवार्घं कल्पयाम्यहम्" ॥

इत्युच्चरन् श्रीभगवतः कृष्णावतारस्य लाडिलेयस्वरूपस्य शिरस्यर्घ्यं दद्यात् ॥

"त्वद्भक्तिलेशसंपर्को परमानन्दसंज्ञकः ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥"

पादार्घमेतेषु प्रत्येकमाचमनं ज्ञेयम् ॥

ततो मधुपर्क–

सर्वकालुष्यहीनाय परिपूर्णसुखात्मके ।
मधुपर्कमिदं देव कल्पयामि प्रसीद मे ॥

आज्यं दधि मधुरलैकं कांस्यपात्रे गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य "श्रीभगवते कृष्णावताराय लाडिलेयस्वरूपाय स्वाहा" इति मंत्रं पठन् मुखे आचमनं दद्यात् ॥

वेदानामपि वेदाय देवानां देवतात्मने ।
आचमनं कल्पयामीश शुद्धं त्वां शुद्धिहेतवे ॥

ततः आचमनार्थं पलमेकं जलं दद्यात् ॥

ततस्तिलपृष्ठेन श्रीकृष्णावतारलाडिलेयस्वरूपमुद्धृत्य--- तत्र मंत्राः–,,मूर्द्धानं दिवा अरतिं पृथिव्या वैश्वानर मृत आजातमग्निं कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयंत देवाः" इति पठन् वस्त्रपरिवर्त्तनं कारयेत् ।

"वसवस्त्वा पुरस्तादभिषिंचंतु गायत्रेण छंदसा रुद्रास्त्वा दक्षिणतोऽभिषिंचंतु त्रैष्टुभेन छंदसा वरुण अगहि" इति मंत्रं पठन्पंचाशत्पलजलेन श्रीदेवकीपुत्रं श्रीकृष्णलाडिलेयस्वरूप प्रथमं स्नानं दत्वा पश्चात्स्नापयेत् ॥

"ततस्तिलोसि सोमदेवत्यो गोसबो देवनिर्मितः प्रयत्नमद्भिः पृक्तः प्रयत्नः स्वमेहि पितृन् लोकान् प्रीणाहि न स्वाहा" इति पठन् मूलमंत्रं च पठन् स्नापयेत् ॥

ततः पंचामृनेन-पंचपलदुग्धं गृहीत्वा "पयः आदित्या स्त्वापश्चादभिषिचतु प्रविशः संतु मुखं जगतेन छंदसा विश्वे देवा स्त्वा उत्तरतोऽभिषिंचंतु आनुष्टुभेन छंदसा वृहस्पति." इति पठन् दुग्धेन स्नापयेत् ॥

ततः पंचपलपरिमितं दधि गृहीत्वा—"दधित्वोपरिष्टादभिषिंचंतु पान्डुतेन छंदसा क्राण्वो आकारिषं उत्तरं वर्हिष उत्तरः" इति पठन् दघ्ना स्नापयेत् ॥ ततः पंचपलपरिमितं धृतं गृहीत्वा—"घृतं वर्हिस्तृणाति प्रजावै वर्हिर्यजमानः उत्तरवर्हियजमान मेवायजमाना दुत्तरं करोति" इति पठन् घृतेन स्नापयेत् ॥

ततः मधु गृहीत्वा—यजमानलोके मधुवाता वै दक्षिणानि हविर्ंषिस्नपय भ्रातृब्य क्षरंति लोक उत्तराणि दक्षिणान्युत्तराणि करोति" इति पठन् मधुना स्नापयेत् ॥ ततः शर्करां गृहीत्वा—"शुक्रं ज्योतिषि इयं वै पूर्वोत्तरा रात्रो सा वुत्तरो मन पूर्वो वा उत्तरो देवो वः सवितोत्पन्न प्राणाः पूर्वोऽयान उत्तरः स्वधा" इति पठन् शर्करया स्नापयेत् ॥ ततः सप्तपलजलं गृहीत्वा—"सप्तते अग्ने समिधः सप्तजिव्हाः सप्तऋषयः सप्त धाम प्रियाणि सप्तहोत्राः सप्तधा त्वा यजंति सप्त योनीरापृणस्वा घृतेन स्वाहा" इति सप्तपलजलेन संमार्जयेत् ॥

ततः संस्कृत्य सर्वतोभद्रघटं जलं सर्वघटेषु प्रक्षिपेत् । तत्र अष्ट घटेष्वष्टदिक्षु अनुक्रमेण सर्वौषधिमहौषधिर्वीजाष्टकं नवरत्नं पुष्पं फलं गंधं चंदनं प्रक्षिपेत् । नवमघटमग्रे दशमं सहस्र-धारकलशं तत्र नवमं कलशं जलं दूर्वापुंजसहितेन शंखेन स्नापयेत् । "आपोहिष्ठे"ति त्रिभिः पठन् पूर्वदिशि स्थितं सकलं सर्वौषधिद्रवरससहितं गृहीत्वा—

"या ओषधोः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरामनैनु वभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् ।

व्रह्माण्डे— मोरशिषा मुरामांसी वचा कुष्टं शैलेयं रजनीद्वयं ।

सटी चंपकमुस्तं च सर्वौषधिगणः स्मृतः ॥

ततः महौषधिद्रवरससहितं घटं गृहीत्वा—"सुमंगलीरियं वधूरिमाॐ समेत पश्यत सौभाग्यमस्यै दत्वा याथास्तं विपरेतन" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् ॥

सहदेवी वचा व्याघ्री वला चातिवलास्तथा ।
संखपुष्पी तथा सिंघी सूर्यावर्त्ता तथाष्टमी ।
महौषध्याष्टकं ह्येतत्महास्नानेषु योजयेत् ।

ततः वोजाष्टकयुतं घटं गृहीत्वा—"आव्रह्मन्व्राह्मणो व्रह्मव-र्च्चसो जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योतिव्याधी महारथो जायतान्दोग्ध्रो धेनु र्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरंध्रिर्योषा जिष्णूरथेष्ठाः सभेयो युवाश्य जयमानस्य व्वीरो जायतान्निका-मेनि कामेनः पर्जन्योव्वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यंतान्यो-गक्षेमो नः कल्पतां" इति पठन् स्नापयेत् ॥ भविष्ये—

यव-गोधूम-नीवार-तिल-श्यामार्क-शालयः ।
प्रियंगवो व्रीहयश्च स्नाने ह्येतानि कल्पयेत् ॥

ततः नवरत्नं कलशं गृहोत्वा—"हिरण्याक्षः सविता देव आगादधूरत्नानि दाशुषे वीर्याणि" इति मंत्रं पठन् श्रीकृष्ण-

स्वरूपमिष्टदेवं लाडिलेयं स्नापयत् ॥

वज्र मौक्तिक पुष्पार्थं विद्रुमं पद्मरागकं ।
नील-माणिक्यतश्चैव माणिक्यं स्वर्णमेव च ।
नवरत्नमिति प्रोक्तं सर्वदेवाश्रयं महत् ॥

ततः पंचाशदधिकपुष्पयुक्तं कलशं गृहीत्वा—"सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिचामोन्द्रस्येन्द्रियेण वलाय श्रियै यशसेऽभिषिचामि" इति मंत्र पठन् पुष्पोदकेन स्वमिष्टदेवं कृष्णस्वरूपं श्रीलाडिलेयं स्नापयेत् ॥

ततः फलयुक्तं कलशं गृहीत्वा—"याः फलनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः वृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुंचन्वत्व हसः" इति मंत्रं पठन् फलोदकेन श्रीकृष्णस्वरूपं श्रीलाडिलेयं स्नापयेत्। ततः गंधोदकयुक्तं कलशं गृहीत्वा—गायत्रीं पठन् पुनः श्रीकृष्णस्वरूपं लाडिलेयं स्नापयेत् । ततः गंधोदकयुक्तं कलशं गृहीत्वा गायत्रीं पठन् पुनः श्रीकृष्णस्वरूपं लाडिलेयं स्नापयेत् ॥

नारदपंचरात्रे—चन्दनागुरुकर्पूरमिश्रो गंधमिहोच्यते ॥ ततः चंदनोदकघटं गृहीत्वा—"ओं द्रुपदादिवमुमुचानः स्विन्नः स्नातोमलादिव पूतं पवित्रेण वाज्यमापः शुद्धंतु मैनसः" इति मंत्रं पठन् श्रीकृष्णस्वरूपमिष्टदेवं श्रीलाडिलेयं स्नापयेत् ॥

ततः सहस्रधारकलशे सर्वौषधिमहौषधिवीजाष्टकं सर्वरत्नानि पुष्पाणि फलानि प्रक्षिप्यतां "सवितुर्वरेण्यस्य चित्रमाहं व्रणे सुमति विश्वजन्यां यामस्य काण्वो प्रदुहत प्रयाणां सहस्रधाराय सामहीगां" इति मंत्रं पठन श्रीकृष्णस्वरूपं श्र लाडिलेयं स्नापयेत ॥ पुनः "या आषधीरि" ति पठन् महौषधिना स्नापयेत् । "आव्रह्मन्नि" ति मंत्रं पनः पठन् वीजाष्टकेन पुनः स्नापयेत् । "हिरण्याक्ष" इति मंत्रं पठन् नवरत्नानि स्नापयेत् ।

"सरस्वत्यै" इति मंत्रं पुनः पठन् पुष्पोदकेन पुनः स्नापयेत्। "याः फलिनी" रिति पठन् फलोदकेन पुनः स्नापयेत्। केचित् सहस्रधारकलशेन सर्वौषध्यादिं प्रक्षिप्य तत्तन्मंत्रैः पटलैश्च स्नापयन्। अपरे सहस्रधारकलशेन पूर्वं शुद्धोदकेन स्नापयन्। ततः सर्वौषधिप्रभृतीना प्रत्येकं प्रत्येकं स्नापयन्ति। ततः सहस्रधारघटेणैव "एतान्विंद्रस्तवाम शुद्धꣳ शुद्धेन साम्ना शुद्धै रुक्मै र्वा वृद्धांस शुद्ध आशीर्वान्मम रुद्रः शुद्धो न आगहि शुद्धः शुद्धाभिः भूतिभिः शुद्धोदयं निधारय शुद्धो ममद्धि सौम्य इन्द्रः शुद्धोहि नोरयिं शुद्धो रत्नानि दासुषे शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धोवाचं शिखाभासे" इति मंत्रं पठन् श्रीकृष्णस्वरूपेष्टदेवस्य लाडिलेयस्य शिखाभागे स्नापयेत्॥

ततो वस्त्रेण मार्जनं, ततो न्यासं कुर्यात्। ततः वस्त्राण्यादाय "अभिवस्त्रासु वसनान्यर्षाधि धेनुः सुदुघो पूर्यमाण अभिचंद्रां-तर्तयवे माहिरण्येभिश्च पथिनो देवसोमः" इति पठन् श्रीदेवकी-पुत्राय श्रीकृष्णावतारस्वरूपाय श्रीलाडिलेयाय दद्यात्। ततः "सहदेवी-सहभद्रा- सूर्यावर्त्ता - कुशाग्रकैः शिरोष- रजनोभ्यां निर्मथ्य निंवराजी - लवणराजी - सर्षपैः दृष्टिमुत्तार्यं पादौ प्रक्षिपेत्। ततः सिंहासने श्रीभगवन्तं कृष्णावतारस्वरूपमिष्ट-देवं लाडिलेयं पाद्यादिभिरुपचरेत्॥

ततो मंगलार्थं नारिकेलफलान्वितं कलशं स्नापयेत्। ततस्त-न्मंत्रोक्तन्यासपूजादिकं कुर्यात्। ततोऽजनतिलकयज्ञोपवीत-मालाभरणादिना शृंगारं कृत्वा प्रतिसरं वघ्नीयात्। तथाहि पीतडोरकं गृहीत्वा "विश्वेत्ताते सवनेषु प्रवाच्याया चकर्थ-मघवन्निंद्रसुन्वते पारावतं यत्पुरुसंभृतं वस्वपा वृणो शरभा-यऽऋषिं वंधवे, वृहत्साम क्षत्रभृद्वृद्ध वृष्ण्यं त्रिष्टुभौजः सुभि-तमुग्रवीरं इन्द्रस्तोमेन पंचदशेन मध्यमिदं वातेन सगरेण रक्ष"

इति पठन् श्रीभगवच्छ्रीकृष्णस्वरूपस्य लाडिलेयस्यहस्तेवघ्नीयात् । ततः आदर्शं गृहीत्वा—"प्रतिपदसि प्रतिपदे त्वानुपदे त्वा संपदि संपदे त्वा तेजोसि तेजसे त्वा" इति मंत्रं पठन् दर्शयेत् । भूषणादीनि मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीभगवन् श्रीकृष्णावतार श्रीलाडिलेयस्वरूप इदं पुष्पं ते निवेदयामि" इति सर्वं निवेदयेत् । ततो धूपादिकं कृत्वा नैवेद्यं समर्पयेत् । ततः मन्दिरोपरि ध्वजां पताकां वघ्नीयात् । ततः ताम्बूलं, ततः दूर्वापुंजं आम्रपल्लवं गृहीत्वा श्रीकृष्णस्वरूपं लाडिलेयमिष्टदेवमभिषिचेत् "समुद्रज्येष्ठा" इत्यादिभिः सूक्तमंत्रैस्तु "समुद्रज्यष्ठा सलिलस्य मध्यात्पुनाना यांत्यनिविशमानाः इन्द्रो या वज्री वृषभोरराद ताऽआपो देवीरिह मामवंतु, या आपो दिव्याऽउतवा स्रवंति खनित्रि माऽउत वाथाः स्वयं जाः । समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ताऽआपो देवी०, यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृतेऽअवपश्यञ्जनानाम् । मधुश्च्युतः शुचयो या पावकास्ता आपो देवी०, यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वेदेवा यामूर्जमदंति । वैश्वानरो या स्वग्निः प्रविष्टारमा आपो देवी०, त्रायंतामिह देवास्त्रायंतां मरुतां गणाः त्रायंतां विश्वाभूतानि यथायमरया असत् आप इद्वा उभेषजी रापा अमीवचातनीः, आपः सर्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वंतु भेषजं, हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिव्हा वाचः पुरोगवी अनामयि लुभ्यां त्वा ताभ्यां त्वोय स्पृशमसि, इमा आपः शिवतमा इमाः सर्वस्य भेषजीः इमा राष्ट्रस्य वर्धनीरिमाराष्ट्रभृतोऽमृताः याभिरिंद्रमभ्यषिचत्प्रजापतिः सोमं राजानं वरुणं यमं मनुं, ताभिरद्भिरभिषिचामि त्वामहं राज्ञं त्वमधिराजो भवेह महान्तं त्वा महीनां सम्राजं चर्षणीनां देवी जनित्र्यजीजनद्भद्राजनित्र्य जीजनत्" इत्येतैर्मन्त्रैः श्रीकृष्णस्वरूपं लाडिलेयमिष्ट

देवमभिषिंचेत्ततः आरात्तिकं कुर्यात्ततः ब्राह्मणान् भोजयेत् ॥
जन्माष्टम्युपोषणपारणनिषेधः—विष्णुधर्मोत्तरे—

जन्माष्टम्युपवासकः प्रियतमो भक्त्या हरेः संयुतः
रात्रौ जन्मनि संभवे त्ववसरे पंचामृतं पीयते ।
अन्नश्लेषविवर्जितं फलकृतं साखारभुक्तं करोत्
श्रीविष्णोः परमं पदं समनुयान्मोक्षाख्यकं धामकम् ॥
कृत्वा भक्षणभोजनं प्रतिदिने जन्मोत्सवे वासरे
बालक्रीडनतो यदा भवति यः कीटस्य योनिस्तदा ।
जन्मादधो भोजनलालसो यदा विष्णोर्विहीनो नरकं व्रजेन्नरः ।
दुःशीलो जातो पृथिवीतलेऽस्मिन्पापिष्ठनामा भवतीह लोके ॥

पाद्मे—नवमी रोहिणीयुक्ता तस्यां पारणमाचरेत् ।
व्रतो निष्फलतां याति कीटतुल्यं च भोजनम् ॥
कामना निष्फला याति विष्णुभक्तितिरस्कृता ।
नवम्यां रोहिणी भूयात्तुर्येण चरणेन च ।
पारणस्य तदा दोषो नैव तत्र न संशयः ।
त्रिभिश्च चरणैर्भुक्ता ह्यष्टम्यां चैव रोहिणी ।
चरणैकेन संविष्टा नवम्यां यदि संभवे ।
तदा तु पारणं कुर्य्याद्दोषो नास्ति महीतले ॥ इति
जन्माष्टमी निषेधः ॥

पाद्मे—चतुर्विंशति संख्यकास्त्ववतारसमुद्भवाः ।
विष्णो नारायणस्यैव कार्य्याणि सिद्धिहेतवे ।
अवतारास्तु चत्वारो पृथिव्यां दिव्यमूर्त्तयः ।
सर्वलोकहितार्थाय भविष्यन्ति जनात्यये ॥
श्रीमद्भास्करनन्दनो गुणमयो नारायणाख्यः स्वयं
श्रीकृष्णावतारं स्वरूपमधिकं श्रीलाडिलेयं प्रभुम् ।
वेणीमन्दिरसंस्थितो कृतमनः सख्याश्च ग्रामे तटे
चोच्चग्रामाभिधानसंभवमुदा जन्मोत्सवं तन्वते ॥
इति श्रीनारदसंहितायां गोकुलद्वारादिषु जन्माष्टम्यां वा
मुकुन्दादिश्रीकृष्णावताराभिषेकप्रयोगविधिः समाप्तः ॥

अथ श्रीराधाभिषेकप्रयोगः

श्रीभट्टः पुरमागतः प्रियकरो भानोस्तथा श्रीहरेः
राधामन्दिरसंस्थिते प्रियकरे जन्माभिषेकं करोत् ।
भानोर्मन्दिरसंस्थिते हरिप्रियाजन्मोत्सवे वासरे
मूर्त्तौ च युगले स्थिते प्रियकरे ब्रह्मगिरौ मन्दिरे ॥

ब्राह्मे – वृषभानुपुरे रम्ये वृषभानोश्च मन्दिरे ।
कीर्त्तिर्जनयती कन्यां राधिकां समनोहराम् ।
गौरांगां चारुशोभाढ्यां सीताशरपसमुद्भवाम् ।
मन्दिरे उत्सवं कार्य्यं राधाजन्मसमुद्भवम् ॥
तस्मिन्पुरे गिरौ रम्ये नाम्नि ब्रह्मणि संस्थिते ।
तस्योपरि कृतं स्थानं राधिकायाः सुनिर्म्मलम् ।
ब्रह्मणो वरदानेन लाडिलीलालसंज्ञकः ।
द्वयोस्थाने कृतावासो भानोर्मन्दिरसंस्थितः ।
द्वितीयं पर्वतस्यापि ब्रह्मनाम्नश्च मूर्द्धनि ।
युगलश्च विराजते लाडिलीलालरूपकः ।
भानोः पुरादिग्रामेषु व्रजेषु युगलेषु च ।
वनेषूपवनेषु च मथुरादिषु भूमिषु ।
म्लेच्छहीनेषु स्थानेषु राधाजन्मोत्सवं चरेत् ।
मुख्यजन्मोत्सवं प्रोक्तं वृषभानुपुरे स्थिते ।
पुत्रपौत्रधनधान्यदायकं कामनाप्रदम् ।
पुरापूक्तेषु स्थानेषु त्वयुतं गुणितं फलम् ।
परकीयां वदन्ति हि निन्दकाः नरकं गताः ।
पुनस्ते नरकं यान्ति सप्तजन्मादि जन्मसु ॥

विष्णुपुराणे–भाद्रे मासि सिते पक्षे षष्ठी स्यात्कलया युता ।
सप्तमी क्षययोगेन स्वौम्येन परिभोगिता ।
ज्येष्ठा बुधसमायोगे द्वितीये केवलाष्टमी ।
सप्तमी दृश्यते किंचिन्नैव क्वापि कदाचन ।
तदा तु सप्तमी कार्य्या राधिकाजन्मकारिणी ।

एतादृश्यां तु सप्तम्यां रात्रौ जन्मोत्सवं चरेत् ।
सप्तम्यां पूर्वविद्धायां दोषो नास्ति महीतले ।
ज्येष्ठा बुधविहीना सा सप्तमी त्वीदृशी भवेत् ।
तस्यां नैवोत्सवं कुर्य्याद्राधिकाजन्मसम्भवम् ।
द्वितीये ह्यष्टमी प्रोक्ता ज्येष्ठा बुधसमाकुला ।
तदा राधाष्टमी ग्राह्या परविद्धा शुभप्रदा ।
रात्रौ च नवमी प्राप्ता जन्मन्यवसरे यदा ।
तदा तु नैव दोषः स्याज्जन्मनश्चोत्सवस्य च ।
सप्तमी वृद्धितां याति द्विदिने सप्तमी यदा ।
तदा राधाष्टमी ग्राह्या सप्तमी संयुताष्टमी ।
ज्येष्ठा बुधसमायुक्ता सर्वकामार्थदायिनी ।
परविद्धा सदा कार्य्या वैष्णवाचारदायिनी ।

इति राधाष्टमीनिर्णयः निषेधश्च ॥

मात्स्ये—राधाभक्ताः प्रियाः सर्वे युगलोपासकास्तदा ।
उपवासं प्रकुर्वन्ति दोषो नास्ति महीतले ॥
स्मार्त्तकाणां विशेषेण व्रतं प्रोक्तं शुभप्रदम् ।
उत्सवं वैष्णवानां च विधिपूर्वं प्रकाशितम् ।
परकीयस्वभावेन व्रतं नैवाचरेत् क्वचित् ।
मृषावाक्याणि चेच्छन्ति निन्दकाः निरयं गताः ।

इति व्रतनिषेधः ॥

पूर्वोक्ता सप्तमी चैषा ज्येष्ठा-बुधसमाकुला ।
चतुर्विंशद्घटी रात्रिर्गता त्रैयामिकी भवेत् ।
यदा सप्तघटी शेषा सिंहलग्नमुपागता ।
तत्क्षणे वृषभानोश्च कन्याजन्मोत्सवं चरेत् ॥

इति मार्कण्डेये ।

तत्रास्मिन्मन्दिरे श्रीभट्टः श्रीराधाभिषेकस्य प्रारम्भं करोति-पूर्वमेव भूस्थलं संस्कृत्य फलेन नारिकेलं खण्डयेत् । तत्र चतुःस्तम्भादियुक्तं मण्डपं कुर्य्यात् । तदुपरि वितानमरुणवर्णं

बध्नीयात् । तत्र हस्तमात्रकां वेदिकां कुर्य्यात् । मण्डपं त्रिगुणितंत्वं वेष्टितं चतुर्द्वारतोरणं ध्वजसहितं कुर्यात् । तत्रैव वेदिकानिकटे सर्वतोभद्रमण्डलं कुर्य्यात् । ततः सवसामग्रीं संपाद्य—

भविष्ये—श्रीकृष्णस्याभिषेकेन राधायास्त्वभिषेचनम् ।
भेदस्तु मुनिभिः प्रोक्तः विपरीतगतिस्तदा ।

श्रीकृष्णस्याभिषेकेन राधायास्त्वभिषेकस्य भेदः कृष्णाभिषेकमन्त्रेण राधाभिषेचनं न ॥

कदाचिन्नैव कुर्य्याच्च विधिना समुपस्थिते ।
कदाचिद्विस्मृतेनापि कृतं राधाभिषेचनम् ।
प्रायश्चित्तं महद्भूयादपुत्रो जायते ध्रुवम् ।
विपरीतं यदा कुर्य्यात्सर्वदा दुःखभाग्भवेत ॥

गारुडे—खण्डिते स्फुटिते विघ्ने चौरस्पर्शे भयाकुले ।
शूद्रस्पर्शे स्थानभ्रष्टे अंगहीनो यदा भवेत् ।
हस्तात्स्खलनपातेषु त्वभिषेकविधिः स्मृतः ॥

ततः आचार्य्यादिवरणं कुर्य्यात् । संकल्पः-अद्येत्यादि द्वादशोत्तरषोडशशते १६१२ सम्वत्सरे मासोत्तमभाद्रपदे मासे शुक्लपक्षे तिथौ सप्तम्यां बुधज्येष्ठार्क्षसंयुक्तायां सप्तघटी रात्रिशेषायां सिंहलग्नोदये वेलायां यथा दक्षिणदेशे-गोदावरीतटस्थ-मथुरापट्टनात् श्रीयुगलमूर्त्ति-कृष्णावतारमहाविष्णोराज्ञाप्रवर्त्तमानः यजुर्वेदान्तर्गतापस्तंब-सूत्राश्वलायन - शाखा - भार्गव-च्यवन-प्लवानोरव- यामदग्नेति-पंच - प्रवरान्वित - श्रीवत्सगोत्रोत्पन्न-श्रीमन्नारायणो माध्वसाम्प्रदायिकः श्रीकृष्णेन स्वयं दत्तानिजबालस्वरूप-लाडिलेयोपासकस्तथा श्रीकृष्णाज्ञया श्रीयुगलबलदेवोपासकः दाक्षिणात्य दीक्षित कुलोद्भूतश्रीमद्भास्करात्मजनारायणभट्टशर्म्माहं--

देवराजगोत्रोद्भवायाः श्रीवृषभानुनन्दिन्याः राधायास्त्वभिषे-कार्थं त्वामाचार्य्यत्वेनाहं व्रुणे इति ब्रूवन् वस्त्रकुण्डल-मुद्रिकादिभिः पूजयेत् । अथ राधामन्त्रः—"लं छ्रां छ्रीं क्रौं परमैश्वर्य्यै स्वाहा" यथाशक्त्या एवं ऋत्विगादिकमपि वर्णयेत् । ततो वृतोऽस्मीति पूर्वप्रकारेण ब्रूयात् । ततः परिसरं वध्नीयात् । ततः पुण्याहवाचनं 'पु नंतु मां देवजनाः पुनंतु मनसा धियः । पुनंतु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनोहि मां" इति पठित्वा ततः गणेशवरुणौ संपूज्य दक्षिणकलशे गणेशं संपूज्य वामकलशे वरुणं संपूज्य "गणानां त्वा गणपति ᳪ हवामहे कविं कविनामुपश्रवस्तमं ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्य त आन श्रृण्वन् नूतिभिः सीदसादनं गणपतये नमः" "आवाहनं आसनं नैवेद्यं समस्तषोडशोपचारान् परिकल्पयामि" इति गणपतिं संपूज्य "इमं मे वरुण श्रुधीहव मद्या च मृडय त्वा मवस्यु राचके, तत्वायामि ब्रह्मणा वंदमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः, अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश समानायुः प्रमोषीः" इति वरुणं संपूज्य अथास्य कर्म्मणः पुण्याहं भवंतो ब्रुवंतु पुण्याहं अस्य कर्मणः स्वस्ति भवंतो ब्रुवंतु आयुष्मते स्वस्ति स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति न पूषा विश्वेदेवाः स्वस्ति न स्तार्क्ष्योऽरिष्ट नेमि स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु अस्य कर्मण ऋद्धि भवंतो ब्रुवंतु ऋध्यतां ऋद्धिः समृद्धिः ॥

अथ दिग्वन्धनं कुर्य्यात् । दक्षिणहस्ते श्वेतसर्षपान् गृहित्वा-"प्राच्यै दिशे स्वाहा" "दक्षिणायै दिशे स्वाहा" "अर्वाच्यै दिशे स्वाहा" "उत्तरायै दिशे स्वाहा" इति पठन् चतुर्दिक्षु प्रक्षिपेत् । ततस्त्रिगुणितरक्तसूत्रेण सप्तस्मम्भान् परिवेष्टयेत् । ततः "श्रीवृषभानुनन्दिन्याः राधायाः मण्डपं रक्षस्वे"ति पठित्वा दिग्पालप्रियाः शच्यादीन्प्रपूजयेत् ।

ततः पूर्वस्यां दिशि "कपिशवर्णध्वजदंडधारिण्यै शच्यै इन्द्राण्यै नमः" आग्नेय्यां दिशि "कपिलवर्णध्वजादंडधृतवत्यै स्वाहायै नमः," दक्षिणष्यां दिशि "प्रसूच्यै नीलवर्णध्वजा दंडधारिण्ये यमप्रियायै नमः," इति पठित्वा क्रियाभाजः पताकाः दशदिक्ष् अर्च्चयेत् । नैऋतिकोणे "श्यामवर्णध्वजा-दंडधारिण्यै पवनप्रियायै अंजन्यै नमः," उत्तरस्यां दिशि "श्यामवर्णध्वजादंडधारिण्यै सोमप्रियायै रोहिण्यै नमः," ईशानकोणे "ऽसितवर्णध्वजादंडधारिरायै रुद्रप्रियायै पार्वत्यै नमः," अधः स्थाने "गौरवर्णध्वजादंडधारिण्यै नागपत्न्यै नमः," उपरिष्टाद्भागे "रक्तवर्णध्वजाधारिण्यै सावित्र्यै नमः" मण्डपं श्रीराधाया रक्षस्वेति पठित्वा सर्वधूपदीपादिभिः सर्व-दिक्षु दशधा पूजयेत् ।

ततो याः दशदिग्रक्षका सर्वाः पत्न्यः दशदिग्भ्यः स्वकीयदि-शतो महाभागां कीर्त्तिं व्रूयुः । नारसिंहे—

मुख्याश्च पत्न्यो दश संख्यकाः स्थिताः दिग्पालसंभूतकृतावताराः ।
सावित्री मुख्या व्रुवते च कीर्तिं भानोश्च देवीं परिवारभूषिताम् ॥
भागोपरिष्टात्प्रशंसकीर्त्तिं स्वयंभुवः स्त्री स्वगृहीतदण्डका ।
कीर्त्ते त्वदीयकुलभूषणेयं श्रीकृष्णपत्नी भवतीह लोके ॥
कृशा कृतत्वात्परमेय-भूषणा श्रीजानकीशापसमुद्भवा स्वयम् ॥

पाद्मे—वर्षैश्च त्वेकादशसंख्यकैश्च या, प्राप्ता त्ववस्थां सुमनोहरांगाम् ।
राधाभिधाना कुलगोपमण्डिता कलान्विता षोडशसंख्यपूर्णा ॥

षोडशकलानिवासस्थानानि—

मनोहरादीप्तिकलाविशालिका मुदाराधामुखस्थाश्चतुसंख्यकाः कलाः ।
शुभांगभागरमणी-सुवेशा-श्यामा स्थिता सुन्दरीवक्षसि कलाः ।
व्यालंविवेणी-सुचकोरदृष्टिः-शीता-सुशीता स्थितबाहुमूलयोः ।
रमाननाभा-नवकुंतला-शुभा-मनोरमा संयुतपादमूलयोः ।

स्थाने चतुर्थाख्ये विराजमाना: शुभांगदेव्या: नवनीतवल्लभा: ।
कलाश्च संख्या परिमाणषोडशा: व्रजेषु व्याप्ताखिललोकधाम्ना ।

भाषायां लोकास्त्वन्या: षोडशकला: वदन्ति । ततोऽधोभागत: आगत्य नागरन्त्यौ कीर्तिमूचतुः-

अधोगतास्थे शुभनागपत्न्यौ प्रशंसतुर्भानुशुभांगयोषिताम् ।
कीर्त्तें शृणु त्वं नन्दलालसंभवे दैत्योद्भवा: पातसमूहसंघा: ।
श्रीगोकुलग्रामभवाश्च तेषां भयाद्द्रवन्ति नन्दरायमुख्याः ।
गोपाश्च गोपालव्रजस्त्रियस्ता समीपगोवर्द्धनमागता: पुरम् ।
सखीविधानाख्यपुरे निवासं चक्रुश्च तत्रैव भयं यदाभवत् ।
तदा व्रजद्वारभवं च ग्रामं नन्दाभिधानं नवनन्दवेष्टितम् ।
भानो: पुरस्य निकटस्य ग्रामे सदा निवासं कृतवान् स्वयं प्रभु: ।
नन्दोपनन्दादिभिः संयुतो हरि र्गोपीयशोदा सहमातृभिः स्थिता॥

ब्रह्मवैवर्तो-तत्रैव नन्दग्रामेऽस्मिन् पश्चिमे भागे संस्थिता: ।

श्रीकृष्णाय भयं चक्रु र्हाऊ हाऊ स्वरूपत: ।
तान् दृष्ट्वा भयत्रस्तोऽसौ गोपालै: सह वेष्टित: ।
रोदनं कृतवान् कृष्णः ग्रामे श्रुत्वा सुरोदनम् ।
भयाकुला यशोदा च धावती तत्र साऽगता ।
कृष्णमंके समादाय गोप्ता पुत्रं स्वमञ्चले ।
पुत्रस्य मुखमादाय जलेन परिमार्जयत् ।
तत्रावस्थानसंभूतं यशोदाकुंडसंज्ञकम् ।
तत्रैव मूर्त्तय: संस्था: हाऊपाषाणरूपिण: ।
तस्मादंके समादाय यशोदा कृष्णबालकम् ।
ग्रामस्य निकटे स्थित्वा दुग्धेन स्नापयत् सुखम् ।
तत्रैव दोहिनीकुंडनामानं सुमनोहरम् ।
ततश्च पुनरायाता ग्रामस्य निकटे यदा ।
इतश्च दक्षिणे भागे मधुसूदनसंज्ञकम् ।
पुत्रमाहूय प्रीत्या सा स्नापयच्छुद्धवारिणा ।
मुखं च पुनरादाय श्रीकृष्णस्य शुभप्रदम् ।

प्रक्षाल्य सुस्थले कुंडं मधुसूदनसंज्ञकम् ।
ततश्च मन्थनस्थानमागता नन्दगेहिणी ।
दधि भोजनमादाय श्रीकृष्णाय ददौ प्रिया ।
यशोदा कृष्णमाहूय पुत्रस्नेहसमाकुला ।
दूरे मा गम्यतां पुत्र हाऊ तत्रैव संस्थिताः ।
क्रीडनेन कदा न त्वं दूरमागच्छ भो सुत ! ।
हाउ तत्रैव संस्थाः स्युरद्यापि शिलारूपिणः ।
यशोदाकुंडस्नानेन भयमुक्तो नरो भवेत् ।
बालानां न भयं क्वापि सुताश्च चिरजीविनः ।
मोक्षं च लभते शीघ्रं यशोदाकुंडवारिणा ।
मृतवत्सा यदा नारी वंन्ध्या वा काकवंध्यका ।
काकवंध्या यदा नारी नष्टपुष्पा भविष्यति ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रान् नष्टपुष्पं प्रसूयते ।
नष्टपुष्पा पुनश्चापि वाञ्छितं फलमाप्नुयात् ।
फलं शतगुणं प्रोक्तं महापुण्यसमुद्भवम् ।
दोहिनीकुंडस्नानेन दुग्धेन परिपूरितः ।
मोक्षं च लभते शीघ्रं शताधिकगवां पतिः ।
नारी च लभते कामान् दुग्धदात्री भविष्यति ॥

भविष्योत्तरे—मधुसूदनकुंडस्य स्नानेन सर्वदा सुखम् ।
प्राप्नोति पुरुषो नित्यं धनधान्यसमन्वितः ।
मधुसूदनवद्बालाः क्रीडन्ते यस्य वेश्मनि ।
दधिभाण्डावलोकेन मुक्तिभागी भवेन्नरः ।
नन्दस्य भवने गत्वा दर्शनं कुरुते यदि ।
तदा सर्वांश्च कामांश्च लभते मानवः सदा ।
सर्वभोगादिसंयुक्तो मन्दभागी यदा भवेत् ।
तत्र त्रयोदशावस्थां वर्षपूर्णमनोरमाम् ।
प्राप्तः कृष्णस्तदा राधां त्रयोदश समान्विताम् ।
विवाहयेदिमां कन्यां स्वकरेण परिग्रहाम् ॥

ब्रह्माण्डे—विश्वावर्षमुपगता प्रियकरी दामानुजा वल्लभा
श्यामा श्माममनोहरा भगवती राधा यदा सुन्दरी।
सर्वद्वारव्रजेषु क्रीडनमयी विष्णोः प्रिया, वल्लभा
पाणिग्राहवती मुकुन्दसहिता क्रीडां करोन्मण्डले ॥

इत्यधः स्थले नागपत्न्योर्वाक्यं—

भागं पूर्वमुपगता प्रियकरी देवेन्द्रनारी यदा
कीर्त्तिं वाचमुवाच सिंहकटिका जाता सुतेयं तव।
वर्षाः दश संख्यकसं स्थिता यदा मनोरमा श्रीललिता व्रजेश्वरी
पाणिग्रहं कुर्व्वति नन्दसूनोर्गौरांगवर्णा नवनीतकोमला ॥ इ

पूर्वभागतः इन्द्राणीवाक्यम्।

आग्नेये—आग्नेयकोणस्थिता सुन्दरी शुभा
स्वाहा च पत्नी यदि जातवेदसः।
वर्षा नवावस्थमुपागता यदा
नाम्ना विशाखा करमग्रहीद्धरेः ॥
वर्षाष्टाभिरुपागता शुभकरी नाम्ना लता चम्पका
पाणिं ग्राहवती रमापतिप्रभोर्विख्यातकीर्त्तिर्यदा।
सार्द्धाष्टाभिरवस्थया त्वपगता मासोत्तरैः षष्ठभिः
वर्षैस्त्वष्टभि संयुता प्रियसखी चित्रा सुलेखा शुभा ॥
नाम्ना कीर्त्तिमयी सुचित्रवदना विष्णोः करं धार्यती
वर्षं द्वादश संयुता शुभक्लृप्ता तुंगाख्याका देविका।
पाणिग्रहकरी शुभांगसदृशा कृष्णस्य देवस्य च ॥

द्वादश वर्षावस्थां प्राप्ता तुंगदेवी श्रीकृष्णं परिणयेत् ॥

सार्द्धद्वादश वर्षसंयुतमयी पीताम्बरा सुन्दरा
रंगाख्या परदेविका कृतवती पाणिग्रहं विष्णुना ॥

सा देवी सार्द्धद्वादश वर्षावस्थां प्राप्ता रंगदेवी श्रीकृष्णं परि-
णयेदिति वरुणप्रिया समीचीवाक्यम् ॥

संख्या नवैः सार्द्धयुतै रवस्थां प्राप्ता सुदेवी त्वरुणाम्बरावृता।
श्रीकृष्णपाणिग्रहमाचरंती विख्यातकीर्त्तिर्भवतीह लोके ॥

इति सार्द्धनववर्षावस्थां प्राप्ता सुदेवी श्रीकृष्णं परिणयेदिति वायव्यकोणस्थजननीवाक्यम् ।

भविष्ये—

त्रयोदशाब्दैः समुपागता सखी यदीन्दुलेखा परिपूर्णभूषणा ।
नीलाम्बरा गौरिमुखी कलायुता श्रीकृष्णपाणिग्रहमाचरंती ॥

त्रयोदश वर्षावस्थां प्राप्तेन्दुलेखा श्रीकृष्णं परिणयेदितोशान-कोणस्थपार्वती वाक्यम् ।

इत्यष्टदिग्भ्यश्च शची च स्वाहा प्रसूचि नाम्नी च जरा समीची ।
सदाजनी रोहिणी पार्वतीरितास्त्वष्टाः समाख्याश्च दिगेशपत्न्यः ॥

इत्यष्ट दिग्भ्यश्च शच्यादयः स्थितास्त्वष्टानां सखीनां विवाहा-वस्थां कीर्त्यैव ब्रू युः ॥

नारदीये—

चन्द्रावली त्वष्टसखीसमेता त्रयोदशाब्दाभिरवस्थया युता ।
तदा तु पाणिग्रहमाचरंती कृष्णावतारस्य समाद्ध गामिनी ॥
नवाख्यमाख्या च सखीमुख्यासु यदा स्थिताऽपि शुभवस्त्रभूषिता ।
श्रीकृष्णलीलारतिसंगमा सा मनोहरांगावयवै र्विराजिता ।
कौण्डिन्यसूतांगिरसोऽत्रिगौतमो पराशरो नैध्रु वपैलवर्णाः ।
गोत्रोद्भवास्त्वष्टसखी समाख्या सखी विशाखादिकुलेषु मण्डिताः ।

इति विशाखादीनामष्टसखीनां गोत्राः ॥

भविष्यपुराणे—

त्रयोदशाब्दात्परतश्च षोडशं यावदवस्थांतरसंगतो हरिः ।
सार्द्धं प्रिया सर्वसखीभिः संख्यैश्चतुर्भिषष्ठ्या कृतवान् विहारम् ॥

त्रयोदशवर्षावस्थमारम्य षोडशवर्षावस्थां यावच्चतुर्षु वर्षेषु श्रीकृष्णः राधया सह चतुः षष्ठिभिः सखीभिः स्वकलारूपि-णीभिः सार्द्धं रासक्रीडां कृतवानिति ॥

ततः सर्वतोभद्रमण्डपनिकटे उपविश्य पीतवर्णादिपंचवर्ण-

रंजितमष्टदलं कमलं निधाय तस्य कर्णिकायां तन्दुलान् पूरयेत्। तदुपरि दर्भकूर्चं निधाय तदुपरि कलशं स्थापयेत्। सर्वतोभद्रमण्डलपूजनपूर्वकं त्रिगुणिततंतुवेष्टितं आम्रपल्लववेष्टितं धूपितं च कुर्य्यात्। ततः कामवीजस्मरणपूर्वकं तत्र कुम्भे पंचरत्नं नवरत्नं गन्धाष्टकं क्षोरवृक्षक्वाथतोयं प्रक्षिप्य "ओं ह्रां ह्रौं द्रैं द्रौं रः श्रीराधायै नमः" मूलमंत्रं पठन् जलं पूरयेत्। ततोऽकुंशमुद्रया तीर्थानावाह्येयेत्। अंगुष्टानामिकया मुद्रया विलोडयेत्। तत्र कुम्भे विष्णुक्रान्तामिन्द्रवल्लीं दूर्वां च निःक्षिपेत्। तर्जनीमध्यमे प्रसार्य्याऽनामिकाकनिष्ठिकांगुष्ठैः कुशं गृहीत्वा अस्त्रमन्त्रं च पठन् प्रोक्षणं कुर्य्यात्। ततोऽस्त्रमंत्रेण ताडनं, "करवीरस्य पुष्पाणि गृहीत्वाक्षरसंख्यया ततस्तौ ताडयेन्मंत्रं कामवोजेन मंत्रवित्" कामवीजं पठन्अभ्युक्षणं कुशेनावगुण्डनं, ततो षडंगन्यासं कुर्य्यात्ततो धेनुमुद्रयामृतिकरणं ततो "द्वादश कलाव्याप्तायै श्रीभास्करप्रियायै वन्हिमण्डलस्थितायै स्वाहायै नमः," ततः "षोडशकलाव्याप्तायै सोमप्रियायै सोममण्डलस्थितायै रोहिण्यै नमः" इति पठित्वा ततोऽष्टत्तरशतं सहस्रं वा मूलमन्त्रं जपेत्। ततस्तेन जलेन प्रोक्षयेत्। तत्र गोमयाम्भसा त्रिकोणमण्डले शंखस्थापनं कुर्य्यात्। ततः शंखाननं प्रक्षाल्य स्थापयेत्। "अस्त्राय फटिति" शंखं प्रक्षाल्य ततस्तत्र गंधाक्षतान् प्रक्षिपेत्। हृदयमन्त्रमुच्चरन् मातृकाक्षरप्रतिलोमैर्जलं पूरयेत्। ततः शंखपीठे "दशकलाव्याप्तायै वन्हिमण्डलस्थितायै स्वाहायै नमः" इति मन्त्रं जपन् पूजयेत्। ततो "द्वादशकलाव्याप्तायै सूर्यमण्डलस्थितायै भास्करप्रियायै नमः" इति मन्त्रं जपन् पुनः पूजयेत्। ततः शंखजले "षोडशकलाव्याप्तायै सोममंडलस्थितायै सोमप्रियायै रोहिण्यै नमः" इति पठन् गंधादिभिः पूज-

येत्। "त्वं पुरा सागरोत्पन्नः विष्णुना विधृतः करे। अत-स्त्वां पूजयिष्यामि पांचजन्य नमोऽस्तु ते।" "पांचजन्याय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तन्नो शंखः प्रचोदयात्" "गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति!। नर्मदे सिंधुकावेरि जले-ऽस्मिन् संनिधिं कुरु" इति मंत्रान् पठेत्। ततस्तत्र तीर्थावाह-नमकुंशमुद्रया, ततः शिखामंत्रेण गालिनीं मुद्रां प्रदर्शयेत्। ततो जलं प्रपश्येत्। ततो पंचांगन्यासं कुर्य्यात्। ततश्चक्र-धेनुमुद्रादिदर्शनं, ततोष्टधामूलमंत्रं जपेत्, ततो सर्ववस्तु-प्रोक्षणं, ततः श्रीवृषभानुनन्दिनीं राधां दृढ़ासने उपविश्योप-चरेत्। तत्र पंचदश नव त्रीणि वा पात्राणि स्थापयेत्। मूलमंत्रमुच्चार्य "श्रीवृषभानुनन्दिनि राधे प्रिये स्वागत" मित्यभिनंद्य पुष्पषट्कं दद्यात्। श्रीराधां ध्यात्वा—
संमोहने तंत्रे—

श्रीराधां व्रजसुन्दरीं सुनयनां नीलाम्बरालंकृतां
सीताशापसमुद्भवां सुरमणीं बालां कलाभियुताम्।
कीर्त्यानन्दकरीं शुभांगविमलां गौरांगरूंदायिनीं
नानावर्णविचित्ररूपरमणीं भानोः सुतां निर्म्मलाम्॥
आवासावलवासिनीं शशिमुखीं देदीप्यमानां रुचा
ब्रह्मादीन् वरदायिनीं भगवतीं दामानुजां श्रीकरीम्।
लालेन सह गामिनीं शुभकृतां भक्तेषु वांछाप्रदां
लाडिलाख्यविधायिनीं व्रजवधूरालिंगितां संगताम्॥
वन्दे बालस्वरूपिणीं प्रभवतीमष्टासखीसंयुतां
देवीं विष्णुमयीं प्रसादजननीं रामानुजस्य प्रियाम्।
अत्रास्मिन् वरदा भव प्रभुमये प्राप्नोसि त्वं सुन्दरि!
ते जन्म प्रकटीकरोमि सततं ब्रह्मोपरि पर्वते॥

इति श्रीराधारूपं ध्यात्वा जन्म दिने श्रीराधाविर्भावं संभाव्य पश्चात्स्वागतादि प्रश्नं कुर्य्यात्। ततो मूलमंत्रमुच्चार्य्य आसनं

गृहीत्वा "श्रीवृषभानुनन्दिनि श्रीकृष्णप्रिये राधे इदमासनमा-स्यता"मिति बदन् आसने पंच पुष्पाणि दद्यात् ततः कूर्चं दूर्वा सहितं फलचतुष्टयं जलं च गृहीत्वा मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीमही-भानुपौत्रि राधे मुखरादौहित्रि कीर्त्यानन्ददायिनि इदं ते पाद्यं नमः" इति ब्रूवन् चरणाम्बुजे पाद्यं दद्यात् ॥

ततोः जाती-लंवग कंकोलानां षट्पलं क्वाथं गृहीत्वा मूलमंत्र-मुच्चरन् "श्रीवृषभानुनन्दिन्यै श्रीराधायै नमः" इति श्रीरा-धायाः मुखे कांश्यपात्रेणाचमनं दद्यात्। ततश्चन्दनकर्पूरा-द्यात्मको गंधः, पुष्पांण्यक्षतायवाः दूर्वातिलश्वेतसर्षपाः एतान् कुशसहितं गृहीत्वा चतुः पलं जलमादाय मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीराधायै स्वाहा" "वृषभानुसुते देवि दिव्यं तापत्रयापहम्। लक्षणैर्युगलैर्युक्तं तवार्घ्यं कलयाम्यहं" इत्युच्चरन् श्रीरा-धायाः शिरसि त्वर्घ्यं दद्यात् ॥

"त्वद्भक्तिलेशसंपर्के परमानन्दसंज्ञके। तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये" पाद्यार्घ्यमेतेषु प्रत्येकमाचमनं ज्ञेयम् ॥

ततो मधुपर्कं—

सर्वकालुष्य हीनाय परिपूर्णसुखात्मके।
मधुपर्कमिदं देवि कल्पयामि प्रसीद मे ॥

आज्यं दधि मधुपलैकं कांस्यपात्रे निधाय मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीराधायै वृषभानुनन्दिन्यै स्वधा" इति पठन् श्रीराधायाः मुखे दद्यात् ॥

मुखरायाः दुहित्र्यै च राधायै कीर्त्तिनन्दिनि !
आचमनं कल्पयामीशे शुद्धे त्वां शुद्धिहेतवे ॥

ततस्त्वाचमनार्थं पलमेकं जलं दद्यात् ॥

ततस्तिलपिष्टेन श्रीराधामुद्वर्त्त्य "उत्तरेऽस्मिन्ननुत्तरं नाभिं मूर्द्धानं नदिवी अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निं

कविꣳसम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयंत देवाः"
इति पठन् राधायाः वस्त्रपरिवर्त्तनं कारयेत् ॥
ततः "वार्द्धमासयो र्भवतो नानावीर्य भवतो हविष्यान्निधनं
पूव मर्ह भवति हविष्यन्निधनमुत्तरं वरुणस्य प्रतिष्ठित्यै"
इति मंत्रं पठन् पंचाशत् पलजलेन स्नानं दद्यात् ॥
ततस्तिलमधुनः परिमृज्या "वसो र्कामिमत्वबातो अपां बृषण्णवान्
शिशीत मिन्द्रापर्वता युवन् मस्तन्नो विश्वे वरिवष्यंतु देवा-
स्वधा स्वाहा" इति पठन् मूलमंत्रं च पठन् स्नापयेत् ॥
ततः पंचामृतेन पंच पलं दुग्धं गृहीत्वा "पयः सवघ्नादाष्टज-
नुषाभ्यग्रं वृहस्पति र्देवता यस्य सम्राट् बुघ्नाद्यो अग्नभ्य
त्योंजसा वृहस्पतिमाविवासंति देवाः" इति श्रीराधां दुग्धेन
स्नापयेत् अनेनैव मंत्रेण । ततः पंचपलपरिमितं दधि गृहीत्वा
"वायुस्ता ꣳ अग्ने प्रमोक्तु देवः प्रजापतिः प्रजया संविदानः
दधिमुखाऽकरोत्" इति मंत्रं पठन् दध्ना स्नापयेत् ॥
ततो पंचपलपरिमितं घृतं गृहीत्वा "घृतवती प्रमुंचमाना
भुवनस्य रेतो गातुं धत्त यजमानाय देवास्तेजसा" इति मन्त्रं
पठन् घृतेन स्नापयेत् ॥
ततो मधु गृहीत्वा "मधुजातवेदो व पया गच्छ देवाꣳहि
होता प्रथमे वभूविथ" इति मन्त्रं पठन् पंच पल मधुना
श्रीराधां स्नापयेत् ॥
ततः शर्करां गृहीत्वा "शुक्रमसि वृहस्पते सविता सवितर्वोधयै-
नकं मोहिमानः रश्मिभिः" इति मन्त्रं पठन् शर्करया स्नाप-
येत् संमार्जयेच्च ॥
ततः संस्कृतं सर्वतो-भद्रघटजलं सर्वघटेषु प्रक्षिपेत् । तत्राष्ट-
दिक्षु त्वष्टघटेषु अनुक्रमेण सर्वौषधि महौषधि - वीजाष्टकं नव-
रत्नं पुष्पं फलं गन्धं चन्दनं प्रक्षिपेत् । नवघटमग्रे दशमं

सहस्रधाराकलशं तत्र नवमकलशं जलं दूर्वापुंजसहितेन शंखेन स्नापयेत्। "वर्द्धयैनमापो महते सौभगायमयो भुव विश्व एत मनुमदंतु देवा:" इति मंत्रं त्रिभिरावृत्तिभिः पठित्वा पूर्वदिशि स्थितं कलशं सर्वौषधिद्रवरससहितं घटं गृहीत्वा "उरोर्वरोयो वरिवस्ते अस्तु मंगलीजयंतं त्वामनु मदंतु देवा:" इति मन्त्रं पठन् स्नापयेत्। ततो बीजाष्टकयुतं घटं गृहीत्वा "निकामे अयामतिं निकामे दुर्मतिं बाधमाना रायस्पोषे यज्ञपति मा भजंतो औषधय: समिद्धेहि यजमानाय योषमश्विनाध्व प्रसाद-यितामित्याह" इति मंत्रं पठन् श्रीराधां स्नापयेत्। तत: नव-रत्नयुक्तं कलशं गृहीत्वा "अग्ने: पुरीषमसि देवयानी तां त्वा विश्वे वीर्य्याणि अभिगृणंतु देवा:" इति मन्त्रं पठन् स्ना-पयेत्। तत: पंचाशदधिकपुष्पयुक्तं कलशं गृहीत्वा "प्रजापते-स्तपसा वावृधान: सरस्वत्यै सद्यो जातोदधियज्ञमग्ने" इति मंत्रं पठन् पुष्पोदकेन स्नापयेत्। तत: फलयुक्तं कलशं गृहीत्वा "बृहति स्वाहाकृतेन हविषा प्रसूता पुरोगा याहि साध्या हविरदंतु देवा: प्रभृत" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्॥

तत: सहस्रधारकलशे सर्वौषधि–महौषधि-बीजाष्टकं सर्वरत्नानि पुष्पाणि फलानि प्रक्षिप्यतां-"सद्योजातो व्यमिमीत यज्ञमग्नि' र्देवानामभवत्पुरोगा: चितामाह अस्य होतु: प्रदिस्यतस्यवाचि प्रदुहत्स्वाहा" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। "स्वाहा घृत ॐ हविरदंतु देवा:" इति मन्त्रेण सर्वौषधिना श्रीराधां पुन: स्नापयेत्: गायत्रीं पठन् पुन: स्नापयेत्। पुन: महौष-धिना स्नापयेत्। पुन: "आपोहिष्ठे" ति पठन् बीजाष्टकेन स्नापयेत्। पुन: "शन्नोदेवी" ति पठन् नवरत्नै: स्नापयेत्। पुन: पुष्पोदकेन स्नापयेत्। पुन: फलोदकेन स्नापयेत्। केचित् सहस्रधाराणां कलशे स्थापिते यदि

सर्वौषध्यादिकं तस्मिन् प्रक्षिपेत् विधपूर्वकम्। तत्तन्मंत्रैस्तु पटलैश्च स्नापयेद्राधिकां प्रियां" इति वृहद्गौतमीये। अपरे सहस्रधाराणां कलश-शुद्धवारिणा स्नापयेद् राधिकां पूर्वं नारदेनोदितो विधिः "सर्वौषधिं समाहृत्य प्रत्येकं स्नापयन्ति ये" इति बिष्णुयामले। ततः ससस्रधारकलशेनैव "देवं देवाय जागविकामिहैका शुद्धेन साम्ना क इमे पतंगाः माप्यालाः कुले परिमापतंति, अनावृतैतान् प्रथमंतु देवाः शुद्धो रयिं निधारयसि स्वभासे" इति मंत्रं पठन् श्रीराधायाः शिखाभागे स्नापयेत्। ततो वस्त्रेण मार्जनं, ततो न्यासं कुर्य्यात्। ततो वस्त्रं गृहीत्वा "नहि स्पशमविदन्न न्यमस्माद्वै श्वानरात्पुर एतारमग्नेः, अभिचन्द्रा तर्तयवेममंन्न मृत ममूराः" इति मंत्रं पठन् वस्त्राणि श्रीराधायै दद्यात्। ततः "सहदेवी सदाभद्रासूर्यावर्ताकुशाग्रकैः शिरीषरजनीभ्यां निर्मथ्य निंवराजीलवणराजीसर्षपैर्दृष्टिमुत्तार्य तोयादो प्रक्षिपेत्। ततः सिंहासने श्रीराधां वृशभानुनन्दिनीं पाद्यादिभिरुपचरेत्। ततो मंगलार्थं नारिकेलफलान्वितं द्वितीयकलशं स्थापयेत्। ततस्तन्मन्त्रोक्तन्यासपूजादिकं कुर्यात्। ततोऽजनतिलक-कुंकुमान्वितमालाभरणादिना शृंगारं कृत्वा प्रतिसरं वध्नीयात्। तथाहि पीतडोरकं गृहीत्वा "आदित्यान्काममवसेहुवे मयि भूतानि जनयन्तो विविच्युः शस्ताय ऋषि वन्धवे सीदन्तु पुत्रान्स्तुन्वते रदिते रूपस्थं ररक्ष" इति मंत्रं पठन् श्रीराधायाः वाहहस्ते वध्नीयात्। ततस्त्वादर्शं गृहीत्वा "तीर्णं वर्हि हवि रद्याय देवाः नराश ॐ सो अग्ना स्पतिर्नो अव्यात् आयेवास्य संगच्छे रयोणां" इति मंत्रं पठन् श्रीराधायै दर्शयेत्।

ततो भूषणादीन् मूलमंत्रसुच्चार्य "श्रीवृषभानुनन्दिनि राधे इदं पुष्पं निवेदयामोर्ति" सर्वं निवेदयेत्। ततो धूप-दीपा-

दिकं कृत्वा नैवेद्यं समर्पयेत्। ततो मन्दिरोपरि ध्वजापताकां बध्नीयात्। ततो दूर्वापुंजमाम्रपल्लवं गृहीत्वा श्रीकृष्णस्वरूपेण लालाख्येन संयुक्तायाः श्रीप्रियायाः वृषभानुनन्दिन्याः राधायाः लाडिलीलालाख्ययुगलमूर्त्त्योः निवासस्थानयोरेवमभिषेकं कुर्य्यात्। "प्रिया देवस्य सवितुः श्याम आनो विश्वेप्कागमंगु देवाः ये सवितुः सत्य सलिलस्य मध्यात्सवस्य विश्वे मित्रस्य वृते वरुणस्य देवाः आवृत्रनुणागीर्भिविप्रः ब्रह्मणस्पते त्वनस्ययंता सूक्तस्य वोधि तनयं च यजिन्व विश्वं तद्भद्रं यदि वंति देवास्त्वष्टाभिः सखीभिः सार्द्धमभिरम्यतां" इति एतैर्मंत्रैस्तु श्रीराधामभिषिंचेत्। ततो नीराजनं कुर्य्यात्। ततो ब्राह्मणान् भोजयेत्। ततो सर्वे विप्राः मंत्राक्षतान् दद्युः॥

आदिपुराणे—

खण्डिते स्फुटिते त्वंगे चौरस्पर्शे भयाकुले।
स्थानभ्रष्टे शूद्रस्पर्शे त्वभिषेकविधिः स्मृतः।
लोभाच्च प्रतिमां यस्तु स्थानभ्रष्टं करोति सः।
भक्तिमान्पूजको विप्रः ब्रह्महत्याफलं लभेत्।
वलदेवादिरूपाणामचलप्रतिमादिकान्।
श्रीकृष्णादिस्वरूपाणां मूर्त्तयस्तत्र राजंते।
स्थानभ्रष्टं करोत्स्वामी परिवारक्षयं भवेत्॥
दुःखभागी दरिद्री स्यात् सर्वस्मिंश्च तिरस्कृतः।
अपमानं भवेत्तत्र यत्र यत्रैव गच्छति।
ब्रह्महत्याशतानां च फलमाप्नोति मानवः।

वामनपुराणे—

नैवेद्यं राधिकायास्तु ब्राह्मणान्नैव भोजयेत्।
ब्रह्महत्याफलं स्वामी प्राप्नुयाद्दुःखभाग्भवेत्।
निर्द्धनो जायते चैव मंदभागी भवेन्नरः॥

ततो वृषभानुवंशवर्णनं वाराहे—

श्रीदेवराजाख्यप्रभूतगोत्रसमुद्भवो गोपकुलप्रदीपः ।
गवामधिपतिरयुताधिकानां धान्यैरनेकैः परिपूर्य्यमाणः ।
शीलाख्यका तस्य बभूव भार्य्या गौरस्वरूपा परिवारभूषिता ॥१
तस्यात्मजो नाम अनूपगोपो गवामधीशो द्वययुताधिकानाम् ।
वामप्रदाख्याभवत्तस्य भार्या धान्यैरनेकैः परिवारभूषिता ॥२
तत्सूनुरासीद्रणधीरनामा गवामधिपोऽयुताधिकानाम् ।
द्रव्यैरनेकैः परिपूरितो गृहे सुवल्लभाख्याभवत्तस्य पत्नी ॥३
अस्मिन्पुरे वासकृतस्त्रिभिः कुलैः मुख्यः सुगोपैः परिधायमानः ॥३
तस्यात्मजो स्याद्व्रजधीरनामा भार्य्या सुरत्ना त्वभिधानसंज्ञिका ।
गवामधीशोऽयुतपंचकानां धान्यैरनेकैः परिशोभमाना ॥४
तस्यात्मजो वासकृत्तस्य चासीत् संज्ञा महीभानुरवास्थितोऽस्मिन् ।
मनोहरा नाम बभूव भार्य्या तस्य प्रतिष्ठस्य कुलाभिधानकैः ॥५
गवामधीशोऽष्टयुताधिकानां स्वर्णादिभिर्वेष्टितराजसंज्ञकः ।
सर्वैरनेकैः स्वकुलाभिधानकैः सुवेष्टितोऽसौ महाराजसंज्ञकः ॥६
तत्सूनुरासीद्वृषभानु नामा गौरस्वरूपो स्वकुलाभिभूषितः ।
लक्षाख्यसंख्यापरिवर्द्धमानां गवामधीशो धनधान्यसंकुलः ॥
लक्षाख्यसंख्यैरवतारसंभवैर्गोपैरनेकैः परिवारशोभितः ।
नाम्नी च कीर्त्यस्य बभूव पत्नी पतिव्रताख्या त्ववतारसंभवा ।
द्विलक्षगोपोपरिशोभमाना सुवेष्टिता सा मुखरासमुद्भवा ।
रराज धाम्ना स्वपुरे मनोहरा शुभांगदाम्नी नवकुंकुमारुणा ॥६
तस्यात्मजोऽभूत्प्रभुतुल्यवेशः श्रीदामसंज्ञो सुमनोहरांगः ।
राजाधिराजस्य प्रतापितस्य सप्ताख्यसंख्याकुलमुच्चरेऽस्मि ॥१०
इत्यादिभिः सप्तकुलाभिधानं सुवर्णितं देवगणैः परिस्तुतम् ।
सप्ताख्यपीठाधिनिवासितं कुलं भानोः प्रदीपस्य च वंशवर्णनम् ॥
सा कन्यका जाता शुभांगदीपिनी श्रीकृष्णपत्नी नवनीतवल्लभा ।
संख्या चतुः षष्टि कलासु मुख्या स्वषोडशाख्यास्वकलाभिरामा॥११
श्रीव्रजवधूषु विराजमाना त्वं सर्वदा मे हृदये वसंती ।
युग्मस्वरूपा स्थितमानसंयुता प्रभावति मे कुरु मंगलानि ॥१२

इत्यादिभिर्नारदसंस्तुता सा व्रजेषु पूर्णानि मनोरथानि ।
करोति देवी सकला व्रजस्था भानोः पुरवासा सदैवसंस्था ॥१३
एवं विधानं कुरुतेऽभिषेकं राधाप्रियायाः परमं पदं लभेत् ।
धनैश्च धान्यैः परिपूर्यमानः सकुटुम्बकैः परिवारशोभितः ॥१४
अस्मिन्पुरे व्रजे विराजिते शुभे फलाधिकं कृत्यफलं लभंति ।
व्रजेषु सर्वेष्वधिकं च प्रोक्तं शुभप्रदं वाञ्छितदायकं च ॥१५
जन्मोत्सवं कुर्वंति ये जनास्ते क्रीडन्ति स्वैः स्वैः सकलैः मनोरथैः ।
तेषां च कामानि मनोस्थितानि सुखान्यनेकानि भवन्ति च लोके॥१६
श्रीभट्टनारायणसंज्ञकोऽसौ राधाभिषेकं सकलं विधाय ।
जन्मोत्सवं त्विष्टकलासमुद्भवं ब्रह्मोपरिस्थं युगलं विराजितम् ॥
स्ववाससंज्ञं सकलाभिरामं श्रीनारदस्य त्ववतारसंभवः ।
जगाम भूयो वलदेवमन्दिरं सुदीक्षिताख्यस्त्ववतारसंज्ञकः ॥

इति श्रीवशिष्ठसंहितायां वृषभानुपुरे सर्वव्रजद्वारेषु
श्रीराधाभिषेकप्रयोगविधिः समाप्तः ॥

अथ श्रीललिताभिषेकप्रयोगः

भविष्ये—वृषभानुपुरे रम्ये सखीनां मन्दिरं स्थितम् ।
अष्टाभिः सखिभिः सार्द्धं ललिता तत्र शोभते ॥
तत्रास्मिन् पुनरायातो भट्टो नारायणाभिधः । इति
ब्रह्माण्डे—गर्जपुरे समाख्याते विष्णुना निर्म्मिते स्वयम् ।
तत्रैव सरसि संस्थे युग्मप्रेम्ना प्रपूरिते ।
प्रेमकुंडे समाख्याते समीपे तस्य मन्दिरे ।
स्वकीयं राधया कृत्वा मोहनाख्येन मण्डितम् ।
युगलस्थितये गेहं ललितया तु निर्मितम् ।
ललितामोहनमाख्यं युगलं मूर्त्ति संस्थितम् ।
द्वयोस्तु स्थानयोश्चैवं जन्मन्युत्सवमाचरेत् ।
ललितायास्त्वभिषेकविधिरेषः प्रकीर्त्तितः ।
जन्मोत्सवं चकारात्र दानं कोटिगुणं फलम् ॥

कन्यानां कोटिसंख्यानां प्राप्नोत्युत्सवकारकः ।
गवां हत्या शतानां च पापानि नश्यंते क्षणात् ।
पंचमी कलयाविष्टा षष्ठी क्षयसमन्विता ।
विशाखासोमसंयुक्ता द्वितीये सप्तमी स्थिता ।
पूर्वविद्धा तदा कार्या इदृशी षष्ठिका भवेत् ।
ललिता जन्मन्याख्या सा पुत्रपौत्रसुखकरी ॥
पूर्वविद्धा न दोषः स्यादीदृशी षष्ठिका तदा ॥

स्कान्दे—यदा तु ईदृशी षष्ठी विशाखासोमयोः स्थिता ।
शुद्धा तु सप्तमी संस्था विशाखासोमसंयुता ।
तदाऽस्यां परविद्धायामष्टमी रात्रिसंभवे ।
तदा श्रीललिताजन्मन्युत्सवं च समाचरेत् ॥
सुख-संपत्ति-मोक्षार्थसकलं वाञ्छितप्रदम् ॥

पाद्मे—षष्ठी तु वृद्धिमाप्नोति द्विदिने षष्ठिका भवेत् ।
प्रथमे दिने षष्ठ्यां तु विशाखासोमसंयुता ।
तस्यां तु ललिता जन्म कदाचिन्नैव कारयेत् ॥

तदा तु द्वितीयां षष्ठ्यां विशाखासोमनस्थिते ।
ईदृशी परविद्धा सा ललिताजन्मकारिणी ।
परविद्धा सदा ग्राह्या ललिताजन्मसंभवा ।
पूर्वविद्धा सदा त्याज्या भाद्रशुक्लसमुद्भवा ॥

भाद्रशुक्ले यदा षष्ठी विशाखासोमसंयुता ।
परविद्धा सदा ग्राह्या ललिताजन्मन्युत्सवे ।
उच्चग्रामे त्वटास्थानं ललितायाः प्रकीर्त्तितम् ।
वृषभानुपुरे प्रीत्या त्वष्टाभिः सखिभिर्युता ।
गर्जपुरे प्रेमकुंडे मोहनाख्येन संयुता ।
ललितायास्त्वभिषेकमंत्रास्त्वन्याः प्रकीर्त्तिताः ।
द्वयोश्च स्थानयोश्चैव वृषभानुपुरे स्थिता ।
गर्जपुरे स्थिता देवी ललिता जन्मनस्तथा ।

बृहद्गौतमीये-"राधाभिषेकमंत्राणां भेदोऽस्ति ललितोत्सवे"। श्रीराधायास्त्वभिषेकमंत्राणां श्रीमोहनसंयुक्तायाः युगलमूर्त्तौ वा सखीभिरष्टाभिः सहितायास्त्वभिषेकमन्त्राणां भेदः ॥

उत्सवं त्वभिषेकं च श्रीभट्टो विधिवच्चरेत् ।
भास्करोदयमारभ्यैकादशाः घटिका गताः ।
तुलालग्नोदयं प्राप्ते तत्क्षणे ललितोत्सवम् । इति

निर्णयनिषेधः ।

अभिषेकप्रयोगः प्रारम्भः वृषभानुपुरे–पूर्वमेव भूतलं संस्कृत्य तत्र चतुः स्तम्भादियुक्तं मण्डलं कुर्य्यात् । तदुपरि वितानं बध्नीयात् । तत्र हस्तमात्रपरिमितां वेदिकां कुर्यात्, तत्रैव मण्डपं त्रिगुणिततंतुवेष्टितं चतुर्द्वारतोरणध्वजासहितं कुर्य्यात्। तत्र वेदिकानिकटे सर्वतोभद्रमण्डलं कुर्य्यात् । ततस्तत्रैव सर्व-सामग्रीः संपाद्य आचार्य्यादिवरणं कुर्य्यात् । संकल्पः- अद्येहेत्यादि द्वादशोत्तरषोडशशते १६१२ संवत्सरे मासोत्तमे भाद्रपदे मासि शुक्ले पक्षे तिथौ षष्ठ्यां विशाखार्क्षसोमसंयुतायां श्रीवृषभानुपुरमन्दिरे श्रीयुगलमूर्त्तिकृष्णावतार-श्रीमहाविष्णोराज्ञाप्रवर्त्तमानदक्षिणदेशे गोदावरीतटस्थ मथुरापट्टनपुरा–दाज्ञाप्रवर्त्तमानः यजुर्वेदान्तर्गतापस्तंवसूत्राश्वलायनशाखान्वित भार्गवच्यवनाप्लवानौरव - यामदग्न्येतिपंचप्रवरान्वित-श्रीकृष्णस्योपासकः श्रीकृष्णेन स्वयं दत्तमिष्टदेवं स्ववालस्वरूपं लाडिलेयाख्यं तस्य नियतोपासकः माध्वसांप्रदायिक-वैष्णव-नारदावतारसंभूतस्वरूपश्रीनारायणभट्टशर्माहं - अधिप्रिया-सहितविशाखादिसप्त सखीभिः सार्द्धं विराजमानश्रीसारदी-कन्याललितायास्त्वभिषेकार्थं त्वामाचार्य्यत्वेन वृणे इति ब्रूवन् वस्त्र-कुण्डल-मुद्रिकादिभिर्यथाशक्त्या पूजयेत् । इति वृषभानुपुरे ललिताभिषेकव्याख्या ॥ ततः गर्जपुरे स्थाने

प्रेमकुण्डनिकटस्थमन्दिरे श्रीमोहनसंयुक्तयुगलस्थाशोकपुत्रो-
श्रीललिताया श्रौत्सारगोत्रोद्भवायास्त्वभिषे कार्थं त्वामा-
चार्य्यत्वेनाहं वृणे इति गर्जपुरे युगलस्थललिताभिषेकव्याख्या।
एवमृत्विगादिकमपि। ततः प्रतिसरं बध्नीयात्॥

स्कान्दे रमणकद्वीपाख्याने—

जन्मोत्सवोऽभिषेकश्च द्वयोः स्थानप्रधानयोः।
सप्तभिश्च सखीभिश्च विशाखादिभिः संयुता।
चंद्रावल्यादिभिश्चैव त्वष्टाभिः सखीभिर्युता।
श्रीराधाव्यतिरिक्ताभिः वृषभानुपुरे स्थिता।
राधासुखकरी प्रीत्या ललिता मुख्यशोभिता।
तस्याः जन्मोत्सवं कुर्य्यात् वृषभानुपुरे यदा।
पुत्र-पौत्र-धनैर्धान्यैः सर्वदा सुखमासते।
तुलालग्नोदये प्राप्ते त्वभिषेकं करोति यः।
कन्यादानशतं पुण्यं फलमाप्नोति मानवः।
गर्जपुरे महारम्ये प्रेमकुंडसमन्विते।
निकटस्थे स्वकीयेन रचितं मन्दिरं शुभम्।
तत्रैव ललिता संस्था मोहनेन च संयुता।
युगलस्था महादेवी तस्याः जन्मोत्सवं चरेत्।
गर्जपुरेऽभिषेकं च ललितायाः विधानतः।
ललितायाः प्रियौ स्थानौ द्वावप्यावाससंज्ञकौ।
सर्वदा सुखमाप्नोति वैष्णवः द्रव्यसंचयैः।
कर्त्ता जन्मोत्सवस्यापि वाञ्छितं फलमाप्नुयात्॥

इति द्वयोः स्थानयोर्जन्मोत्सवाभिषेकप्रयोगः। ततस्त्वभिषेक-
मंत्रप्रयोगनिषेधः—

राधाभिषेकमंत्रैस्तु ललितामभिषेचयेत्।
सप्तजन्म भवेद्वंध्यो पुत्रं नैव विलोकयेत्।
अपमानं लभेल्लोके कन्याहत्याफलं लभेत्।
निर्द्धनो दुःखितो भूत्वा दरिद्रो सर्वदा स्थितः।

अष्टानां च सखीनां च विधिरेका विधीयते ।
जन्मोत्सवाभिषेकस्य पद्धतेरेकसंस्थिता ।
सखीनां त्वष्टसंख्यानां भेदो नास्ति महीतले ॥इति निषेध:

भविष्ये पृथ्वीखण्डे—

ललितादिसखीनां तु ह्यष्टानां सुखदायिनी ।
चन्द्रावली स्थितानां च नामान्युक्तानि केशव! ।
मातृपित्रोर्विधानेन व्यासेन लिखितानि च ।
भाषायामन्यनामानि वदन्ति लोकसंभवा: ।
तत्रैवोपसखीनां च निकटस्थनिषेधकं ।
वाक्यमाहु: ते मानेन ललिता स्वसखीन्स्थले ।
जुहाव यैर्नाभभिश्च ते नाम्न: परिकीर्तिता: ।
मयात्रापि समाख्याता: ललिता: वाक्यनिर्मिता: ।
एवं चैव विशाखाया: सखीनामुपसंज्ञकान् ।
नाम्नश्च ललितास्तत्र संख्यास्त्वष्टसमागता: ।
औत्सारगोत्रोद्भवगोपराजो वेणीस्थितग्रामनिवाससंज्ञक: ।
अशोकपुत्री ललिता स्वकीयान् सखीन् मनोज्ञानभिधानसंज्ञकान् ॥
जुहाव वाक्यामलकोमलोद्भवै र्नामाभिधैर्थ लिखिता पुराणे ॥१
अष्टाख्यकानां शुभसंज्ञिकानामासां सखीनां ललितादिकानाम् ।
उपासखीनां कथिताश्च नाम्न: कुर्वंति लोकेषु च मंगलानि ॥२
इति श्रीललिताद्यष्टानां सखीनामुपसखीनां नाम्नां निषेध: ॥

तत: पूर्वमेव पुण्याहवाचनं कुर्य्यात् । "पुनंतु मा देवजना पुनंतु मनसाधिप: पुनंतु विश्वाभूतानि जातवेद: पुनीहि मां" इति पठित्वा अथास्य कर्मण: पुण्याहं भवन्तो ब्रुवंतु ओं पुण्याहं पुण्याहं पुण्याहं अस्य कर्मण: "स्वस्ति भवंतो ब्रुवंतु आयुष्मते स्वस्ति स्वस्तिनऽइंद्रो वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा-विश्ववेदा:, स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽरिष्ट नेमि: स्वस्ति नो बृहस्पति र्दधातु ओं शान्ति: शान्ति: शान्ति: ओं अस्य कर्मण ऋद्धि-

भवंतो ब्रुवंतु ऋद्धतां ऋद्धिः समृद्धिः। अथ दिग्बन्धनं- ततः श्वेतसर्षपान् दक्षिणहस्ते गृहीत्वा "प्राच्यै दिशे स्वाहा, दक्षिणायै दिशे स्वाहा, अवाच्यै दिशे स्वाहा, उत्तरायै दिशे स्वाहा," इति चतुर्षु दिक्षु प्रक्षिपेत्। ततस्त्रि-गुणितरक्तसूत्रेण सप्तस्तम्भान् परिवेष्टयेत्। ततः "श्रीअशोक-पुत्र्याः लयितायाः मण्डप रक्षस्वेति" पठित्वा दिक् पालान्पूज-यत्। तत्र क्रमः-पूर्वस्यां दिशि "कपिशवर्णध्वजादंडधारिण्यै शचीसख्यै पद्मावत्यै नमः" अग्निकोणे "कपिलवर्णध्वजादंड-धारिण्यै स्वाहासख्यै कुमुद्वत्यै नमः" दक्षिणस्यां दिशि "नोलवर्णध्यजादंडधारिण्यै यमप्रियासख्यै पिसाच्यै नमः" इति क्रियाभाजः पताका दश अर्चयेत्। निऋतिकोणे "श्यामवर्णध्व-जादंडधारिण्यै राक्षसोसख्यै प्रलोमायै नमः" पश्चिमस्यां दिशि "श्वेतवर्णध्वजादण्डधारिण्यै वरुणप्रिया-सख्यै प्रमीलवत्यै नमः" वायव्यकोणे "धूम्रवर्णध्वजादंडधारिण्यै अंजनीसख्यै शरावत्यै नमः" उत्तरस्यां दिशि "श्यामलध्वजादंडधारिण्यै रोहिणीसख्यै नमोवत्यै नमः" ईशानकोणे "ऽसितवर्णध्वजादण्ड-धारिण्यै गोरीसख्यै विभूत्यै नमः" अधोभागे "गौरवर्णध्वजा-दंडधारिण्यै नागपत्न्योः सख्यै सुतलाख्यायै नमः" उपरिष्टाद्-भागे "रक्तवर्णध्वजादंडधारिण्यै सावित्र्याः सख्यै पुत्रदावहु-लायै नमः" "श्रीसारदोकन्यायाः ललितायाः मण्डपं रक्षस्व" इति पठित्वा सर्वत्र धूप-दीपादिभिः पूजयेत्। ततः सर्वतो-भद्रमण्डलपूजनपूर्वकं निकटे उपविश्य पचवर्णरञ्जितेऽष्टदल-पद्मे रचिते तत्र तस्य कर्णिकायां तन्दुलान् प्रपूरयेत्। तदुपरि दर्भकूर्चं निधाय तदुपरि कलशं स्थापयेत्। सर्वतोभद्रमण्डल-पूजनपूर्वकं त्रिगुणिततंतुवेष्टितं कुर्यात्। मुखे त्वाम्र-पल्लववेष्टितं धूपितं कुर्य्यात्। ततः कामवोजस्मरणपूर्वकं

मूलमंत्रं पठन् जलं पूरयेत्। ततोऽंकुशमुद्रया तीर्थान्यावाहयेत्। अंगुष्ठानामिकायुक्तया मुद्रया विलोडयेत्। तत्र कुंभे विष्णुक्रान्तामिन्द्रवल्लीं दूर्वां च प्रक्षिपेत्। तर्जनीमध्यमे प्रसार्यानामिकाकनिष्ठांगुष्ठैः कुशं गृहीत्वा अस्त्रमन्त्रं पठन् प्रोक्षणं कुर्य्यात् तदनन्तरं अस्त्रमंत्रेण ताडनं यथा "करवीरस्य पुष्पाणि गृहीत्वाक्षरसंख्यया। ततस्तौ ताडयेन् मंत्रं कामवीजेन मंत्रवित्" कामवीजं पठन्नभ्युक्षणं कुशेनावगुंठनं, ततः षडंगन्यासं कुर्य्यात् ततो धेनुमुद्रयाऽमृतीकरणं, ततो "दशकलाव्याप्ताय वन्हिमण्डलाय नमः" ततः "द्वादशकलाव्याप्ताय सूर्य्यमण्डलाय नमः" ततः "षोडशकलाव्याप्ताय सोममंडलाय नमः" पठेत्। ततोऽष्टोत्तरशतं सहस्रं वा मूलमंत्रं जपेत् ततस्तेन जलेन सर्वं प्रोक्षयेत्। गोमयांभसा त्रिकोणमण्डले शंखस्थापनं शंखासनं प्रक्षाल्य स्थापयेत्। अस्त्राय फडिति शंखं प्रक्षाल्य ततस्तत्र गंधाक्षतान्प्रक्षिपेत्। हृदयमन्त्रमुच्चरन् ततः मातृकाक्षरप्रतिलोमैः जलं पूरयेत्। ततः शंखपीठे "दशकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नमः" इति जपन् पुनः पूजयेत। ततः शंखजले "षोडशकलाव्याप्तसोममण्डलाय नमः" इति पठन् गंधादिभिः पूजयेत्।"त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विधृता विष्णुना करे। निर्मिताखिलदेवेषु पांचजन्य नमोऽस्तु ते।" पांचजन्याय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तन्नो शंखः प्रचोदयात्" "गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति! नर्मदे सिंधु कावेरि! जलेऽस्मिन् संन्निधौ भव"। ततस्तत्र तीर्थावाहनमंकुशमुद्रया,ततः शिखामंत्रेण गालिनीमुद्रां प्रदर्शयेत्। ततः जलं प्रपश्येत् ततो पंचागंन्यासं कुर्य्यात्। ततश्चक्रधेनुमुद्रादिदर्शनं, ततोऽष्टधा मूलमन्त्रं जपेत्। तत्र पंचदश नव त्रीणि वा पात्राणि स्थापयेत् ततः, सर्ववस्तु प्रोक्षणं कुर्य्यात्, ततः

श्रीललितां दृढ़ासने उपवेश्योपचरेत्। तत्र मूलमंत्रं पठन् पात्राणि स्थापयेत्। मूलमंत्रमुच्चार्य्य श्रीअशोकनन्दिनि श्रीललिते स्वागतमित्यभिनन्द्य पुष्पषट्कं दद्यात्।

ग्रामाभिधानो वृषभानुगोपो प्रवासको रावलिग्रामसंज्ञके।
नन्दातिप्रीत्या सुखवासहेतवे भानोः पुराख्ये वरसानसंज्ञके॥

इति भविष्ये। ततस्त्वष्ट सखीनां ललितादीनां चतुः षष्टिकला-विराजमानानां स्वरूपाणि ध्यात्वा तत्रादौ अष्टकलासमेतललितां ध्यायेत्। विष्णुयामले—

प्रवासयामास मनोहरं पुरं क्रीडास्थलं वाञ्छितदायकं शुभम्।
अनेकगोपैः परिवारभूषितस्त्वशोकगोपो द्वययुतां गवां पतिः।
धान्यैरनेकैः परिपूर्य्यमाणः पंचायुतगोपसभाप्रदीपः।
इन्द्रावतारः परितृप्तकामः प्रवासकर्त्ता बलदेवसन्निधौ।
व्रजेषु मुख्यं सुखधामराजकमुच्चाभिधानं ललितास्वग्रामम्॥
अटाकृतान्नाम त्वटोरिसंस्थं शोभान्वितं श्रीललिताभिनिर्मितं।
मनोहरं देवगणादिकानां देवर्षिसंघास्थितभूतमत्र।
तं भूषितं गोपकुलैः करोति नाम्ना महाभानुः पुराणसंस्थः।
पत्नी च तस्य कुलकीर्त्तिमंडिता श्रीसारदी नाम कुलप्रदीपा।
पंचायुतगोपवधूभिर्वेष्टिता गौरांगकाभा शुशुभे च ग्रामे।
मनोज्ञवेशा महाराजसंज्ञका गोपीसमाख्या नरदेवलोके॥५
तस्यात्मजां त्वां व्रजसुन्दरीं रमां कलाभिरष्टाभिः विराजमानाम्।
मनोज्ञवेषां ललितां शुभाननां सखोभिरष्टाभिः निवेशितां युतां॥६
औत्सारगोत्रोद्भवराजकन्यां नमामि त्वां देवि! मनोऽर्थसिद्धये।
भानोः पुरे मन्दिरे सुस्थितां शुभां सखीविशाखादिसमाश्रितां प्रियां
राधादिसंगां प्रभुराजकीर्त्तिं नतोऽस्मि त्वां सुन्दरि! मे प्रसीद॥७

अष्टकलानिवासनिरूपणं—

गौरा श्यामा मुखे स्थिता शुभकरी चित्तंहरा वक्षसि।
मानार्थदा सुंदरी बाहुमूलयोः पीता रमाख्या चरणाब्जयोः स्थिता।

कलाष्ट संख्यावयवेषु शोभिता एवं कला चाष्ट विराजमाना ।
एतादृशांगैः परिशोभमाना बालस्वरूपा ललितागतास्था ।
जन्मोत्सवे भानुपुरस्थमन्दिरे प्रसीद देवि ! त्वभिषेकहेतवे ।

इति वृषभानुपुरे ललितास्वरूपं ध्यात्वा ततः गर्जपुरे स्वरूपध्यानं—

गर्जपुरे प्रेमपरिप्लुतांगा कलाभिरष्टाभिः विराजमाना ।
श्रीमोहनेनाधृतयुग्ममूर्त्ति नतोस्मि त्वां देवि प्रसीद त्वं मे ॥
ललितामोहनसंज्ञकां भगवतीं श्रीसारदोकन्यकां
अष्टाभिः सखिभिर्युतां सुमनसां सिंहासनस्थां भजे ।
देवीं वाञ्छितदायिनीं शुभकरीं राधाविनोदं कृतां
नानाभोगप्रदायिनीं सुनयनां भूषा ज्वलंतीं प्रियाम् ॥

इति गर्जपुरे स्वरूपं ध्यात्वा—एवं विशाखादीनां अष्टानां जन्मोत्सवेषु स्वरूपाणि ध्यायेत् ॥

कौडिन्यगोत्रोद्भवगोपराजो गवामधीशो द्वययुताधिकानाम् ।
सुभानुपुत्रीं नवनीतकोमलां गोधूमवर्णां गमनोहरां शुभाम् ॥
देवीं विशाखामभिधानसंज्ञकामष्ठाकलाभिः परिशोभमानाम् ।
भानोः पुरस्थां सखीमध्यशोभितां नतोस्मि त्वां देवि प्रसीद मे त्वं॥
"सुखप्रदा सुमनसा मुखमंडले स्थिता
श्रीकांति कामा हृदि 'संस्थिताः कलाः ।"
रासक्रीडनतत्परा भगवती बाह्वोः स्थिता पादयो
र्मानाख्या चतुःकेशिका स्थितवतीत्याष्टा कलाभिर्युताम् ॥
एतादृशांगैः परिभूषितांगां जन्मोत्सवे शोभितश्रीविशाखाम् ।
पुरांजनाख्यं परि रोचयंतीं श्रीकृष्णपत्नीं प्रियवाञ्छितप्रदाम् ।

वृषभानुपुरे एतादृशं विशाखास्वरूपं ध्यात्वा ततश्चम्पकलता-स्वरूपं ध्यायेत्—

सूताख्यगोत्रोद्भवगोपमुख्यो पत्नी सुकंठो मनुभूपनामा ।
तस्यात्मजां सुन्दरवेल्लिकांगीं तृतीयसंज्ञां च सखीं नमामि ॥

लताख्यकां चंपकबालशोभितां सखीसमेतां परिवारभूषिताम् ।
मनोहरांगीं सुखदायिकां भजे भानोः पुरे संभृतबालरूपां ।
करहपुराख्यं परिशोभयन्तीमष्टाभिः सखोभिरूपचारिकाभिः ।
विराजमानां नवनीतकोमलां गौरांगयष्टिं स्वकलाभिरामाम् ॥
अष्टाभिः कलाभिः विराजमानां पुष्पादिभिः संयुतशोभितांगाम् ॥
मुखास्थितमयी स्थानेषु षट्सु स्थिता हृद्वाङ्गरूपु व्यापिता
षड्कला वांछाशुभाख्यादयः ।
एतादृशां चंपकसंभवां लतां जन्मोत्सवे त्वां परिचिन्तयामि ।
सखीं तृतीयामभिधानसंभवां पीताम्बरां बालस्वरूपरम्याम् ॥इति
श्रीचम्पकलतास्वरूपध्यानम् ।

अथ चित्रलेखास्वरूपध्यानम्—

गोत्रांगिरसोद्भवनामधेयो गोपो व्रजोदार अवन्ती पत्नी ।
तस्यात्मजां चित्रविचित्रवर्णां मनोहरांगीं कमलायताक्षीम् ।
मोदामयाद्यादिभिरष्ट संख्यकैः कलाभिरावेष्टितचारुदेहाम् ।
पुरं चिकित्साख्यं प्रदीपितां शुभां श्रीचित्रलेखां प्रणमामि सुन्दरीम्॥
स्थानचतुर्थेषु विराजमानां भानोः पुरास्थां व्रजसुन्दरीं रमाम् ।
जन्मोत्सवे ख्यातचतुर्थिकां सखीमष्टाभिराख्याभिरूपासखीभिः ।
इति चित्रलेखास्वरूपं ध्यात्वा ।

अथ तुंगदेवीस्वरूपध्यानम्—

नमामि धेयोंऽगदगोपराजो गोत्रात्रिसंभूतकुलप्रदीपः ।
तस्यात्मजां सुन्दरतुंगवेषां भानोः पुरे त्वां परिचिंतयामि ।
नाना-क्षीरपयोदारादिभिर्युतामष्टादिभिः सुन्दरा-
मुच्चस्थाननिवेशितां भगवतीं श्रीतुंगदेवीं भजे ।
स्थानपंचमसंस्थितां शुभकरीं जन्मोत्सवे मन्दिरे
त्वष्टाख्याभिः सखीभिरम्यतां सखीं भानोः पुरे संस्थिताम् ॥

अथ रंगदेवीस्वरूपध्यानम्—

गौतमगोत्रोद्भवसंज्ञकोऽसौ श्रीवीरभानुर्महराजगोपः ।

नामाभिर्या सखीं रंगदेवीं तस्यात्मजां भानुपुरे वसन्तीम् ।
श्रृंगारचेष्टादिभिरष्टसंख्यकाकलाभिः वेष्टां भवतीं मनोहराम् ।
श्रीरंगदेवीमुपचारिकाभिः सखीभिरष्टाभिः निवेशितांगाम् ॥
जन्मोत्सवे त्वां परिचिन्तयामि भानो पुरस्थां षडास्थासंस्थाम् ।
गौरांगयष्टिं स्वकुलाभिरम्यतां स्वसिद्धिदां वाञ्छितदायिनीं शुभाम्

अथ सुदेवीस्वरूपध्यानम्—

पराशराख्योद्भवगोत्रसंज्ञको श्रीगौरभानुश्च कलावती प्रिया ।
कन्यां तयोः सुन्दरवेषधारिणीं नाम्ना सुदेवीं परिचिन्तयामि ॥
प्रियादिभिस्त्वष्टकलाभिःसंयुतां चतुर्षु गतेषु निधायिनीं कलाः ।
सप्तप्रधानेषु च पीठकेषु स्थितां सुदेवीं परिचिंतयामि ।
भानोः पुरस्थां नरदेवपत्नीं राधाप्रियां भगवतीं शुभदायिनीं शुभाम्
जम्मोत्सवे वालस्वरूपरम्यामुपासखीभिः परिशोभितांगाम् ॥

अथेन्दुलेखास्वरूपध्यानम्—

गोत्राख्यंकनैध्यवसंमवोऽसौ नाम्ना सुगोपो रणधीरसंज्ञकः ।
तस्यात्मजामिन्दुकलासमुद्भवां श्रीमिन्दुलेखां प्रणमामि देवीम् ।
कलाभिरष्टाभिश्चतुर्वृतांगां नाम्ना परीहारविभूषणादिभिः ।
भानोः पुरस्थां नवनीतकोमलां गोधूमवर्णां सुमनोहरांगीम् ।
जन्मोत्सवे त्वां परिचिंतयामि सखीभिराविष्कृतभूषणांगाम् ।
श्रीइन्दुलेखां रमणाभिरामामष्टाभिधानोपसखीसंस्थिताम् ।

अथ चन्द्रावलीस्वरूपध्यानम्—

श्रीसूर्यभानुः प्रभुराजसंज्ञको श्रीमैत्रवर्णाख्यप्रभूतगोत्रा ।
चन्द्रावलीं तस्य सुतां नमामि नवाख्यसंज्ञां परिचिन्तयामि ॥
रिंठपुरं भूषयन्तीं मनोहरां चन्द्रावलीं त्वां परिचिंतयामि ।
पीताम्बरां भगवतीं नवमाभिधानां श्रीकृष्णपत्नीं वृषभानुरम्ये ।
जन्मोत्सवेषूत्सबसंयुतेषु नवा सखीनामभिधायिनां शुभाम् ।
"इत्यादि नवानामभिषेकसंभवे त्वशोकपुष्प्यादिकसंयुतानाम् ।
सखीस्वरूपाणां विनिर्मितानि विधाय जन्मादिषु मंगलानि ॥"

इति ब्रह्मयामले ।

एवं सखीनां नवमंत्रकानि व्रजप्रकाशे विधिप्रोक्तकानि ।
मया लिखित्वा विधिपूर्वकं यथा चैकोनविंशाख्यसहस्रकेऽस्मिन् ॥

सखीनां तनुरूपाणि कृष्णादीनां स्वरूपाणाम् ।
बालसेवादिकानां च शिखराबंधमन्दिरे ।
नैव कुर्य्यात्कदाचित्सः पुमरुत्थापसंभवात् ।
पुनरुत्थापनं भूयात्प्रतिमायाः स्वरूपिणः ।
शिखाराबंधकस्थानान्नैव मन्दिरवेष्टनात् ॥

इति विष्णुपुराणे ।

पाद्मे—बलदेवादिरूपाणां बालचेष्टास्वरूपिणाम् ।
शिखराबंधकं वेश्म नैव कुर्य्यात्कदाचन ॥
मन्दिराच्छिखरीशून्यान्नैवोत्थापनदोषकम् ।
मन्दिराच्छिखराबंधात्प्रतिमां नैव चोत्थयेत् ।
यस्माद्बालस्वरूपाणां शिखराबंधमन्दिरम् ।
नैव कुर्य्यात्कदापि तु ब्रह्मणे विष्णुनोदितम् ।
मन्दिराच्छिखराबंधादुत्थापयति मूर्त्तिकम् ।
परिवारत्त्रयं नीत्वा भस्मतां स्वयमगमत् ।
वृषभानुपुरे रम्ये गर्जपुरसमाह्वये ।
स्थानयोश्च द्वयोस्त्वेवं ललिताजन्मन्युत्सवम् ।
कुरुते भक्तिमांल्लोको प्रसीदा परमेश्वरी ।
धनधान्यकुटुम्बेषु सर्वदा सुखकारिणी ॥

स्कान्दे—सर्वेषु व्रजलोकेषु विष्णोरंगाः प्रपूरिताः ।
तान् तान् ध्यात्वा प्रतिष्ठंति वाञ्छितान् सुखसंचयान् ।
लभंते मानवाः लोकाः विष्णोश्चैव प्रसादतः ।
कुदृष्टिभिः खलाः लोकाः व्रजं पश्यन्ति निर्भयाः ।
परिवारत्त्रयं नीत्वा ते भस्मास्तु भवन्ति हि ।
क्षणमात्रं क्षयं त्वायुः ब्रह्मन्सत्यं त्वयोदितम् ।

इत्यादि ललितादीनां सखीनां रूपशोभितम् ।
ध्यात्वा हृदयमास्थाय नारायणाभिधो शुचिः ।
नारदस्यावतारोऽहमभिषेकं करोमि ते ॥ इति भट्टोक्तिः ॥

तत इत्यादि स्वरूपादिभिर्जन्मदिने तु श्रीअशोकपुत्रीललिताविर्भावं संभाव्य पश्चात् स्वागतादिप्रश्नः, ततो मूलमंत्रमुच्चार्य आसनं गृहीत्वा "श्री ललिते इदमासनमास्यतामिति वदन्" आसने पंचपुष्पाणि कूर्चदूर्वासहितं दद्यात् । ततः श्यामार्कपंचकं अब्जपंचकं विष्णुक्रान्तापंचकं तत्सहितं च पलचतुष्टयं जलं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीललिते इदं पाद्यं नमः" इति ब्रूवन् चरणाम्बुजे पाद्यं दद्यात् । ततः जातीलवंगकक्कोलानां षट्पलक्वाथं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चरन् "श्रीसारदीनन्दिन्यै मोहनप्रियायै ललितायै स्वधा" इति ललितायाः मुखे कांस्यपात्रेणाचमनं दद्यात् । ततश्चन्दनकर्पूराद्यात्मकगंध-पुष्याण्यक्षतं यवाः दूर्वाः तिलश्वेतसर्षपाकुशसहितं चतुः पलजलमादाय मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीअशोकपुत्र्यै औत्साहगोत्रोद्भवायै ललितायै स्वाहा" "तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणं । तापत्रयविनिर्मुक्तो तवार्घ्यं कल्पयाम्यहं" इत्युच्चरन् श्रीललितायाः शिरसि अर्घ्यं दद्यात् । "त्वद्भक्तिलेशसंपर्को परमानन्दसंज्ञकः । तस्य ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये," पाद्यार्घमेतेषु प्रत्येकमाचमनं ज्ञेयम् । ततो मधुपर्कः "सर्वपापविनशाय नमस्ते ललिते प्रिये !। मधुपर्कमिदं देवि ! कल्पयामि प्रसीद मे" आज्यं दधि मधु पलैकं कांस्यपात्रे गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीराधासुखकारिण्यै भगवत्प्रियायै ललितायै स्वधा" इति पठन् श्रीललितायाः मुखे दद्यात् । "सर्ववेदमसे देव्यै सर्वदेवात्मने नमः । आचमं कल्पयामीशे शुद्धं त्वां शुद्धिहेतवे" ततस्त्वाचमनार्थं पलमेकं जलं दद्यात् । ततस्तिलपिष्टेन श्रीराधा-

प्रियकारिणीं ललितामुद्वर्त्य तत- "दश हूतो वै नमैषस्तं वाए तं दशहूत ॐ संदशहोतेत्या चक्षते परोक्षे प्रिया इव हि देवा:" इतिमंत्रं पठन् वस्त्र परिवर्त्तनं कारयेत् । तत 'स्तद्ब्रह्महरणंन्म त्यच्यावत अंतर्वेदिन न यत्प वरूध्यै उन्मुके नाभिगृह्णाति शृतत्वाय श्रृतकामा इव हि देवा:" इति मंत्रं पठन् पंचाशत्पल-जलेन स्नानं दद्यात् । "आत्मत्वात्सोमस्वाहा घृतवह्नि भूत्वा देवानाॐसुर्वबिदयजमानाय मह्य" इति पठन् मूलमंत्रमुच्चरन् स्नापयेत् ।

ततः पंचामृतेन पंचपलदुंग्धं गृहीत्वा "पयः दूरा भूति पृथिव्यै रसो मोत्क्रमीत देवाः पितरः पितरो देवा:" इति मंत्रं पठन् दुग्धेन स्नापयेत् । ततः पंचपलपरिमितं दधि गृहीत्वा "दधि लोकस्य राजा महतो महान्हि सुगन्न पंथामभयं कृणोतु" इति मन्त्रं पठन् दध्ना स्नापयेत् । ततः पंचपलपरिमितं घृतं गृहीत्वा "यस्मिन्नक्षतैरय मसि घृतेन राजा यस्मिन्नेन मभ्यषिचंत देवा:" इति मंत्रं पठन् घृतेन स्नापयेत् । ततः मधु गृहीत्वा "मधु विच्छिन्न प्रविधृताभ्यां ॐ सपत्नान् जातान् भ्रातृव्यान्ये च जनिष्यमाण:" इति मंत्रं पठत् मधुना स्नापयेत् । ततः शर्करां गृहीत्वा "ज्योतिरसि विशोपंत्राभ्यां विधमान्येनान् ग्रहॐ स्वा-नामुत्तमो साचि देवा:" इति मंत्रं पठन् शर्करया स्नापयेत् । ततः सप्तपलं जलं गृहीत्वा "अनृक्षरा ऋजवः संतु पंथायेभिः सखायो पंतिनो वरेयं सपर्थमासं भगो नो निनीयात्संजास्पत्य ॐ सुयममस्तु देवा:" इति मंत्र पठन् सप्त पलजलेत संमार्ज-येत् । ततः संस्कृतं सर्वतोभद्रघटजलं सर्वघटेषु प्रक्षियेत् । तत्रा-ष्टदिक्षु त्वष्टघटेषु अनुक्रमेण सर्व्वौषधिमहौषधि वीजाष्टकं नवरत्नं पुष्पं फलं चन्दनं गन्धं प्रक्षिपेत् । नवमघटमग्रे दशमं सहस्रधारक-लशं तत्र नवमंगल शंखजलं दूर्वापुंजसहितेन शंखेन स्नापयेत् ।

"गृभ्णामि ते सुप्रजास्त्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः दधातनः जातो यदग्रे भुवनाव्यचख्यः जिन्वथः स्वाहा" इति मंत्रं त्रिरावृत्या पठन् पूर्वदिशि स्थितं कलशं सर्वौषधिद्रवरस-सहितं गृहीत्वा "वैश्वानरो ब्रह्मणे गोविंदं गातु यूयं पातः स्वस्तिभिः सदा नः" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः महौषधिद्रवरससहितं घटं गृहीत्वा "वषट् ते विष्णुवास आकृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यं" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः वीजाष्टकयुतं घटं गृहीत्वा "वर्द्धं तु त्वा सुष्टुतयोगिरो मे यूयं पातः स्वस्तिभिः सदा नः निकामेन पच्यतां" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः नवरत्नयुक्तं कलशं गृहीत्वा "वास्तोष्पते शग्मयाष ७ सदा ते सक्षीमही हिरणमया गातुमत्या इदं मम" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् । ततः पंचादशदधिकपुष्पयुक्तं कलशं गृहीत्वा "आवःक्षेम उतयोगे वरन्नो यूयं पातः स्वस्तिभिः सदा नस्त्वामभिषिंचामि" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः फलयुक्तं कलशं गृहीत्वा "वृहस्पतियुर्वमिंद्र श्च्यवस्वः दिव्यस्येशाथे उतवापार्थिवस्य" इति मंत्रं पठन् फलोदकेन स्नापयेत्। ततः गन्धादकयुक्तं कलशं गृहीत्वा गायत्रीं पठन् स्नापयेत्। ततश्चन्दनोदकघटमादाय "घृत ७ रसि ७ स्तव ते कीरये चिद्धृतं पातः स्वस्तिभिः सदा नः" इति पठन् स्नापयेत्। ततः सहस्रधारकलशे सर्वौषिधिमहौषधिवीजाष्टकं सर्वरत्नानि पुष्पाणि फलानि प्रक्षिप्त्यतां "एवा वंदस्व वरुण वृहतं सवितु र्वरेण्य नमस्यधीरममृतस्य गोपां" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् ! पुनः गायत्रीं पठन्स्नापयेत् पुनःसुमंगलीरिति पठन् स्नापयेत् । ततः महौषधिना स्नापयेत्। "आपोहिष्टेति" पठन् नवरत्नानि स्नापयेत्। ततः पुष्पोदकेन स्नापयेत्। "यूयं यातः फलिनीः स्वस्त्तिभिः सदा नः स्वाहा"इति मंत्रं पठन् फलोदकेन स्नापयेत्। ततः सहस्रधारघटे-

नैव "आनोनियुद्भिः शतनीभिरध्वरं सहस्रीभिरुपयाहि यज्ञं वायो अस्मिन् हविषामादयस्व यूयं पातः स्वस्तिभिः सदा नः शिखाभासे" इति मंत्रं पठन् श्रीललितां शिखाभागे स्नापयेत् ॥ ततो वस्त्रेण मार्जनं, ततो न्यासं कुर्य्यात् । ततो वस्त्रं गृहीत्वा "हिरण्यवर्णो अभयं कृणोतु अभिमातिहेंद्रः पृतनासु जिष्णुः" इति पठन् श्रीललितायै वस्त्रं दद्यात् । ततः सहदेवी सदाभद्रा सूर्य्यावर्त्ता कुशाग्रकैः शिरीषरजनीभ्यां निर्मथ्य निंवराजीलवणराजीशर्षपैः दृष्टिमुत्तार्य्य तोयादौ प्रक्षिपेत् । ततः सिंहासने श्रीललितां पाद्यादिभिरुपचरेत् । ततो मंगलार्थं नारिकेरफलान्वितं कलशं स्थापयेत् । ततस्तन्मन्त्रोक्तन्यासपूजादिकं कुर्य्यात् । ततोऽजनतिलकमालाभरणादिना शृंगारं कृत्वा प्रतिसरं वध्नीयात् । तथा पीतडोरकं गृहीत्वा "सन शर्मत्रिवरूथं वियछं सत् यूयं पातः स्वस्तिभिः सदा नः यत्पुरुसंभृतं च वस्त्रं साक्षत् वध्वानः" इति मंत्रं पठन् श्रीललितायाः वामहस्ते वध्नीयात् ॥

ततस्त्वादर्शं गृहीत्वा "अश्वावती र्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः संपदसि सदमुछंतु भद्रास्तेजसे" इति मन्त्रं पठन् दर्शयेत् । ततो भूषणादीनि मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीसारदीकन्ये ललिते इदं पुष्पं ते निवेदयामि"इति सर्वं निवेदयेत् । ततो धूपदीपादिकं कृत्वा नैवेद्यं समर्पयेत् । ततः दूर्वापुंजमाम्रपल्लवं गृहीत्वा श्रीललितायास्त्वभिषेकं कुर्य्यात् । "घृतं दुहानां विश्वतः प्रपीना यूयं पातः सदा नः त्वं वरुण उतमित्रो अग्ने त्वां वर्द्धतिमतिभिर्वसिष्ठाः ते वसुषुणनानि संतु यूयंपातः पुनानां स्वस्तिभिः सदा नः" इतिमन्त्रः । ततः मन्दिरोपरि ध्वजापताकां वंधयेत्, ततः नीराजनं कुर्य्यात्, ततः ब्राह्मणान् भोजयेत् ॥

पाद्मे—खण्डिते स्फुटिते चांगे चौरस्पर्शे यदा भवेत् ।

शूद्रस्पर्शे स्थानभ्रष्टे विपरीते समाकुले ॥
विग्रहे पूर्वमेवादौ प्रतिमादिप्रतिष्ठते ।
एतेषु सर्वकार्य्येषु त्वभिषेकविधिः स्मृतः ॥
विष्णुपुराणे–जन्मोत्सवेषु सर्वेषु सांथिका द्वारस्तम्भके ।
मन्दिरे विधिना धार्य्या पुत्रवज्जन्ममाचरेत् ॥
बलदेवादिमूर्त्तिनां कृष्णादीनां यथाविधिम् ।
राधादीनां तथैवात्र ललितादीनां तथैव च ।
बृहत्साकलगोत्रेऽस्मिन् जातो राजा स रैवतः ।
रेवती तनया तस्य त्रिवेण्यां युगलस्थिता ।
ललितात्यन्तप्रीत्या सा तस्याः निकटगामिनी ।
श्रीब्रह्मणोदितविधिः ।
ललिताभिषेके सा ज्ञायतेऽष्टा सखिषु प्रयुक्ता ॥
एवं विधाय्य ललिताभिषेकं श्रीरेवतीवल्लभवासकं सः ।
श्रीनारदस्य त्ववतारसंभवो श्रीलाडिलेयाख्यमुपासकोऽगात् ॥
नारायणाख्यश्च समुद्धरेद्व्रजमुच्छिन्नवासं व्रजभूमिमंडलम् ।
प्रभोरनुज्ञापरिवर्त्तमानः श्रीकृष्णचिन्हानि विलोक्य तानि ॥
चिन्हानि ख्यातानि ब्रजप्रकाशे तेनानुसारेण प्रकाशयेद्व्रजम् ।
सर्वोत्सवव्यंजनरंजकानि नैवेद्यवस्तूनि विधानतः कृताः ।
विधानमेतत्सकलं प्रकाशितं ग्रन्थस्य पूर्वार्द्ध विधानसंज्ञके ।
ब्रजोत्सवानां च प्रदीपिकायां सप्तप्रकाशान्वितनामधेये ॥

इति श्रीविष्णुसंहितायां श्रीललिताद्यष्टसखीनां जन्माभिषेकविधिपद्धतिः समाप्तः ॥

श्रीलाडिलेयं त्ववतारसंभवं संकल्पयित्वा त्ववतारसंख्यया ।
मतः प्रसूताः विधिनैव धार्य्या स्वमिष्टदेवं समधाय लाडिलम् ॥

इतिश्रीमद्भास्करात्मजश्रीनारायणभट्टगोस्वामिविरचितायां व्रजोत्सवचन्द्रिकायामुत्तरार्द्धवृत्तौ
ब्रजसारोद्धारे दशमः प्रकाशः

अथ श्रीरामाभिषेकप्रयोगः

पाद्मे—उत्तरेऽस्मिन्नदी संस्था सरयू नाम विश्रुता।
तस्यास्तटे विराजते अयोध्यानगरी स्थिता।
समुद्रस्य तटे रम्ये सेतुवंधाभिधानके।
त्रिपद्यां स्थानरम्यायां लक्ष्मण जन्म चोत्सवम्॥
शेषावतारजन्मनि च सर्वमुत्सवमाचरेत्।
तस्यामासीद्दशरथो राजा विख्यातकीर्त्तिमान्।
गोत्रमुद्गलसंभूतो सूर्य्यवंशसमुद्भवः।
तस्य पत्न्यस्त्रयश्चासीत्कौशल्या च सुमित्रका
कैकेयी च महाराजन् तासु विष्णुः प्रसीदति॥

जन्मनिर्णयः विष्णुधर्म्मोत्तरे—

चैत्रस्य शुक्लपक्षे तु नवमी रविसंयुता।
पुनर्वस्वृक्ष संयुक्ता परविद्धा सदा शुभा॥
चतुर्द्दश घटीजाताः लग्ने च मिथुनोदये।
कौशल्यायां स्वयं बिष्णुरवतरेद्राम संज्ञकः॥
बृन्दाशापेन श्रीविष्णुः देवानां वरदानतः।
रावणस्य बधार्थाय पृथिव्यां प्रगटोऽभवत्।
ततः सप्तदशाः घट्यः कर्कलग्नोदये सति।
कैकेय्यां तनुजो जज्ञे भरतो नाम संज्ञकः।
ततश्च षोडशाः घट्यः गताश्च समये सति।
लग्नस्य मिथुनस्यापि तुर्य्यभागमवस्थिते।
सप्तमे नबमांशे च सुमित्रायां भवेद्धरिः॥
लक्ष्मणाख्यो बृहत्पुत्रः शेषजन्मसमुद्भवः।
ततश्च विंश संख्याकाः गताश्च समये सति।
कर्कसिंहान्तरे जातः शत्रुघ्नो भरतानुगः॥
सुमित्रालघुपुत्रश्च छत्रलक्षणसंयुतः।
चैत्रस्य शुक्लपक्षे तु ह्यष्टमी कलया युता।

नवमी ह्यययोगेन ह्यष्टम्यामौमभोगिता ।
पुनर्वसुसमायुक्ता रविबारेण संयुता ।
द्वितीये बासरे शुद्धा केवला दशमी यदा ।
पूर्वविद्धा सदा कार्य्या दोषः स्नान्नैवमीदृशी ॥
कौर्म्ये—ईदृशी नवमी भूता पुनर्वसुना संयुता ।
तदा तु परविद्धा तु दशमी नवमी स्थिता ।
पुनर्वसुरवेर्वारद्वयोर्योगस्थिता यदि ।
दशम्यामीदृशाख्यायां रामजन्मोत्सवं चरेत् ॥
नवमी वृद्धितां याति बासरे द्वेऽपि जायते ।
परविद्धा सदा ग्राह्या नवमी शुभदायिनी ॥
रामस्य जन्मनि ख्याता चैत्रमाससमुद्भवा । इति
रामनवमी निर्णयः ॥

ततः युगलनिषेधः भविष्ये—

चैत्रमासि सिते पक्षे दशमी पुष्यसंयुता ।
सोमवारसमायुक्ता सूर्य्योदयप्रवर्त्तनात् ।
चत्वारश्च गतः घट्यः मेषलग्ने समागते ।
तत्समये जानकी भूम्यां सीतामाम्नी स्ववातरत् ॥
तत्रैव दिवसे संस्थे घटीः सप्त गता यदि ।
मिथुने लग्नगे चैवमुदये समुपस्थिते ।
त्रिनवत्योत्तरचतुः शताख्यफणसंयुतैः ।
सप्तभिश्च फणैर्युक्ता सोमिला जायते तदा ।
जनकस्य गृहे जाता शेषपत्नी समुद्भवा ।
वारस्पत्याख्यगोत्रेऽस्मिन् जातास्ते राजसंज्ञिका ॥
एवं च लक्ष्मणो जातो शेषलक्षणलक्षितः ।
त्रिनवत्योत्तरचतुः शताख्यफणसंयुतैः ।
सप्तभिश्च फणैर्युक्तो लक्ष्मणो जायते तदा ।
युगलौ च समुद्भूतावतारौ द्वयोः स्थले ॥ इति
युगलनिषेधः ।

ततः श्रीरामावतारजन्मोत्सवस्थाननिषेधः, ब्रह्माण्डे—

अवतारे च रामस्य लक्ष्मणो शेषसंज्ञकः ।
अवतारे च कृष्णस्य बलदेवोऽग्रजो स्थितः ॥
राजसेवा बालसेवा स्वरूपाः कृष्णरामयोः ।
जन्मोत्सवं न कुर्य्याच्च गृहे पुत्रो न जायते ।
अपुत्रो भवते स्वामी दरिद्री दुःखितो भवेत् ।
कर्त्ता रामोत्सवस्यापि सर्वदा सुखमासते ।
नवम्यामुपवासं च रामभक्तिसमन्वितः ।
कुर्य्याद्यदीच्छितान् कामानाप्नुयात्पदमापदम्॥
उपवासं न कुर्य्याच्च सेवको रामकृष्णयोः ।
पतति नरके घोर कामना निष्फला भवेत् ।
व्रजेषु सर्वद्वारेषु कुर्य्यादामाभिषेचनम् ।
द्वयुतं गुणितं पुण्यं फलमाप्नोति मानवः ।
वनेषूपवनेष्वेषु त्वयुतं गुणितं फलम् ।
अयुतं गुणितं प्रोक्तं मथुरायां कृतं फलम् ।
चतुर्भिरयुतैर्गुण्यैर्गोकुलेषु कृतं फलम् ।
वृन्दावने सहस्रं च गुणितं फलमाप्नुयात् ।
गोवर्द्धने च श्रीकुन्डे द्विसहस्रगुणं भवेत् ।
नन्दग्रामे च संकेते वृषभानुपुरे कृतम् ।
अयुतं गुणितं पुण्यं फलमाप्नोति मानवः ॥
काम्यवने स्वर्णपुरे द्वयुतं गुणितं फलम् ।
गर्जपुरे चोच्चग्रामे द्विसहस्रगुणं फलम् ।
वने भाण्डीरके चैव छत्रके खदिराह्वये ।
फलं पंच सहस्रं च गुणितं च प्रकाशितम् ।
महावने च लोहाख्ये वटे वा कोकिलावने ।
द्वयुतं गुणितं पुण्यं शुभस्थाने तथैव च ।
गंगादिसर्वतीर्थेषु फलं लक्षगुणं भवेत् ।

समुद्रस्य तटे रम्ये सेतुबन्धसमुद्भवे ।
फलं कोटिगुणं प्रोक्तं पुण्यं रामाभिषेचने ।
त्रिवेणीतटसंन्यस्ते बलदेवस्य मन्दिरे ।
रामजन्मोत्सवं कुर्य्यात्फलं लक्षगुणं भवेत् ॥

इतिस्थाननिषेधः ॥

अथ पारणनिषेधः- पाद्म —

उपवासं नवम्यां तु यः कुर्य्याद्रामभक्तितः ।
रामजन्मोत्तराद्ग्राह्यमसृतं पंच संभवम् ।
फलाहारं ततः कुर्य्यादन्नं नैव तु भक्षयेत् ।
पुनर्वसुसमायुक्ता दशमी च यदा भवेत् ।
तदा तु पारणं नैव चतुर्भिश्चरणैर्युता ।
कदाचित्पारणं कुर्य्यात् कृमिभोजनमाप्नुयात् ।
पतन्ति नरके घोरे पारणं च पुनर्वसौ ।
त्रयस्तु चरणाः जातास्त्वादितेरेकशेषके ।
तदा तु पारणं कुर्य्याद्दोषो नास्तीदृशेदितौ ।
सकलान्पाप्नुयात्कामान् रामजन्मोत्सवाच्छुचिः ।
अभिषेकमन्त्रभेदोऽस्ति रामकृष्णाभिधानयोः ।
स्वरूपजन्मनोश्चैव भेदो नास्त्युत्सवेषु च ॥
कृष्णस्यैव स्वरूपस्य कल्पयेद्रामसंज्ञकम् ।
रामस्यैव स्वरूपस्य कल्पयेत्कृष्णसंज्ञकम् ॥
अवताःचतुर्णां तु विधानं च पृथक् पृथक् ।
अभिषेकयोः मन्त्राणां विरुद्धं च परस्परम् ।
यथैवमवताराणां चतुर्णामभिषेचने ।
मन्त्राणां हि विरुद्धाः स्युरन्योन्यमभिधानतः ।
युगलस्य च रामस्य त्वग्रे स्थित्वा च पूजयेत् ।
गणेशवरुणौ देवौ पठित्वा मंत्रपूर्वकौ ॥ इति
रामार्च्चनचन्द्रिकायाम् ॥

ततः श्रीत्रिवेणीतटस्थे युगलस्य श्रीवलदेवमन्दिरे स्वमिष्टदेवं श्रीलाडिलेयस्वरूपं रामं परिकल्प्य रामावतारोत्सवं कुर्य्यात् । ततः प्रारम्भः—पूर्वमेव भूस्थलं संस्कृत्य ततश्चतुः स्तम्भादि-संयुक्तं मण्डपं कुर्य्यात् । तदुपरि वितानं वध्नीयात् । ततः हस्तमात्रपरिमितां वेदिकां कुर्य्यात् । ततः सर्वसामग्रीः संपाद्य आचार्य्यादिवरणं कुर्य्यात् । संकल्पः—

अद्येहेत्युक्त्वा द्वादशोत्तरषोडशशते १६१२ सवत्सरे मासोत्तम-मासे चैत्र मासि शुक्ले पक्षे तिथौ नवम्यां पुनर्वसुरविवार-संयुक्तायां चतुर्द्दशघटी गतसमये मिथुनलग्नोदये ललिताग्रामा-भिधानके त्रिवेणीतटस्थयुगलश्रीबलदेवमन्दिरे श्रीयुगलमूर्त्ति-कृष्णावतारश्रीमहाविष्णोर्दक्षिणदेशे गोदावरीतटस्थमथुरा-पत्तनपुराभिधानादाज्ञाप्रवर्त्तमान - यजुर्वेदान्तर्गतापस्तम्बसूत्रा-श्वलायनशाखा - भार्गवच्यवनाप्लुवानौरवयामदग्न्येतिपंचप्रव-रान्वित-श्रीवत्सगोत्रोत्पन्न - श्रीयुगलकृष्णाज्ञयाकृतश्रीशेषाव-तारश्रीयुगलबलदेवश्रीकृष्णोपासकः श्रीकृष्णेन स्वयं दत्तमि-ष्टदेवं स्ववालस्वरूपं श्रीलाडिलेयाख्यं तस्य नियतोपासकः श्रीनारायणभट्टवैष्णवसंप्रदायकनारदावतारसंभूतस्वरूपः श्री-रामाभिषेकं सकलमनोऽर्थसिद्ध्यर्थं श्रीरामावतारजन्मन्युत्सवे श्रीलाडिलेयस्वरूपस्थित—श्रीरामाभिषेकार्थं त्वामाचार्य्यत्वेन त्वामहं वृणे इति ब्रूबन् वस्त्रकुंडलमुद्रिकादिभिर्यथाशक्त्या पूजयेत् । एवमृत्विगादिकमपि । ततः व्रतोऽस्मीति ब्रूयात् । ततः प्रतिसरं वध्नीयात् । ततः पुण्याहवाचनं कुर्य्यात्:—

"पुनन्तु मा देवजनाः पुनंतु मनसा धियः । पुनन्तु विश्वा-भूतानि जातवेदः पुनीहि माम्" इति पठित्वा "अथास्य कर्मणः पुण्याहं भवंतो ब्रुवंतु पुण्याहं ३ अस्य कर्मणः स्वस्तिर्भवंतो ब्रुवंतु आयुष्मते स्वस्ति स्वस्ति न इन्द्रो वृद्ध-

श्रवा: स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदा: स्वस्ति न स्तार्क्ष्यो ऽरिष्ट-नेमि: स्वस्ति नो वृहस्पति र्दधातु ओं शान्ति: ३ ओं अस्य कर्मणः ऋद्धिर्भवंतो व्रुवंतु ऋध्वतां ऋद्धिः समृद्धि:" ॥

अथ दिग्बन्धनम्—स्वेतसर्षपान् दक्षिणहस्ते गृहीत्वा—"समरुद्गणायै प्राच्यै दिशे स्वाहा" "सरणगणायै दक्षिणायै दिशे स्वाहा" "सानुचरायै अर्वाच्यै दिशे स्वाहा" "सयक्षगन्धर्व-किन्नराप्सरसे उत्तरायै दिशे स्वाहा" इति चतुर्दिक्षु प्रक्षिपेत्। ततस्तत्र त्रिगुणितरक्तसूत्रेण सप्तस्तम्भान्परिवेष्टयेत् । ततः "श्रीभगवतः श्रीरामावतारस्य शेषावतारलक्ष्मणसहित-स्य श्रीलाडिलेयकल्पितस्वरूपस्य मण्डपं रक्षस्व"ति पठित्वा दिग्पालान्पूजयेत् । पूर्वस्यां दिशि कपिशवर्णध्वजादण्डे "सुग्रीवावतारसंभूतायेन्द्राय नमः" अग्निकोणे कपिलवर्णध्वजादण्डे "अग्नये नमः" दक्षिणस्यां दिशि नीलध्वजादण्डे "सुवाह्ववताराय यमाय नमः" क्रियाभाजः पताकाः दश अर्च्चयन्। नऋतिकोणे श्यामवर्णध्वजादण्डे "विभीषणावताराय नैऋत्तये नमः" पश्चिमस्यां दिशि श्वेतवर्णध्वजादण्डे "कुमुदावताराय वरुणाय नमः" वायव्यकोणे धूम्रवर्णध्वजादण्डे "हनुमदवताराय वायवे नमः" उत्तरस्यां दिशि अमलवर्णध्वजादंडे "अंगदावताराय कुवेराय नमः" ईशानकोणे सितवर्णध्वजादण्डे "महादेवाय नमः" अधोभागे गौरवर्णध्वजादण्डे "श्रीलक्ष्मणावताराय सहस्रफणसंयुक्तमहाशेषनागाय नमः" उपरिष्टाद्भागे रक्तवर्णध्वजादण्डे "जाम्ववानावताराय व्रह्मणे नमः" "श्रीराममूर्त्तिकल्पकस्य श्रीलाडिलेयस्वरूपकस्य मण्डपं रक्षस्वे"ति पठित्वा द्वारदेशे श्रीरामस्य सन्मुखावलोकने "हनुमते नमः" एवं सर्वत्र धूपदीपादिभिरभ्यर्चयेत् ।

ततः सर्वतोभद्रमण्डपस्य निकटे उपविश्य पंचवर्णरञ्जिते

ऽष्टदलपद्मे रचिते ततस्तस्य कर्णिकायां तन्दूलान्पूरयित्वा तदुपरि दर्भकूर्चं निधाय तदुपरि कलशं स्थापयत्। सर्वतो भद्रमण्डलपूजनपूर्वकं त्रिगुणिततंतुवेष्टितं मुखे त्वाम्रपल्लववेष्टितं धूपितं च कुर्य्यात्। ततः कामवीजस्मरणपूर्वकं ततः कुम्भे पंचरत्नं गन्धाष्टकं क्षीरवृक्षक्वाथतोयं प्रक्षिप्य मूलमन्त्रं पठन् जल पूरयेत्। ततोऽंकुशमुद्रया तीर्थानावाहयेत्। अंगुष्ठ्यनामिकायुक्तया मुद्रया विलोडयेत्। तत्र कुम्भे विष्णुक्रान्तामिन्द्रवल्लीं दूर्वां च निःक्षिपेत्। तर्जनीमध्यमे प्रसार्य्याऽनामिकाकनिष्ठांगुष्ठैः कुशं गृहीत्वा अस्त्रमन्त्रं पठन्प्रोक्षणं, ताडनं— "करवीरस्य पुष्पाणि गृहीत्वाक्षरसंख्यया। ततस्तौ ताडयेन्मन्त्रं कामवीजेन मत्रवित्"। कामवीजं पठनभ्युक्षणं कुशेनावगुण्ठनं कुर्य्यात्। ततः षडंगन्यातं ततो धेनुमुद्रयाऽमृतीकरणं ततो "दशकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नमः," "द्वादशकलाव्याप्तसूर्य्यमण्डलाय नमः" ततः षोडशकलाव्याप्तसोममण्डलाय नमः, ततोऽष्टोत्तारशतं सहस्रं वा मूलमन्त्रं जपेत्। ततस्तेन जलेन सर्वं प्रोक्षयेत्। शखस्थापनं गोमयाम्भसा त्रिकोणमण्डले शंखासनं प्रक्षाल्य स्थापयेत्। अस्त्राय फडिति शंखं प्रक्षाल्य ततस्तत्र गन्धाक्षनान् हृदयमन्त्रमुच्चरन्प्रक्षिपेत्। ततः मातृकाक्षरप्रतिलोमैः जलं पूरयेत्। ततः शंखपीठे "दशकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नमः" इति मन्त्रं पठन् पूजयेत्। ततः "द्वादशकलाव्याप्तसूर्य्यमण्डलाय नमः" इति जपन् पूजयेत्। ततः शंखजले "षोडशकलाव्याप्ताय सोममंडलाय नमः" इति पठन् गन्धादिभिः पूजयेत्। "त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विधृतो विष्णुना करे। निर्म्मितोऽखिलदेवेषु पांचजन्य नमोऽस्तु ते"। "पांचजन्याय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तन्नो शंखः प्रचोदयात्" "गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति! नर्मदे सिंधु-

कावेरि जलेऽस्मिन्संनिधौ भव"। ततस्तत्राकुंशमुद्रया तीर्थावाहनं कुर्य्यात्। ततः शिखामन्त्रेण गालिनीं मुद्रां प्रदर्शयेत्। ततः जलं प्रपश्येत्, ततो पंचांगन्यासं कुर्य्यात्। ततश्चक्र-धेनुमुद्रादिदर्शनं, ततोऽष्टधा मूलमन्त्रं जपेत्। ततः सर्ववस्तु-प्रोक्षणं, ततः श्रीरामस्वरूपोपकल्पितलाडिलेयस्वरूपं दृढ़ासने उपवेश्य यथाक्रमेणोपचरेत्। ततः पंचदश नव त्रीणि वा पात्राणि स्थापयेत्। श्रीकृष्णाभिषेकमन्त्रस्य श्रीरामाभिषेक-मन्त्रस्य भेदः पुनः कर्त्तव्यतायाश्चापि भेदः। ततः मूलमन्त्र-मुच्चार्य्य "श्रीशेषावतारलक्ष्मणेन सह श्रीरामस्वरूपोपकल्पित-लाडिलेयस्वरूप स्वागत!"मित्यभिनंद्य पुष्पषट्कं दद्यात्।

चतुर्भुजो भवेद्रामः कौशल्यां दर्शनं ददौ।
तथैव भरतो भूत्वा कैकेयीं दर्शनं ददौ।
यमौ लक्ष्मणशत्रुघ्नौ सुमित्रां दर्शनं गतौ।
यथा चतुर्भुजांशास्ते चतुर्द्धैव प्रकाशते॥

ततः श्रीरामादि चतुर्भ्रातृणां स्वरूपाणि ध्यात्वा—

बालस्वरूपं वपुषाभिरामं श्रीरामचन्द्रं नवकोमलाङ्गम्।
पित्राज्ञया शालितभूमिमण्डलं देवप्रसादेन समागतं प्रभुम्।
वन्दे महाकारुणिकं स्वरूपं वेणीस्थितं मन्दिरमाविशतम्।
मे प्रीतियुक्तं सुखदायकं सदा श्रीलाडिलेयाकृतिसंस्थितं हरिम्।
जयति रघुवंशतिलको कौशल्याहृदयनन्दनो रामः।
दशवदननिधनकारी रामो दाशरथी पुण्डरीकाक्षः॥ इति

रामस्वरूपं ध्यात्वा—

श्रीलक्ष्मणं बालनिरञ्जनं प्रभुं मातृसुमित्रासुखदायकं सुतम्।
रामानुगं गौरमनोहरांगं वन्दे प्रसादाभिमुखं प्रसन्नम्॥

इति लक्ष्मणस्वरूपं ध्यात्वा—

श्रीभक्तिरम्यं रमणाभिकान्तं कैकेयिपुत्रं भरतं ववन्दे।

रामानुजं दाशरथीकलान्वितं रामाज्ञया पालितभूमिमण्डलम् ॥
वालस्वरूपं कमलाभिकान्तं मनोहरांगं सुकुमारश्यामलम् ॥
इति भरतस्वरूपं ध्यात्वा—

शत्रुघ्नं भरतानुगं प्रियकरं वालांगसन्दीपनं
सौमित्रेयमुपागतं शुभप्रदं भक्तानुकंपान्वितम् ।
वन्दे सुन्दरवेषधारिणमतः शत्रुप्रदीपं स्थितम् ॥ इति
शत्रुघ्नस्वरूपं ध्यात्वा—

शक्रावतारं कपिपुंगवेन्द्रं सुग्रीवनाम्नं कपिवेशधारिणम् ।
रामप्रियं वानरसैन्यरक्षकं बन्दे च तारापतिं पर्वताकृतिम् ॥

इति सुग्रीवस्वरूपं ध्यात्वा-जन्मदिने तु श्रीरामावतारानुकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपाविर्भावं संभाव्य पश्चात्स्वागतादि–प्रश्नः ततो मूलमंत्रमुच्चार्य्यासनं गृहीत्वा "श्रीलाडिलेय–स्वरूपोपकल्पितश्रीराम इदमासनमास्यता" मिति वदन् आसने पंचपुष्पाणि दद्यात् । पुनरपि दूर्वाकूर्च्चमपि दद्यात् । ततः श्यामार्कपंचकं दूर्वापंचकं अब्जपंचकं विष्णुक्रान्तापंचक-मेतत्सहितं पलचतुष्टयं जलं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीलाडि–लेयस्वरूपोपकल्पितश्रीरामावतारविष्णो इदं ते पाद्यं नमः" इति ब्रुवन् चरणाम्बुजे पाद्यं दद्यात् । ततः जातीलवंगकंक्कोलानां षट्पलं क्वाथं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चरन् "श्रीलाडिलेयस्व-रूपोपकल्पितरामाबताराय विष्णवे स्वधा" इति मन्त्रं पठन् श्रीरामस्य मुखे कांस्यपात्रेणाचमनं दद्यात् । ततश्च-न्दनकपूराद्यात्मको गंधः पुष्पाण्यक्षतं यवाः दूर्वातिलश्वेत-सर्षपाकुशसहितं चतुः पलं जलमादाय मूलमंत्रमुच्चार्य "श्रीरामाय कौशल्यानन्दनाय लाडिलेयस्वरूपोपकल्पिताय स्वाहा" "तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणं । तापत्रयविनि-र्मुक्तस्तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम्" । तत्र निषेधः 'अवतार-

स्वरूपेण भेदो नास्ति च जन्मनि । अवताराभिषेकस्य मन्त्राणां भेदमुच्चते" । इत्युच्चरन् श्रीरामावतारस्वरूपोपकल्पित–लाडिलेयस्वरूपस्य शिरस्यर्घं दद्यात् ॥ "दशरथात्मज राम कौशल्यानन्ददायक !। तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये" पाद्यार्घमेतेषु प्रत्येकमाचमनं ज्ञेयम्। ततो मधुपर्कः-आज्य दधि मधुपलैकं कांस्यपात्रे गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीभगवते रामस्वरूपोकल्पितलाडिलेयस्वरूपाय रामचन्द्राय स्वधा" इतिमंत्रं पठन् श्रीलाडिलेयस्य मुखे दद्यात् ॥ "वेदानामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने। आचामं कल्पयामोश शुद्धं त्वां शुद्धिहेतवे"। ततस्त्वाचमनार्थं जलं दद्यात्। ततस्तिलपिष्टेन श्रीरामस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थितश्रीराममुद्वर्त्य - वेदोक्तमन्त्राः "ततः यस्मै त्व ꣳ सुकृते जात वेदउलोकमग्ने कृण्वस्योनम् अश्विनं ꣳ सुपुत्रिणं वीरवन्तं गोमंतं मूर्द्धानां ꣳ रयिनसते स्वस्ति" इति मन्त्रं पठन् वस्त्रपरिवर्त्तनं कारयेत्। ततः "सन पिते बसूनवेऽग्ने सूपायनो भव सच स्वानः स्वस्तये स्वाहा" इति मन्त्रं पठन् पचाशतपलजलेन दद्यात्। ततः "सत्राणं पृथिवी द्यामनोहस ꣳ सुशर्माणमदिति ꣳ सुप्रणीं स्वाहा" इति मन्त्रं पठन् मूलमन्त्रं च पठन् स्नापयेत्। ततः पंचामृतेन पंचपलपरिमितं दुग्धमादाय "पयः पयोधाः देवीन्नाव ꣳ स्वरित्रामनागवंतो मारुहे मा स्वस्तये स्वधा" इतिमन्त्रं पठन् दुग्धेन स्नापयेत्। ततः पंचपलपरिमितं दधि गृहीत्वा "दधिभरेष्विंवंद्र ꣳ सुबहव ꣳ हरामहे ꣳ च ꣳ सुकृतं दैब्यं जनं तारिषत्स्वाहा" इति मन्त्रं पठन् दघ्ना स्नापयेत्। ततः पंचपलपरिमितं घृतं गृहीत्वा "अग्निं मित्रं पृथ्वी मधुवरुण ꣳ सातये भगं दुग्धे द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये स्वधा" इति मन्त्रं पठन् घृतेन

स्नापयेत् । ततः मधु गृहीत्वा—"रमयत मधु क्षरंति मरुतस्पेण मयिणं मनोजवसंवृषणा ঔ सुव्यक्ति" इति मंत्रं पठन् पंच-पलमधुना स्नापयेत् । ततः शर्करां गृहीत्वा—"येनषद्ध उग्र-मवसृष्टमेति तदश्विना परिदत्त ঔ स्वस्ति सवितोत्पन्नं" इति मन्त्रं पठन् शर्करया स्नापयेत् । ततः सप्त पलजलं गृहीत्वा-"सप्त ते अग्नि समिधः सप्तजिह्वा सप्तऋषयः सप्त धाम" "दहशे नक्तयाचिदरुक्षितं" इति मन्त्रं पठन् जलेन संमार्जयेत् । ततः संस्कृतं सर्वतोभद्रघटजलं सर्वघटेषु प्रक्षिपेत् । तत्राष्टदिक्षु अष्टघटेषु ऽनुक्रमेण सर्वौषधि-महौषधि-बीजाष्टकं नवरत्नं पुष्पं फलं गन्धं चन्दनं प्रक्षिपेत् । नवमघटे दशमं सहस्रधार-कलशं तत्र नवमं कलशं जलं दूर्वापुंजसहितेन शंखेन स्ना-पयेत् । "दश आरूपेमयो भुवः अन्नं सैनानी केन सुविदत्रो अस्मेयष्टा देवाঔ आयजिस्वस्ति यथा चन" इति मन्त्रं त्रिभिः पठन् पूर्वदिशि स्थितं कलशं सर्वौषधिद्रवरससहितं गृहीत्वा "अग्ने प्रेहि प्रथमो देवयतां, चक्षुर्देवानां उत्तमर्त्यानां स्वधा" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् । ततः महौषधिद्रवरससहितं घटं गृहीत्वा—"इयक्षमाणा भृगुभिः सजोषाः सुवर्यं तु यजमानाः" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् । ततः बीजाष्टकयुतं घटं गृहीत्वा—"अग्निर्णो व ঔ सतेरयिं सैनानीकेन सुबिदवो अस्मेयष्टादेवा ঔ आयजिष्णुः स्वस्ति कल्पतां" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् । ततः नवरत्नयुक्तं कलशं गृहीत्वा—"येन देवाज्योतियोर्ध्वा उदायन्येनादित्यासवसवो येन रुद्राः" इति मन्त्रं पठन् स्नाप-येत् । ततः पंचाशदधिकपुष्पयुक्तं कलशं गृहीत्वा "येनां-गिरसो महिमानस्तुते नैव यजमानः स्वस्तिः यशसे" इति मंत्रं पठन् पुष्पोदकेन स्नापयेत् । ततः फलयुक्तं कलशं गृहीत्वा "इंद्रोन्यभिरजनदीद्यानः साकं सूर्यमुखसंगातुमग्निं"

इति मन्त्रं पठन्स्नापयेत् । ततः गन्धोदकयुतं कलशं गृहीत्वा गायत्रीं पठन्स्नापयेत् । ततश्चन्दनोदकघटं गृहीत्वा "उरुन्नोलोकमनुनेषिविद्वान्सुवर्यज्योतिरभयꣳ स्वस्ति" इति मन्त्रं पठन्स्नापयेत् । ततः सहस्रधारकलशे सर्वौषधिमहोषधिवीजाष्टकं सर्वरत्नानि पुष्पाणि फलानि प्रक्षिप्य "तां नर्यप्रजां-गोपाय अमृतत्वाय जीवसे जातां जनिष्यमाणाꣳश्च अमृते सत्ये प्रतिष्ठितं" इति मन्त्रं पठन्स्नापयेत् । पुनः "इयक्षेति" पठन् पुनः स्नापयेत् । अग्निरिति पठन् पुनः स्नापयेत् । पुनः महौषधिना स्नापयेत् । पुनः येनामिति पठन् नवरत्नानि स्नापयेत् । पुनः "ऊरुन्नो" इति पठन् पुष्पोदकेन स्नापयेत् । पुनः "अष्टौ देवा" इति पठन्फलोदकेन स्नापयेत् । ततः सहस्रधारघटेनैव "अथर्वंपितुं मे गोपाय रसमन्निहायुषे अदध्वायोसीततनो अविषंणः पितुं कृणु" इति मंत्रं पठन्स्नापयेत् । ततो वस्त्रेण मार्जनं ततो न्यासं कुर्यात् । ततो वस्त्रं गृहीत्वा "शꣳस्यपसून्मे गोपाय द्विपादो ये चतुष्पदः हिरण्येभिः" इति मंत्रं पठन् दद्यात् । ततः सहदेवी सदाभद्रा सूर्य्यावर्त्ता कुशाग्रकैः शिरीषरजनीभ्यां निर्मथ्य निंवराजीलवणराजीसर्षपैः दृष्टिमुत्तार्य्यं तोयादौ प्रक्षिपेत् , ततः सिंहासने श्रीरामस्वरूपोपकल्पितलाडिलेयस्वरूपं श्रीरामचन्द्रमुपवेश्य पाद्यादिभिरुपचरेत् । ततो मंगलार्थं नारिकेरफलान्वितं द्वितीयकलशं स्थापयेत् । ततस्तन्मन्त्रोक्तन्यासपूजादिकं कुर्य्यात् । ततोऽञ्जनतिलकयज्ञोपवीतमालाभरणादिशृंगारं कृत्वा प्रतिसरं वध्नीयात् । पीतडोरकं "अष्टाशफाश्च य इहैकाग्ने ये चैकशफा आशुगाः स प्रथसभां मे गोपाय" "शस्ताय ॠर्पि वंधवे" इति मंत्रं पठन् रामावतारस्वरूपश्रीलाडिलेयरामचन्द्रमहाविष्णोर्दक्षिणहस्ते वध्नीयात् । ततस्त्वादशं

"ये च सभ्याः सभासदस्तानिंद्रियावतः कुरु सर्वमायुरुपासतां" इवि मन्त्रं पठन् दर्शयेत् । ततो भूषणादिनि मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीरामस्वरूपोपकल्पितलाडिलेयस्वरूप रामचन्द्र इदं पुष्पं निवेदयामि" इति निवेदयेत् । ततो धूपदीपादिकं नैवेद्यं च समर्पयेत् । ततः मन्दिरोपरि ध्वजापताकां वंधयेत् । ततः दूर्वापुंजमाम्रपल्लवं गृहीत्वा श्रीरामस्वरूपोपकल्पितलाडिलेय-स्वरूपमभिषिंचेत् । "अहेबुध्नियमंत्रं मे गोपायमृषयस्त्रिविदा-विदुः ऋचः सामानि यजूंषि साहिश्रीरमृता सतां" इति मन्त्रं पठनभिषिंचेत् । ततः नीराजनं कुर्य्यात् । ततः व्राह्म-णान् भोजयेत् ।

खण्डिते स्फुटिते त्वंगे स्थानभ्रष्टो यदा भवेत् ।
चौरस्पर्शे भयाद्भ्रष्टे त्वभिषेकविधिः स्मृतः ॥ इति
श्रीरामार्च्चनचन्द्रिकायां—

श्रीरामप्रतिमां तत्र शिखराद्यंधमन्दिरात् ।
राजसेवान्वितां मूर्त्तिं नैव चोत्थापयेत्क्वचित् ॥
कदाचित्सेवको स्वामी जड़बुद्धया करोति यः ।
रामं च स्नानभ्रष्टं च परिवारचयं करोत् ।
दरिद्रं दुःखितं नित्यं शोकसंतप्तसेवकः ॥

श्रीरामं त्रिपदीस्थितं प्रियकरं सीताकलत्रान्वितं
शेषं द्वारप्रविष्ठितं प्रभुमयं श्रीलक्ष्मणं पालकम् ।
सेतोर्बन्धनसंज्ञके सुविमले रामाभिषेकं चरेत्
माहात्म्यं शतकोटिसंभवगुणं सिद्धेर्फलं लभ्यते ॥
जन्मोत्सवे चैत्रसमुद्भवे दिने यथाविधिं राममुपाचरेत्सुधीः ।
धान्यं धनं पुत्रकलत्रसंयुतं सुबुद्धियुक्तः सुखमाप्नुयात्सदा ॥
इति अगस्त्यसंहितायां श्रीरामाभिषेकविधिः समाप्तः ॥

श्रीभट्टनारायणः संविधाय रामाभिषेकं वलदेवमन्दिरे ।

श्रीलाडिलेयं स्वकमिष्टदेवं संकल्पयित्वा ननु रामसंज्ञकम्।
मनोहरांगं सुकुमारभूषितं स्यामस्वरूपं कमलासनस्थम्।
रामं भजेऽहं सरसीरुहाक्षं सलक्ष्मणं मंगलदायकं सदा॥

इति श्रीमद्भास्करात्मजश्रीनारायणभट्टश्रीगोस्वामिविरचितायां व्रजोत्सवचन्द्रिकायां उत्तरार्द्धवृत्तौ व्रजसारोद्धारे त्वेकादशः प्रकाशः॥

अथ श्रीनृसिंहावताराभिषेकप्रयोगः

प्रह्लादसंहितायाम्—

वैशाखस्य सिते पक्षे शनिवारसमन्विता।
स्वातिनक्षत्रसंयुता शिवा भवति सर्वदा॥
परविद्धा सदा कार्या नृहरेर्जन्मसंभवा।
घटयर्कदिनशेषायां कन्यालग्नोदये निशि।
नृसिंहजन्मनश्चापि चोत्सवं विधिपूर्वकम्।
समाचरेत् सुधीः विप्रो वाञ्छितं फलमाप्नुयात्।
त्रयोदशी कलायुक्ता शिवा क्षयसमन्विता।
शनिवारसमायुक्ता स्वातिनक्षत्रसंयुता।
द्वितीयेऽहनि शुद्धा स्यात्केवला पूर्णिमा यदि।
तदा तु पूर्वविद्धायाः दोषो नास्ति कदाचन।
नृसिंहजन्म चोत्साहं विधिपूर्वं समाचरेत्॥
चतुर्दशीदृशी भूता शनिस्वातिविवर्जिता।
तदा चतुर्दशी त्याज्या पूर्वविद्धा यदा भवेत्।
केवलायां तु पूर्णायां शनिस्वातिसमन्विते।
तस्यां च नरसिंहस्य जन्मोत्सवं समाचरेत्।
ईदृशी पूर्णमासी स्यात् रात्रौ च ग्रहणं भवेत्।
तदा तु पूर्वविद्धायां चतुर्दश्यां समाचरेत्।

नृसिंहपुराणे—

वैशाखस्य सिते पक्षे वृद्धिं प्राप्ता चतुर्दशी ।
द्विदिने भोगिता सापि शनिस्वातिसमन्विता ।
परविद्धाचतुर्दश्यां नृसिंहजन्म नाचरेत् ।
यदा तु शनिस्वातिभ्यां व्यतिरिक्ता चतुर्दशी ।
तथापि परविद्धायां जन्मोत्सवं समाचरेत् ।
यदा तु पूर्वविद्धायां संयोगे न त्यजेच्छिवाम् ।
चन्द्रग्रहणसंयुक्तां पूर्णमासीं परित्यजेत् ॥

इति चतुर्दशीनिर्णयः ॥

अथ पारणनिषेधः । भविष्योत्तरे—

पूर्णिमा स्वातिसंयुक्ता त्रिभिश्च चरणैः युता ।
तदा तु पारणं कुर्य्याच्छेषश्चरणसंज्ञिके ।
चतुर्दश्यां व्रतं कुर्य्यान्मुक्तिभागी भवेन्नरः ।
सकला वाञ्छिता सिद्धिर्भवत्येव न संशयः ॥

देवीपुराणे—देशकाश्मीरसंभूताः स्वस्थानाः निर्मलाः स्थिताः ।

जन्मोत्सवं नृसिंहस्य तेषु स्थानेषु कारितम् ।
दशकोटिगुणं पुण्यं फलमाप्नोति नारद ! ।
सर्वेषु तीर्थरम्येषु स्थानेषु कुरुते नरः ।
लक्षप्रगुणितं पुण्यं फलं प्राप्नोति जन्मनि ॥
मथुरायां नरो कृत्वा वाञ्छितं मुक्तिमाप्नुयात् ।
वृन्दावने गोकुले च गोवर्द्धने प्रियस्थले ।
जन्मोत्सवोपवासं च कुरुते सर्वदा नरः ।
सप्तायुतगुणं पुण्यं फलमाप्नोति मानवः ॥

आदिपुराणे—वृषभानुपुरे रम्ये नन्दग्रामे बटेषु च ।

वनेषूपवनेष्वेव काम्यादिग्रामवेश्मसु ।
संकेतललिताग्रामगर्जपुरव्रजादिषु ।
सर्वेषु ब्रजद्वारेषु नृसिंहजन्मन्युत्सवम् ।
विशलक्षगुणं पुण्यं फलमाप्नोति मानवः ।

एतेषूक्तेषु स्थानेषु जन्मोत्सवं न कुर्वते ।
ते नराः नरकं यान्ति राजसेवाः विराजिताः ॥
नृसिंहपरिचर्य्यायामसंख्यगुणितं फलम् ।
म्लेच्छस्थानेषु सर्वेषु नैव जन्मोत्सवं चरेत् ॥

गारुडे—

काश्मीरसंभवे देशे स्तम्भे पाषाणसंस्थिते ।
प्रल्हादं बंधयेत्पुत्रं पिता दैत्याधिपो बली ॥
हिरण्यकशिपू नाम ताडनं विविधं करोत् ।
ततो हस्तेन संताड्य प्रल्हादेच्चणसंयुतम् ।
स्तम्भं पाषाणसंभूतं तस्मात्प्रल्हादबन्धनात् ।
आविरासीद्धरिः साक्षान्नृसिंहो नाम संज्ञकः ।

भयान्वितोऽसौ विकरालवेषको नृसिंहनाम्ना समुपस्थितो हरिः ॥
शटाच्छटाताडितमेघसंनिभो भारावताराय निजपृथिव्याः ॥
वक्षो बिदीर्णाय हिरण्यकश्यपो दैत्याधिपस्यापि नखैर्विराजितः ।
कलासमस्तैः परिवेष्टमानः प्रियाविमुक्तो विकरालरूपभृत् ॥
एतादृशो प्रगटितो भगवान्नृसिंहः स्वमन्दिरे देहलिसंज्ञके स्थले ।
दैत्याधिपं नाम हिरण्यकश्यपुं करैर्गृहीत्वा स निधाय जंघयोः ।
नखैश्च लांगूलप्रविस्तृकोटिभिर्वक्षः स्थलं तस्य विदारयद्धरिः ।
विराजमानं नृहरिस्वरूपिणं दृष्ट्वा च सर्वे प्रदुद्रुवुश्च देवताः ।
लक्ष्मीं पुरस्कृत्य समागतास्ते ब्रह्मादयश्चापि भयाकुलाः गताः ।
दूरेस्थिताः ते स्तुतिकर्त्तुं नहि शक्यमाना प्रह्लादमाज्ञापयन् ।
तत्रावसाने स्तुतिकर्त्तुमागतः प्रह्लादभक्तो निकटस्थितोऽभूत् ॥
नारायणं भगवंतं परमावतारं नृसिंहरूपं स्वकलानिविष्टम् ।
काश्मीरसंभूतमहोग्ररूपं वन्दे महाकारुणिकं स्वरूपम् ॥
मुक्तोऽहमस्मि दृढबन्धनात् त्वया नृसिंह सैंहीमतनुं तनुभृता ।
भजामि त्वां देव नमामि तुभ्यं जन्माभिषेकं च करोमि चोत्सवम् ॥

पातु मां नरसिंहस्य नखलाङ्गुलकोटयः ।
हिरण्यकश्यपोर्वक्षः क्षेत्रा ऋक्कर्दमारुणाः ॥
इति भविष्ये प्रल्हादस्तुतिः ॥

प्रह्लादः कुर्य्यादभिषेचनं हरेस्तदानुसारेण विधानपूर्वम् ।
श्रीलाडिलेयं नरसिंहरूपं संकल्पयित्वा बलदेवमन्दिरे ॥
स्वकामसिद्धयर्थमिदं प्रचक्रमे नारायणाख्यो प्रभुभक्तिसंयुतः ॥

इति । ततस्तत्राभिषेकप्रयोगप्रारम्भः—

पूर्वमेव भूस्तलं त्रिवेणीतटस्तले संस्कृत्य तत्र चतुः स्तम्भादि-युक्तं मण्डपं कुर्य्यात् । तदुपरि वितानं बध्नीयात् । तत्र सार्द्धहस्तमात्रपरिमितां वेदिकां च कुर्य्यात् । मण्डपं त्रिगुणि-तंतुवेष्टितं चतुर्द्वारतोरणध्वजासहितं कुर्य्यात् । वेदिकानिकटे सर्वतोभद्रमण्डलं कुर्य्यात् । ततः सर्वसामग्रीं संपाद्य आचा-र्य्यादिवरणं कुर्य्यात् । ततो संकल्पः – अद्येत्युक्त्वा द्वादशोत्तरषोडशशते १६१२ सम्वत्सरे मासोत्तममासे वैशाखे मासे शुक्ले पक्षे तिथौ चतुर्द्दश्यां शनिस्वातिसंयुक्तायामेक-घटीदिनशेषायां समये कन्यालग्नोदये ललिताग्रामाभिधाने त्रिवेणिकास्थाने श्रीयुगलबलदेवमन्दिरे श्रीयुगलमूर्त्त कृष्णा-वतारश्रीमहाविष्णोर्दक्षिणदेशे गोदावरीतटस्थमथुरापट्टनपुरा-भिधाना श्रीकृष्णाज्ञाप्रवर्त्तमानयजुर्वेदान्तर्गतापस्तम्बसूत्रा-श्वलायनशाखान्वितभार्गव -च्यवनाप्लुवानौरवयामदग्न्येतिपंच-प्रवरान्वित - श्रीवत्सगोत्रोत्पन्न - श्रीयुगलकृष्णाज्ञया कृत-श्रीशेषावतारयुगलबलदेवश्रीकृष्णयोरुपासकः श्रीकृष्णेन स्वयं दत्तमिष्टदेवं स्वबालस्वरूपं लाडिलेयाख्यं तस्य लाडिलेय-स्वरूपस्य नियतोपासकः श्रीमन्नारायणवैष्णवनारदावतार-संभूतस्वरूपश्रीमद्भास्करात्मजश्रीनारायणभट्टशर्माहं सकल-मनोर्थसिद्धयर्थं श्रीनृसिंहावतारजन्मन्युत्सवे श्रीलाडिलेय-

स्वरूपस्थितश्रीनृसिंहाभिषेकार्थं त्वामहं वृणे इति ब्रूवन् वस्त्रकुण्डलमुद्रिकादिभिर्यथाशक्त्या पूजयेत् । एवमृत्विगादिकमपि । ततः व्रतोऽस्मीति ब्रूयात् । ततः प्रतिसरं बध्नीयात् । ततः पुण्याहवाचनं करिष्ये "पुनंतु मां देवजनाः पुनंतु मनसा धियः पुनंतु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनीहि मां" इति पठित्वा——

पुराणसंभवाः मन्त्राः यंत्रास्तान्त्रिकसंभवाः ।
मुनिशापसमुद्भूताः कलौ निष्फलदाः स्मृताः ।
शिवेन कीलितास्तेऽपि मुनिशापभयेन च ।
तदैव कीलिकां कृत्वा पश्चादुत्कीलकं कृतम् ।
उत्कीलकं पुरः कृत्वा मन्त्राणां सिद्धिदायकम् ।
विनोत्कीलितमंत्रं च जपेत्कामनया यदि ।
कामना निष्फला जाता भयकर्त्तुमुपागताः ॥

इतिप्रतापमार्त्तण्डे ।

शापमोचनं सर्वेषां पूर्वार्द्धे लिखितं मया ।
गायत्र्यादिकमन्त्राणां यन्त्राणां भिन्नभिन्नतः ॥

इतिरुद्रयामलानुसारेण भट्टोक्तिः ॥

अथास्य कर्मणः पुण्याहं भवंतो ब्रुवंतु पुण्याहं ३ अस्य कर्मणः स्वस्ति भवंतो ब्रुवंतु आयुष्मते स्वस्ति स्वस्ति न इन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्ट नेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः । ओं अस्य कर्मणः ऋद्धिर्भवंतो ब्रुवंतु ऋध्यतां ऋद्धिः समृद्धिः । "मंत्राः वेदसमुद्भवाः सर्वदा सिद्धिदायकाः । चतुर्वेदात्मकाश्चैव सर्वदेवेषु योजिताः" इति ब्राह्मे । अथ दिग्बन्धनं-- "प्राच्यैं दिशे स्वाहा" "दक्षिणायै दिशे स्वाहा" "अवाच्यै दिशे स्वाहा" "उत्तरायै दिशे स्वाहा" इति पठन्श्वेतसर्षपान्

चतुर्दिक्षु प्रक्षिपेत् । ततस्त्रिगुणितरक्तसूत्रेण सप्तसप्त भान्परिवेष्टयेत् । 'श्रीभगवन्महाविष्णुनृसिंहावतारोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्य मण्डपं रक्षस्वे" ति पठित्वा ततः दिक्पालान्पूजयेत् । पूर्वस्यां दिशि कपिशवर्णध्वजादण्डे "इन्द्राय नमः" अग्निकोणे कपिलवर्णध्वजादण्डे "अग्नये नमः" दक्षिणस्यां दिशि नीलवर्णध्वजादण्डे "यमाय नमः" । क्रियाभाजः पताका दश अचयन् । नैऋतिकोणे श्यामवर्णध्वजादण्डे "नैऋतये नमः" पश्चिमस्यां दिशि श्वेतवर्णध्वजादण्डे "वरुणाय नमः" वायव्यकोणे धूम्रवर्णध्वजादण्डे "वायवे नमः" उत्तरस्यां दिशि अमलवर्णध्वजादण्डे "कुवेराय नमः" ईशानकोणे सितवर्णध्वजादण्डे "ईशानाय नमः" अधोभागे गौरवर्णध्वजादण्डे "शेषाय नमः" उपरिष्टाद्भागे रक्तवर्णध्वजादण्डे "ब्रह्मणे नमः" इति "लक्ष्मीव्यतिरिक्तनृसिंहावतारस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्य मण्डपं रक्षस्वेति" पठित्वा सर्वत्र धूपदीपादिभिः पूजयेत् । ततो सर्वतोभद्रमण्डपस्य निकटे उपविश्य पंचवर्णरञ्जितेऽष्टदलपद्मे तस्य कर्णिकायां पंचवर्णरञ्जितान् तन्दुलान्पूरयेत् । तदुपरि दर्भकूर्च्चं निधाय तदुपरि कलशं स्थापयेत् । सर्वतोभद्रमण्डलपूजनपूर्वकं त्रिगुणितंतुवेष्टितं मुखेत्वाम्रपल्लववेष्टितं धूपितं च कुर्य्यात् । तत्र कामवीजस्मरणपूर्वकं प्रक्षिप्य मूलमन्त्रं च पठन् जलं पूरयेत् । ततोऽंकुशमुद्रयाऽमृतीकरणं तीर्थानावाहयेत् । अंगुष्ठानामिकया युक्तया मुद्रया विलोडयेत् । तत्र कुम्भे विष्णुक्रान्तामिन्द्रबल्लीं दूर्वां च निःक्षिपेत् । तर्जनीमध्यमे प्रसार्य्याऽनामिकाकनिष्ठिकांगुष्ठैः कुशं गृहीत्वा अस्त्रमंत्रं पठन् प्रोक्षणं च कुर्य्यात् । ततोऽस्त्रमन्त्रेण ताडनं । नृसिंहपुराणे—

नरसिंहप्रतिष्ठां स कर्त्तुमिच्छेत्सुधीर्नरः ।

कीलितोत्कीलितं कृत्वा यन्त्रं शुद्धं मया कृतम् ।
मुनिशापं तु मन्त्राणां तं तिरस्कृत्य धारितम् ।
सर्वयन्त्रास्तु मन्त्रास्ते निधार्य्योत्कीलिताः कृताः ।
विनोत्कीलितमन्त्रास्ते यंत्राः शापसमुद्भवाः ।
असिद्धिदाः सदा संतु मनोर्थभयकारकाः ।
प्रतिमां तत्र संस्थाप्य यन्त्रोद्धारं करिष्यति ।
यन्त्रोद्धारं विना मूर्त्तिस्त्वशुभा क्लेशदायका ।
पीठाकारं लिखेद्यन्त्रं वीजाक्षरसमन्वितम् ।
"ओं नमो भगवते नृसिंहाय स्वाहा"
श्रीं ह्रीं म्रीं सौं क्ष्रौं व्रीं ह्रीं क्रीं विराजितम् ।
समन्ताल्लिखते मन्त्रं सर्वत्र शुभदायकम् ।
नृसिंहाय स्वरूपाय राजाय नरकेशरी
सुस्थलं वेशितो देव प्रल्हादस्तुतये नमः ॥

अथ ध्यानम्—

महोग्ररूपं बिकरालकेशरं शुभप्रदं श्याममनोहरांगम् ।
काश्मीरसंभूतशुभप्रदं नृणां नृसिंहरूपं च भजामि देवम् ॥
इति ध्यात्वा स्वरूपं च नृसिहं परिवेष्टयेत् ।
नृसिंहपरिचर्य्यायां प्रतिमां स्थापयेत्सुधीः ।
यन्त्रोपरि प्रतिष्ठोऽसौ विधिपूर्वं च पूजयेत् ।
कामनां सकलां दद्यादुग्ररूपो नृकेशरी ॥
भिन्ना भवति पूजा च प्रलयं स करिष्यति ॥ इति
श्रीनृसिंहपरिचर्य्यायां नृसिंहस्वरूपप्रतिष्ठा ॥

ततः "करवीरस्य पत्राणि गृहीत्वाक्षरसंख्यया । ततस्तौ ताडयेन्मंत्रं कामवीजेन मन्त्रवित्" । कामवीजं पठनभ्युक्षणं कुशेनावगुण्ठनं ततः षडंगन्यासं ततो धेनुमुद्रयाऽमृताकरण ततो "दशकलाव्याप्तसोममण्डलाय नमः" ततो "द्वादशकलाव्याप्तसूर्यमण्डलाय नमः" ततो "षोडशकलाव्याप्तसोममंडलाय

नमः। ततोऽष्टोत्तरशतं सहस्रं वा मूलमन्त्रं जपेत्। ततस्तेन जलेन सर्वं प्रोक्षणं, शंखस्थापनं गोमयाम्भसा त्रिकोणमण्डले शंखासनं प्रक्षाल्य स्थापयेत्। "अस्त्राय फडिति" मन्त्रेण शंखं प्रक्षाल्य ततस्तत्र गंधाक्षतान्प्रक्षिपेत्। हृदयमन्त्रमुच्चरन् गंधाक्षतान् पूजयेत्। ततः मातृकाक्षरप्रतिलोमैः जलं पूरयेत्। ततः शंखपीठे "दशकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नमः" इति मन्त्रं पठन् पूजयेत्। ततः "द्वादशकलाव्याप्तसूर्य्यमण्डलाय नमः" इति जपन् पूजयेत्। ततः शंखजले "षोडशकलाव्याप्तसोम-मण्डलाय नमः" इति मन्त्रं पठन् गन्धादिभिः पूजयेत्। ततः "त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विधृतः विष्णुना करे। निर्म्मितोऽखिलदेवेषु पांचजन्य नमोऽस्तु ते"। "पांचजन्याय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि तन्नो शंखो प्रचोदयात्। "गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति!। नर्मदे सिंधुकावेरि जलेऽस्मिन् संनिधौ भव"। ततस्तीर्थावाहनमकुंशमुद्रया, ततः शिखा-मन्त्रेण गालिनीं मुद्रां प्रदर्शयत्। ततः जलं प्रपश्येत्। ततो पंचांगन्यासं कुर्य्यात्। ततश्चक्रधेनुमुद्रादिदर्शनं ततोऽष्टधा मूलमन्त्रं जपेत्। ततः सर्ववस्तुप्रोक्षणं ततः श्रीनृसिंहस्वरूप-कल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपं नृसिंहं दृढ़ासने उपवेश्योपचरेत्। ततः पंचदश नब त्रीणि वा पात्राणि स्थापयेत्। मूलमन्त्र-मुच्चार्य्य "श्रीभगवन् नृसिंहस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेय-स्वरूप नृसिंह स्वाग"तमित्यभिनन्द्य पुष्पषट्कं दद्यात्।

प्रल्हादसंक्लेशविभञ्जकं प्रभुं शटाच्छटाभिन्नघनं वपुर्दधत्।
प्रत्यक्षसिद्धिशुभदायकं नृणां लक्ष्मीवियुक्तं कमलायताक्षम्॥
काश्मीरदेशाधिपतेर्विनाशं घोरस्वरूपं विकरालदंष्ट्रम्।
नृसिंहदेवं प्रणमामि जन्मनि त्वाविर्भवो भानुकरप्रदीपः॥ इति श्रीनृसिंहस्वरूपं ध्यात्वा जन्मदिने श्रीनृसिंहस्वरूपोपकल्पित-

श्रीलाडिलेयस्वरूपभगवन्नृसिंहावताराविर्भावं संभाव्य पश्चात् स्वागतादिप्रश्नं कुर्य्यात् । ततो मूलमन्त्रमुच्चार्य्यं आसनं गृहीत्वा "श्रीभगवन्नृसिंहस्वरूपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूप इदमासनमास्यतामिति" वदन् आसने पंच पुष्पाणि दद्यात्। पुनरपि दूर्वाकूर्च्चमपि दद्यात् । ततः श्यामार्कपंचकं दूर्वापंचकं अब्जपञ्चकं विष्णुक्रान्तापञ्चकमेतत् सहितं पलचतुष्टयं जलं गृहीत्वा मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीभगवन्नृसिंहस्वरूपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूप भगवन्नृसिंह इदं ते पाद्यं नमः" इतिब्रुवन् चरणाब्जे पाद्यं दद्यात् । ततः जातीलवंगकक्कोलानां षट्पलं क्वाथं गृहीत्वा मूलमन्त्रमुच्चरन् "श्रीनृसिंहस्वरूपाय श्रीभगवते नृसिंहाय स्वधा" इति श्रीनृसिंहस्वरूपकृतस्य श्रीलाडिलेयस्य नृसिंहस्य मुखे कांस्यपात्रेणाचमनं दद्यात् । ततश्चन्दनकर्पूराद्यात्मको गन्धः पुष्पाण्यक्षतं यवादूर्वातिलश्वेतसर्षपाकुशसहितं चतुः पलं जलं गृहीत्वा मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीनृसिंहस्वरूपोपवेष्टिताय श्रीलाडिलेयस्वरूपाय श्रीभगवते नृसिंहाय स्वाहा" "तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् । तापत्रयविनिर्म्मुक्तस्तवार्घं कल्पयाम्यहम्" इति मन्त्रमुच्चार्य्य श्रीनृसिंहस्य शिरस्यर्धं दद्यात् । "त्वद्भक्तिलेशसम्पर्को परमानन्दसंज्ञकः । तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥ पादार्घमेतेषु प्रत्येकमाचमनं ज्ञेयम् । ततो मधुपर्कम्—"सर्वदैत्यविनाशाय बिकरालस्वरूपके । मधुपर्कमिदं भीम कल्पयामि प्रसीद मे" । आज्यं दधि मधुपलैकं कांस्यपात्रे गृहीत्वा मूलमन्त्रमुच्चार्य्य " श्रीनृसिंहस्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूपाय भगवते विकरालस्वरूपाय नृसिंहाय स्वधा" इति मन्त्रं पठन् मुखे दद्यात् । "करालदंष्ट्रकेशाय घोररूपाय ते नमः । देवतानां तु मोक्षाय नृसिंहाय नमो नमः" । ततस्त्वाचमनार्थं

पलमेकं जलं दद्यात्। ततस्तिलपिष्टेन श्रीनृसिंहस्वरूपोपकल्पित—श्रीलाडिलेयस्वरूपस्थितनृसिंहमुद्वर्त्य— "वस्ताजिनमध्यवसरोहति पृथिव्या युष्टयामेव प्रजनने प्रतितिष्ठति" इति मंत्रं पठन् वस्त्रपरिवर्त्तनं कुर्य्यात्। "भागधेयेनैबैनं प्रणं प्रणयति ब्राह्मण आर्षे वरुणस्य उद्धरेतस्वधा" इतिमन्त्रं पठन् पंचाशत् पलजलेन स्थानं दद्यात्। ततः "प्रणमद्भिः ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः सर्वाभिरेवैनं देवताभिरुद्धरति स्वाहा" इति मन्त्रं पठन् मूलमन्त्रमुच्चरन् स्नापयेत्। ततः पंचामृतेन पंचपलदुग्धं गृहीत्वा "पयः पावमानी पयस्वतीरधेति ऋषिभिः संभृतं ँ रसं" इतिमन्त्रं पठन् दुग्धेन स्नापयेत्। ततः पंचपलपरिमितं दधि गृहीत्वा "दधि तस्मै सरस्वती दुहे क्षीर ँ सर्पि मंधूदकं" इति मन्त्र पठन् दध्ना स्नापयेत्। ततः पंचपलपरिमितं घृतं गृहीत्वा "घृतवती ओदनमुदब्रुवते परमेष्ठी वा एष यदादनः" इति मन्त्रं पठन् घृतेन स्नापयेत्। ततः शर्करां गृहीत्वा "अंगान्यात्मन्भिषजातदश्विना ज्योतरसि आत्मानं मंगैः समदधात्सरस्वती" इति मन्त्रं पठन् स्नापयेत्। ततः सप्तजलं गृहीत्वा "सप्तधाम इन्द्रस्य रूप ँ शतमानमायुः सप्तयोनी स्वधा" इतिमन्त्रं पठन् सप्तजलेन संमार्जयेत्। ततः संस्कृतं सर्वतोभद्रघटं जलं सर्वघटेषु प्रक्षिपेत्। तत्राष्टदिक्षु त्वष्टघटेष्वनुक्रमेण सर्वौषधिमहौषधिवीजाष्टकं नवरत्नं पुष्पं फलं गन्धचन्दनं प्रक्षियेत्। नवमघटमग्रे दशमं सहस्रधारकलशं तत्र नवमकलशजलं दूर्वापुंजसहितेन शंखेन स्नापयेत्। "वसंतेनर्त्तुना देवाः वसवस्त्रिवृतास्तुतं रथंतरेण तेजसा हविरिद्रे वयोदधुः" इति मन्त्रं त्रिभिर्वारैः पठन् पूर्वदिशि स्थितं कलशं सर्वौषधिद्रवरससहितं गृहीत्वा "सिँहे व्याघ्रउतपाप्रदाकौशतधामानि" इति मन्त्रं पठन् स्नापयेत्।

ततः महौषधिद्रवरससहितं घटं गृहीत्वा—"त्विषि रत्नौ ब्राह्मणे सूर्ये या इन्द्रं या देवी शुभगा जनानविपरेतनः" इति मन्त्रं पठन् स्नापयेत् । ततः बीजाष्टकयुतं घटं गृहीत्वा "सा न आगन्वर्चसा संविदाना या राजन्येंदु दुभावायतायां वर्षतु स्वाहा" इति मन्त्रं पठन् स्नापयेत् । ततः नवरत्नयुक्तं कलशं गृहीत्वा "अश्वस्य क्रुंद्ये पुरुषस्य मायौ इन्द्रं या देवी शुभगा जजान" इति मन्त्रं पठन् स्नापयेत् । ततः पंचाशदधिकपुष्पयुक्तं कलशं गृहीत्वा "सा न आगन्वर्चसा संविदानाया हस्तिनी द्वीपिनि वलायाभिषिंचामि" इति मन्त्र पठन् पुष्पोदकेन स्नापयेत् । ततः फलयुक्तं कलशं गृहीत्वा "या हिरण्ये त्विषि रश्वेषु पुरुषेषु गोषु वृहस्पति प्रसूता" इतिमन्त्रं पठन् फलोदकेन स्नापयेत् । ततः गन्धोदकयुक्तं कलशं गृहीत्वा गायत्रीं पठन् स्नापयेत् । ततश्चन्दनोदकघटं गृहीत्वा "रथे अक्षेषु व्रषभस्य वाने वाते पर्जन्ये वरुणस्य शुष्मे" इतिमन्त्रं पठन् स्नापयेत् । ततः सहस्रधारकलशे सर्वौषधिमहौषधिवीजाष्टकं सर्वरत्नानि पुष्पाणि फलानि प्रक्षिप्यतां "राडसि विराडसि सम्राडसि स्वराडसि प्रयाणां हि गां" इति मन्त्र पठन् स्नापयेत् । पुनः गायत्रीं पठन् स्नापयेत् । आपोहिष्ठेति पठन् पुनः रत्नानि स्नापयेत् । पुनः महौषधिना पुनः फलोदकेन स्नापयेत् । ततः सहस्रधारघटेनैव स्नापयेत् । "इन्द्राय त्वा तेजस्वते तेजस्वंतꣳ श्रीणामि इन्द्रायुष्मंत आयुष्मंतꣳ श्रीणामि वाजं शिखाभासे" इति मन्त्रं पठन् शिखाभागे स्नापयेत् । ततो वस्त्रेण मार्जनं ततो न्यासं कुर्य्यात् । ततो वस्त्रं गृहीत्वा "तेजोसि तत्ते यच्छामि तेजस्तदस्तु मे मुखं" इति मन्त्रं पठन् वस्त्रं दद्यात् । ततः सहदेवी सदाभद्रा सूर्यावर्त्तीकुशाग्रकैः शिरीषरजनीभ्यां निर्मथ्य निम्बराजी लवण-

राजीशर्षपैः दृष्टिमुत्तार्य्यं तोयादौ प्रक्षियेत् । ततः सिंहासने श्रीनृसिंहस्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूपं भगवन्तं नृसिंहं पाद्यादिभिरुपचरेत् । ततो मंगलार्थं नारिकेरफलान्वितं द्वितीयकलशं स्थापयेत् । ततः स्वमन्त्रोक्तन्यासपूजादिकं कुर्य्यात् । ततोंजनतिलकयज्ञोपवीतमालाभरणादिना शृंगारं कृत्वा प्रतिसरं वध्नीयात् । तथाहि पीतडोरकं गृहीत्वा "तेज स्ववच्छरो अस्तु मे तेजस्वान् विवस्वतः प्रत्यङ तेजसा पयसा संपृंग्धिमरक्ष" इति मन्त्रं पठन् श्रीनृसिंह-स्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्य नृसिंहावतारस्य भगवतः दक्षिणपाणौ वध्नीयात् । ततस्त्वादर्शं गृहीत्वा "इममग्र आयुषे वर्चसे क्वधिप्रिय ॐ रेतो वरुण सोमो राजन्" इतिमन्त्रं पठन् दर्शयेत् । ततो भूषणादीनि मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीनृसिंहस्वरूपोपकल्पित – श्रीलाडिलेयस्वरूपनृसिंहावतार भगवन्निदं पुष्पं निवेदयामीति" सर्वं निवेदयेत् । ततो धूप-दीपादिकं कृत्वा नैवेद्यं समर्पयेत् । ततः दूर्वापुंजसहिताम्र-पल्लवं गृहीत्वा "भिषिंचामि माते वास्मादिते शर्मयच्छविश्वे देवार्जरदृष्टिर्यथासत आयु रसि विश्वायुरसि सर्वायुरसि सर्वमायुरसि त्वाभिषिंचामि" । ततो मन्दिरोपरि ध्वजापताकां वध्नीयात् । ततः अंजनं दद्यात् । ततः नैवेद्यं ततः ब्राह्मणान् भोजयेत् ॥

नृसिंहपुराणे–खण्डिते स्फुटिते स्वांगे चौरस्पर्शे भयाकुले ।
शूद्रस्पर्शे स्थानभ्रष्टे त्वभिषेकविधिः स्मृतः ॥
उग्ररूपनृसिंहोऽसौ साक्षाद्दर्शनदायकः ॥

इति श्रीप्रल्हादसंहितायां श्रीनृसिंहावताराभिषेकप्रयोगविधिः समाप्तः ॥

सकलगुणनिधानो भट्टनारायणाख्य-
स्त्ववतरत पृथिव्यां नारदस्यावतारः।
रुचिरपरमवेणीसंस्थिते मन्दिरेऽस्मिन्
प्रभुचरणकृपाभिरुत्सवं मन्यते स्म ॥
जन्माभिषेकं बलदेवमन्दिरे नृसिंहरूपं परिकल्पयामि।
श्रीलाडिलेयं स्वकमिष्टदेवं पूर्णाय कामाय मनोरथाय ॥

अथ वामनावताराभिषेकप्रयोगः

नारदपंचरात्रे—अवतारो पृथिव्यां तु वामनांगुलरूपधृक्।
ब्राह्मणस्य तु भावेन मूर्त्तिनैव बिराजते ॥
रामकृष्णनृसिंहाणां स्वरूपाः मम संस्थिताः।
तेषु जन्माभिषेकं च कुर्य्यान्मम विधानतः ॥
तीर्थस्थानेषु सर्वेषु कुर्य्याद्वामनजन्मनि।
दशलक्षगुणं पुण्यं फलमाप्नोति मानवः।
सर्वेषु व्रजद्वारेषु पंचलक्षगुणं फलम्।
गोकुले मथुरायां च वृन्दाबनसमुद्भवे।
विंशलक्षगुणं पुण्यं फलमाप्नोति नारद !।

बामनपुराणे—गोवर्द्धने च श्रीकुंडे काम्यादिषु वनेषु च।
त्रिंशलक्षगुणं पुण्यं फलमाप्नोति मानवः ॥
संकेतादिवटेष्वेव बनेषूपबनेषु च।
पंचायुतगुणं पुण्यं फलमाप्नोति भार्गव ! ॥
वृषभानुपुरे रम्ये नन्दग्रामे त्वटोरिके।
फलं कोटिगुणं पुण्यं परमानन्दमाप्नुयात् ॥

भविष्योत्तरे—स्वरूपैकोऽस्ति भेदो नास्ति मंत्राणां भेदमुच्यते।
विनाभिषेकपद्धत्या मन्त्रैरभिचरेद् विधिम् ॥
म्लेच्छस्थानं परित्यज्य सर्वत्र शुभदायकः।

कदाचिद्भ्रमयोगेन त्वस्तव्यस्तं च कारयेत्।
ब्रह्महत्या शतानां च फलमाप्नोति मूढधीः॥

इति श्रीवामनावतारजन्मोत्सवस्थानफलम्॥

अथ जन्मसमयनिर्णयः—

ब्राह्मे—बलदेवे च युग्मस्थे त्रिवेणीतटमन्दिरे।
ग्रामे च ललितायाश्च कुर्य्याद्वामनजन्मनि॥
अभिषेकं विधानेन वरदानमवाप्नुयात्।
वामनो प्रगटी भूत्वा ददाति वरमीप्सितम्।
ब्रजेषु च स्वरूपाः ये कृष्णस्य नामसंज्ञकाः।
सर्वेषु शुभदो भूत्वा वामनो भगवान् हरिः॥

ब्रह्माण्डे—भाद्रे मासि सिते पक्षे द्वादशी श्रवणान्विता।
रविवारेण संयुक्ता षट्घटी गमिता यदा।
तदा संस्थे तुलालग्ने प्राप्ते च पंचमांशके।
बहुलायाः प्रसादेन त्वादित्याः व्रतकारणात्।
वामनोऽवतरत्तर्हि बलिविध्वंसहेतवे।
एकादशी कलाविष्टा द्वादशी क्षयसंयुता।
रविश्रवणसंयोगे वामनस्य च जन्मनि॥
पूर्वविद्धा तदा कार्य्या दोषो नैव कदाचन।
द्वादशी वृद्धितां याति वासरद्वयभोगिता।
परविद्धा सदा ग्राह्या श्रवणेन युता यदि।
श्रवणाद्वादशी ख्याता बहुपुण्यफलप्रदा।
ईदृशी द्वितीया भूयात्प्रथमा षष्टि भोगिता।
तदा सा पूर्वविद्धा सा न ग्राह्या वामनोत्सवे।
उपवासं विधानेन परमं पदमाप्नुयात्।
पुत्रपौत्रकलत्रादिधनधान्यसमाकुलः॥

इति वामनावतारजन्मनिर्णयः॥

अथ पारणनिषेधः भविष्योत्तरे—

चतुर्भिश्चरणैर्युक्ता श्रवणस्य त्रयोदशी ॥
तदा तु पारणं कुर्य्यात् मांसतुल्यं भवेद् यदि ॥
शेषेनैके चतुर्थेन पादेनैव समाकुला ।
त्रयोदशीद्दशी भूत्वा तस्यां तु पारणं शुभम् ।
जगन्नाथस्य नैवेद्यतुल्यं पारणमुच्यते ।
सकल सुखमाप्नोति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥
उत्तराषाढ़संप्राप्तौ दैवयोगाद्भविष्यति ।
अस्तोऽयस्ता समाख्याता द्वादशी दोषनाशिनी ।
तस्यां नैव विचारः स्यादस्तोऽयस्ता च संज्ञिका ।
इति पारणनिषेधः ॥

ततोभिषेकः–त्रिवेणीतटसंस्थे च बलदेवे युगलस्थिते ।
मन्दिरे ललिताग्रामे वामनोत्सवं कारयेत् ॥
लाडिलेयं स्वमिष्टं च वामनेन प्रकल्पितम् ।
जन्मन्युत्सवमाचक्रे वामनस्य यथा विधिम् ।

अभिषेकविधिः—पूर्वमेव भूस्थलं सस्कृत्य तत्र चतुः स्तम्भादियुक्तं मण्डप कुर्य्यात् । तदुपरि वितानं बध्नीयात् । तत्र हस्तमात्रपरिमितां वेदिकां कुर्य्यात् । मण्डपं त्रिगुणितंतुवेष्टितं चतुर्द्वारतोरणध्वजासहितं कुर्य्यात् । वेदिकानिकटे सवतोभद्रमण्डलं कुर्य्यात् । तता वामनस्वरूपं ध्यात्वा—

अजिनदण्डकमण्डलमेखला रुचिरया वरवामनमूर्त्तये ।
स्थितजगत्त्रितयाय जितात्मने निगमवाक्पटवे पटवे नमः ॥
इति भविष्योत्तरे ।

ततः सर्वसामग्रीः संपाद्य आचार्यादिवरणं कुर्य्यात् ।

ततः संकल्पः–"ऋग्वेदाख्ये कुले जातः विष्णोराज्ञाप्रवर्त्तकः ।
नारदस्यावतारोऽहं तस्माद्वेदः यजुः स्मृतः ।
अवतारप्रसंगेन ऋग्वेदं नैवमुच्चरेत् ।
मत्कुले प्रभवाः सन्ति ऋग्वेदसंज्ञिकाः स्मृताः ॥

अद्य हेक्त्वा द्वादशोत्तरषोडशशते १६१२ सम्वत्सरे मासोत्तम-
मासे भाद्रपदे शुक्लपक्षे तिथौ द्वादश्यां रविश्रवणान्वितायां
षट्घटी व्यतीतसमये तुलालग्ने पंचमनवमांशकोदये ललिता-
ग्रामाभिधानके त्रिवेणीतटस्थमथुरापट्टनपुराभिधानादाज्ञाप्रव-
र्तमानयजुर्वेदान्तर्गतापस्तंवसूत्राश्वलायनशाखान्वितभार्गवच्य -
वनाप्लुवानौरवयामदग्न्येति पंचप्रवरान्वितश्रीवत्सगोत्रोत्पन्न—
श्रीयुगलस्थकृष्णाज्ञयाकृतश्रीशेषावतारश्रीयुगलवलदेवश्रीकृष्ण -
योरुपासक: श्रीकृष्णेन स्वयं दत्तमिष्टदेवं स्ववालस्वरूपं लाडि-
लेयाख्यं तस्य लाडिलेयस्वरूपस्य नियतोपासक: श्रीनारदावता-
रसंभूतस्वरूपश्रीनारायणभट्टशर्म्माहं सकलमनोर्थसिद्ध्यर्थं श्री-
वामनाभिषेकार्थं त्वमाचार्य्यत्वेनाहं व्रणे इति ब्रुवन् वस्त्रकुण्ड-
लमुद्रिकादिभि: यथा शक्त्या पूजयेत् । एवमृत्विगादिकमपि ।
ततो व्रतोऽस्मीति ब्रूयात् । तत: यथा प्रतिसरं वध्नीयात् ।
पुण्याहवाचनं—"पुनंतु मा देवजना: पुनंतु मनसा धिय: ।
पुनंतु विश्वाभूतानि जातवेद: पुनीहि माम्" इति पठित्वा
अथास्य कर्मण: पुण्याहं भवंतो ब्रुवंतु पुण्याहं ३ अस्य
कर्मण: पुण्याहं भवंतो ब्रुवंतु आयुष्मते स्वस्ति स्वस्ति न
इंद्रो वृद्धश्रवा स्वस्ति न: पूषा विश्ववेदा: स्वस्ति नस्तार्क्षो-
ऽरिष्टनेमि: स्वस्ति नो वृहस्पति र्दधातु ओं शान्ति: शान्ति: शान्ति:
ओं अस्य कर्मण ऋद्धि र्भवंतो ब्रुवंतु ऋद्धतां ऋद्धि: समृद्धि: ।
अथ दिग्बन्धनम्—स्वेतसर्षपान् दक्षिणहस्ते गृहीत्वा—"प्राच्यै
दिशे स्वाहा" "दक्षिणायै दिशे स्वाहा" "अवाच्यै दिशे
स्वाहा" "उत्तरायै दिशे स्वाहा" इति चतुर्दिक्षु विदुषु प्रक्षि-
पेत् । ततस्त्रिगुणितरक्तसूत्रेण सप्तस्तम्भान्परिवेष्टयेत् । तत:
"श्रीवामनावतारस्य भगवद्विष्णोर्वामनस्वरूपोपकल्पितश्री-
लाडिलेयस्वरूपस्य ममेष्टदेवस्य मंडपं रक्षस्वे"ति पठित्वा—

ततः दशदिग्पालान् पूजयेत् । पूर्वस्यां दिशि कपिशवर्णध्वजादण्डे "इन्द्राय नमः" अग्निकोणे कपिलवर्णध्वजादण्डे "अग्नये नमः" दक्षिणस्यां दिशि नीलवर्णध्वजादण्डे "यमाय नमः" क्रियाभाजः पताकादशमर्च्चयेत् । निऋतिकोणे श्यामध्वजादण्डे "निऋतये नमः" पश्चिमस्यां दिशि श्वेतवर्णध्वजादण्डे "वरुणाय नमः" वायव्यकोणे धूम्रवर्णध्वजादण्डे "वायवे नमः" उत्तरस्यां दिशि अमलवर्णध्वजादण्डे "कुवेराय नमः", ईशानकोणे सितवर्णध्वजादण्डे "ईशानाय नमः" अधो भागे गौरवर्णध्वजा दण्डे "शेषाय नमः" उपरिष्टाद्भागे रक्तवर्णध्वजादण्डे "ब्रह्मणे नमः" "श्रीवामनस्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूपश्रीवामनावतारस्य मण्डपं रक्षस्वे"ति पठित्वा सर्वत्र धूपदीपादिभिरभ्यर्चयेत् । ततो सर्वतोभद्रमण्डलनिकटे उपविश्य पंचवर्णरञ्जितेऽष्टदलपद्मे तत्र तस्यैव कर्णिकायां तन्दुलान्पूरयित्वा तदुपरि दर्भकूर्चं निधायाऽष्टदलपद्मे तत्र तस्यैव कर्णिकायां तन्दुलान्पूरयित्वा तदुपरि कलशं स्थापयेत् । सर्वतो भद्रमण्डलपूजनपूर्वकं त्रिगुणितन्तुवेष्टित मुखे त्वाम्रपल्लववेष्टितं धूपितं च कुर्य्यात् । तत्र कामवीजस्मरणपूर्वकं ततस्तत्र कुम्भे पंचरत्नं नवरत्नं गन्धाष्टकं क्षीरवृक्षक्वाथतोयं प्रक्षिप्य मूलमन्त्रं च पठन् जलं पूरयेत् । ततोंकुशमुद्रया तीर्थानावाहयेत् । अंगुष्ठानामिकायुक्तया मुद्रया विलोडयेत् । तत्र कुम्भे विष्णुक्रान्तामिन्द्रवल्लीं दूर्वां च निक्षिपत् । तर्जनोमध्यमे प्रसार्य्यानामिकाकनिष्ठिकांगुष्ठैः कुशं गृहीत्वा अस्त्रमन्त्रं पठन् प्रोक्षणं कुर्य्यात् । ततोऽस्त्रमंत्रेण ताडनं "करवीरस्य पुष्पाणि गृहीत्वाक्षरसंख्यया । ततस्तौ ताडयेन्मत्रं कामवीजेन मन्त्रवित्" ॥ कामवीजं पठनभ्युक्षणं कुशेनावगुंठनं ततः षडंगन्यासं ततो धेनुमुद्रयाऽमृतीकरणं ततो "दशकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नमः" ततोऽष्टोत्तर-

शतं सहस्रं वा मूलमंत्रं जपेत्। ततस्तेन जलेन सर्वं प्रोक्षयेत्। गोमयाम्भसा शंखस्थापनं त्रिकोणमण्डले शंखाशनं प्रक्षाल्य स्थापयेत्। "अस्त्राय फडिति" शंखं प्रक्षाल्य ततस्तत्र गन्धाक्षतान्प्रक्षिपेत्। हृदयमन्त्रमुच्चार्य्य ततः मातृकाक्षरप्रतिलोमैः जलं पूरयेत्। ततः शंखपीठे "दशकलाव्याप्तसूर्य्यमण्डलाय नमः" इति मन्त्रं जपन् पूजयेत्। ततः शंखजले "षोडशकलाव्याप्तसोममण्डलाय नमः" इति मंत्रं पठन् गन्धादिभिः पूजयेत्। "त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विधृतः विष्णुना करे। निर्म्मितोऽखिलदेवेषु पांचजन्य नमोऽस्तु ते" पांचजन्याय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तन्नो शंखो प्रचोदयात्"। "गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति। नर्मदे सिंधु कावेरी जलेऽस्मिन्संनिधौ भव"। ततस्तत्र तीर्थावाहनमकुंशमुद्रया ततः शिखामन्त्रेण गालिनीमुद्रां प्रदर्शयेत्। ततः जलं प्रपश्येत्। ततो पंचांगन्यासं कुर्य्यात्। ततश्चक्रधेनुमुद्रादिदर्शनं ततोऽष्टधा मूलमंमं जपेत्। ततः सर्ववस्तुप्रोक्षणं ततः श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपं वामनं दृढ़ासने उपवेश्योपचरेत्। तत्र पंचदश नव वा त्रीणि पात्राणि स्थापयेत्। मूलमन्त्रमुच्चार्य्यं "श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थवामन स्वागतमि"त्यभिनंद्य पुष्पषट्कं दद्यात्॥

जन्मोत्सवे वासरसंभवे हरिः श्रीलाडिलेये परिकल्पितो मया।
वेणीस्थितं मन्दिरमागतोऽस्ति प्रसीदति स्वेश्वरजन्महेतवे॥

इति श्रीवामनस्वरूपं ध्यात्वा जन्मदिने द्वादश्यां श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थवामनावतारभगवदाविर्भावं संभाव्य पश्चात् स्वागतादिप्रश्नः। ततो मूलमन्त्रमुच्चार्य्य आसनं गृहीत्वा "श्रीवामनस्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूपश्रीवामनावतार भगवन् इदमासनमास्यता"मिति वदन् आसने

पंचपुष्पाणि कूर्च्चंदूर्वासहितानि दद्यात्। ततः स्यामार्कपंचकं दूर्वापंचकं अब्जपञ्चकं विष्णुक्रान्तापंचकं एतत्सहितं पलचतुष्टयं जलं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीवामनस्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूपश्रीवामनावतार भगवन्निदं ते पाद्यं नमः" इति ब्रूवन् चरणाम्बुजे पाद्यं दद्यात्। ततः जातीलवंगकंकोलानां षट् पलं क्वाथं गृहीत्वा मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपाय श्रीभगवते श्रीवामनावताराय स्वधा" इति मंत्रं पठन् श्रीवामनस्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थवामनस्य मुखे कांस्यपात्रेणाचमनं दद्यात्। ततश्चन्दनकर्पूराद्यात्मको गन्धः पुष्पाण्यक्षतं यवाः दूर्वा तिलश्वेतसर्षपाकुशहितं चतुः पलजलमादाय मूलमंत्रमुच्चरन् श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थ-वामनावतारजन्मोत्सवाभिषेकार्थं श्रीभगवते वामनावताराय स्वाहा" "कश्यपर्षेस्तु पुत्राय वामनांगुलकाय च। उपेन्द्राय नमस्तुभ्यं तवार्घं कल्पयाम्यहं" इति मन्त्रमुच्चरन् श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थवामनावतारस्य शिरसि अर्घ्यं दद्यात्। "परमानन्दसंज्ञाय त्वद्भक्त्या च समन्वितः। तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये" पादार्घमेतेषु प्रत्येकमाचमनं ज्ञेयम्। ततो मधुपर्कं—"वलिराजप्रवन्धाय परिपूर्णस्वरूपिणे। मधुपर्कमिदं देव कल्पयामि प्रसीद मे"। आज्यं दधिपलैकं कांस्यपात्रे गृहीत्वा मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थ–श्रीवामनावतारस्य मुखे दद्यात्। "अदितेर्लघुपुत्राय देवानां देवतात्मने। आचामं कल्पयामीश शुद्धं त्वां शुद्धिहेतवे"। ततस्त्वाचमनार्थं पलमेकं जलं दद्यात्। ततस्तिलपृष्टेन श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थवामनमुद्वर्त्त्य—१ तासां त्वा सर्वासा ॐ

हचाभिषिंचामि वर्चसा समुद्र इवासि गृह्यमाना" इति मंत्रं पठन् वस्त्रपरिवर्त्तनं कुर्य्यात्। "सोम इवास्य दाभ्यः अग्निरिव विश्वतः प्रत्यङ् स्वधा" इति मंत्रं पठन्मूलमंत्रं च पठन् स्नापयेत्। ततः पंचपलदुग्धमानीय "तमहमस्माऽमुष्यायणाय ओजसे वीर्याय गृन्हामि" इति मंत्र पठन् पंचामृतदुग्धेन स्नापयेत्। ततः पंचपलपरिमितं दधि गृहीत्वा "सुरभिनो अपामूर्त्तौ रसस्तेजसे ब्रह्मवर्चसाय पुष्टाय प्रजननाय गृह्णामि" इति मंत्रं पठन् दध्ना स्नापयेत्। ततः पंचपलपरिमितं घृतं गृहीत्वा "अपां योऽंगिरसः आयुषे दीर्घायुत्वाय गृह्णामि स्वधा" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततो मधु गृहीत्वा "मधुनक्तं दर्भो-वृषातन्मिथुनं मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजननाय" इति मंत्रं पठन् पंचपलमधुना स्नापयेत्। ततः शर्करां गृहीत्वा— "प्रजापते प्रजापशुभिर्यजमानः शुभिर्यजमान सूर्यस्य रश्मिभिः स्वाहा" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः सप्त जल गृहीत्वा "सप्तधाम प्रियाणि प्रजा ह्यात्मन उत्तरतरा तीर्थे" इति मंत्रं पठन् सप्तजलेन द्विवारं संमार्जयेत्। ततः संस्कृतं सर्वतोभद्र-घटजलं सर्वघटेषु प्रक्षिपेत्। तत्राष्टदिक्षु अष्टघटेष्वनुक्रमेण सर्वौषधिमहौषधिबीजाष्टकं नवरत्नं पुष्पं फलं गन्धं चन्दनं प्रक्षिपेत्। नवमघटे अग्रे दशमं सहस्रधारकलशं तत्र नवमं कलशं जलं दूर्वापुंजसहितेन स्नापयेत्। शंखेनैव आपोहि-ष्ठेति त्रिभिः पठन्स्नापयेत्। पूर्वस्थितं कलशं सर्वौषधिद्रव-रससहितं गृहीत्वा "यथा देवतमे वैनत्प्रतिष्ठापयति प्रतितिष्ठति स्वधा" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः महौषधिद्रवरससहितं घटं गृहीत्वा "तेन शांतं यदुत्करे न्यस्यति प्रतिष्ठामेवैनानि तद्गमयति स्वाहा" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः बीजा-ष्टकयुतं घटं गृहीत्वा 'निकामे नः निकामे" "देवा गातुर्विदो

गातुं वित्वा गातुमिति मनसस्य त इमन्नो देव देवेषु यज्ञ ॐ स्वाहा वाचि स्वाहावाते स्वाहा" इति मन्त्रं पठन्स्नापयेत्। तत नवरत्नयुक्तं कलशं गृहीत्वा "वहुग्वै वहुपस्वायै वह्वजाम्विकायै सविता वीर्याणि स्वाहा" इति मन्त्रं पठन्स्नापयेत्। ततः पंचाशदधिकपुष्पयुक्तं कलशं गृहीत्वा "बहुव्रीहि यवायै भैषज्येन वहुमाषतिलायै चाभिषिचामि त्वां स्वधा" इति मन्त्रं पठन्पुष्पोदकेन स्नापयेत्। "पुष्पिणी: पुष्पाणि फलाया: वहुहिरण्यायै वहुहस्तिकायै बषट् स्वाहा" इति मन्त्रं पठन् फलोदकेन स्नापयेत्। ततः गन्धोदकयुक्तं कलशं गृहीत्वा गायत्रीं पठन्स्नापयेत्। ततश्चन्दनोदकघटं गृहीत्वा–"वहुदास पुरुषायै रयिमत्यै स्विन्न: वहुराय स्योषायै राजास्तु" इतिमन्त्रं पठन्स्नापयेत्। ततः सहस्रधारकलशे सर्वौषधि-महौषधि–वीजाष्टकं सर्वरत्नानि पुष्पाणि फलानि प्रक्षिप्यतां "गो मृग कण्ठेन प्रथमामाहुतिं जुहोति पशवोवै गो मृग: रुद्रोऽग्नि: स्विष्टिकृत्स्वाहा" इति मन्त्रं पठन्स्यापयेत्। पुन: गायत्रीं पठन्स्नापयेत्। "ओं नमो रुद्रासु मंगली देवपशूनं तर्दधाति" इति मन्त्रं पठन्पुनः स्नापयेत्। पुनः "गो मृगे" ति पठन् बीजाष्टकेन स्नापयेत्। पुनः "आपो हिष्ठामयो भुव" इति पठन्नवरत्नानि स्नापयेत्। पुनः पुष्पोदकेन स्नापयेत्। पुनः फलोदकेन स्नापयेत्। ततः सहस्रधारकलशं घटेनैव "एतोन्विद्रस्तवाम शुद्ध ७ शुद्धेन साम्ना शुद्धैरुक्थैर्वा वृध्वासं शुद्ध आशीर्वान्ममत्तु" "इन्द्र शुद्धो हिनार्यि शुद्धो रत्नानि दाशुषे शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं शिषाभासे" इति मन्त्रं पठन् शिखाभागे स्नापयेत्। ततो वस्त्रेण मार्जनं ततो न्यासं कुर्य्यात्। ततो वस्त्रं गृहीत्वा–"आवसथे श्रियं मन्त्रं अहिर्बुध्न्य योनि यच्छतु राजाधिराजाय प्रसह्य

साहिने देवसोमः" इति मन्त्रं पठन् वस्त्राणि दद्यात् । ततः सहदेवी-सदाभद्रा-सूर्यावर्ताकुशाग्रकैः शिरीषरजनीभ्यां निर्मथ्य निंबराजी-लवणराजी-सर्षपैः दृष्टिमुत्तार्य्य तोयादौ प्रक्षिपेत् । ततः सिंहासने श्रीवामनस्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडिलेयस्वरूपस्थ-वामनावतारं भगवन्तमुपवेश्य पाद्यादिभिरुपचरेत् । ततो मंगलार्थं नारिकेरफलान्वितं द्वितीयकलशं स्थापयेत् । ततस्त-न्मन्त्रोक्तन्यासपूजादिकं कुर्य्यात् । ततोंजनतिलकयज्ञोपवीत-मालाभरणादिना शृंगारं कृत्वा प्रतिसरं बध्नीयात् । तथापि पीतडोरकं गृहीत्वा "नमो वयं वै श्रवणाय कुर्महे स मे कामान्काम कामायमह्यं कामेश्वरो वै श्रवणो ददातु, स गरेण रक्ष" इति मन्त्रं पठन् श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्रीलाडिलेय-स्वरूपवामनावतारस्य भगवतः दक्षिणहस्ते बध्नीयात् । तत-स्त्वादर्शं गृहीत्वा "मूर्त्तिपस्य वै कुवेराय वैश्रवणाय संपदे महाराजाय नमस्तेजसे त्वा" इति मन्त्रं पठन्दर्शयेत् । ततो भूषणादिक मूलमन्त्रमुच्चार्य्य "श्रीवामनस्वरूपोपवेष्टितश्रीलाडि-लेयस्वरूपभगवन्वामनावतार महाविष्णो इदं पुष्पं निवेदयामि" इति सर्बं निवेदयेत् । ततो धूपदीपादिकं कृत्वा नैवेद्यं समर्प-येत् । ततः दूर्वापुंजमाम्रपल्लवं गृहीत्वाऽभिषेकं कुर्यात् । "आशिष मे वै तामाशास्ते पूर्णपात्रे अन्तनोनुष्टुभा चतुष्पद्वा एत छंदः प्रतिष्ठितं पत्नीयै पूर्णपात्रे भवति वलि जेतु मर्हसि वामनो भूस्वदेवा" इत्येतैर्मंत्रैः श्रीवामनस्वरूपोपकल्पितश्री-लाडिलेयस्वरूपवामनावतारसंज्ञकं मूर्त्तिमभिषिंचेत् । ततः मन्दिरोपरि ध्वजां पताकां च बध्नीयात् । ततः नीराजनं कुर्य्यात् । ततः ब्राह्मणान् भोजयेत् ॥

नारदपंचरात्रे—

ब्राह्मणान्नेव भुंजीयाद्वामनस्य प्रसादकम् ।

लोभाच्च नरकं याति द्रारिद्रं वार्षिकं भजेत् ॥
युगलस्थवलदेवस्य मन्दिरे परिचारकः ।
जन्मोत्सवं वामनस्य नैव कुर्य्यात्कदाचन ॥
परिवारत्त्रयं भूत्वा दरिद्रेण परिप्लुताः ।
ऋणेण पूरिताः सन्ति निस्तेजास्ते भुवस्थले ॥

इति वामनोत्सवनिषेधः ।

इति श्रीवामनपुराणे नारदसंहितायां श्रीवामनावताराभिषेकप्रयोगविधिः समाप्तः ॥

इत्यादिमंत्रैरभिषिच्यमानो जन्मोत्सवे वामनसंज्ञको हरिः ।
प्रमाणमानांगुलवामनेन त्वाविर्वभूवे बलदेवमन्दिरे ॥
श्रीलाडिलेयाख्यस्वरूपतः प्रभुः वरप्रदोऽभूत् कुलदीक्षिताय ।
प्रीतोऽस्म्यहं नारदसंभव त्वया कृतोऽभिषेको मम जन्मवासरे ॥
विधानपूर्वाचरितेन तुष्टो वरं व्रणीष्व सकलं स्वमिच्छितम् ॥
वरप्रदानान्वितसंज्ञकानि वाक्यानि श्रुत्वा ननु वामनस्य ।
श्रीभट्टनारायणःभक्तिपूर्वं श्रीलाडिलेयस्थितवामनं हरिम् ॥
वध्वांजलिर्वाक्यसमुद्भवं वरं व्रवीच्च ते जन्मनि मे स्मृतिर्भवेत् ।
तदापि क्रुद्धोऽपि दयान्वितो हरिः वरप्रदानं कुरुते प्रसादतः ॥
अद्यास्मिन्समये गते मम दिने जन्मोत्सवे संयुते
पूर्णे सप्तदशे शते भवति चेत्संवत्सरे मे सुत ! ।
वेणी तेंगमुपाश्रिता भगवती कृष्णाज्ञया त्वागता
सा त्वामुद्धरयेत् तदैवसमये मृत्यौ स्थिते वासरे ॥
वेणी च ते अंग सदा वसन्ती चतुर्भुजोऽहं तव संनिधौ यामि ।
त्वदादिमारभ्य कुले भवास्तव वेणीस्थिताः मोक्षपदं लभन्ति ॥
तवोत्सवं वामनसंभवे दिने ममोत्सवं चक्रुरवस्थिताः जनाः ।
मदाज्ञया ते सुखपूर्वं सर्वदा स्थिताः नृलोके वलदेवमन्दिरे ॥

इति श्रीमद्भास्करात्मजश्रीनारायणभट्टगोस्वामिविरचितायां व्रजोत्सवचन्द्रिकायां व्रजसारोद्धारे उत्तरार्द्धवृत्तौ द्वादशः प्रकाशः

अथ पंचायतनपूजाप्रकारः

रुद्रयामले— पंचप्रकारपूजा च तत्रादौ च विनायकम् ।
शालिग्रामं ततो देवीं शिवं सू प्रतिष्ठितम् ।
पंचानां देवतानां च पंचायतनसंज्ञकम् ।
शोणभद्रोद्भवं देवं गणेशं रक्तवर्णकम् ।
यंत्रोद्धारस्वरूपां च देवीमूर्त्तिं निधाय च ।
पिण्डी नीलं तथा श्वेतं शिवं लिंगस्वरूपकम् ।
सूर्यं च स्फटिकाकारं शालिग्रामं प्रतिष्ठितम् ।
गण्डक्युद्भवरूपं च द्वितीयं न प्रतिष्ठितम् ।
एकमेकस्वरूपं च पंचानां न द्वितीयकम् ।
पंचस्थानेषु पंचानां पंचमूर्त्तिनिवेशनम् ।

विष्णुयामले—

विष्णोरुपासकश्चेत्ति मध्यस्थाने निवेशयेत् ।
शालिग्रामं स्वमिष्टं च चक्रचिन्हेन लाञ्छितम् ।
लैङ्गे—शैवश्चेच्छिबमूर्त्तिं च शिवं मध्ये निवेशयेत् ।
सौरश्चेत् सूर्यमूर्त्तिं च मध्यस्थाने निवेशयेत् ॥
गाणेशश्चेत्तदा कुर्य्याद्गणेशस्य निवेशनम् ।
शाक्तको भक्तराजश्चेन्मध्ये भगवतीं कृतः ।
जन्मोत्सवं भवेद्यस्य तस्य मूर्त्तिं च मध्यगम् ।

पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये—

सौराः शैवाश्च गाणेशाः शाक्तिकाः वैष्णवास्तथा ।
श्रावणे भाद्रपदे च फाल्गुने माघमासके ।
चतुर्थी चाष्टमी चैव सप्तमी च चतुर्दशी ।
एतासु तिथिषु कुर्य्यात्पंचानां जन्म चोत्सवम् ।
अभिषेकविधिः प्रोक्ता तस्य जन्म प्रवर्त्तते ।
संकेतस्थापनादेवी विधिरेष उदाहृतः ।
ललितापूजनेनैव वैष्णवानां शुभप्रदा ॥

संकेताख्या महादेवो संपूर्णकामनाप्रदा ॥

तत्रादौ गणेशजन्मनिर्णयः ।

ब्रह्मवैबर्त्ते गणपतिखण्डे—

श्रावणस्यासिते पक्षे चतुर्थी बुधसंयुता ।
धनिष्ठाऋक्षसंयुक्ता पूर्वविद्धा शुभप्रदा ।
पराविद्धा सदा त्याज्या गणेशवरजन्मनि ।
चन्द्रोदये व्यापिनी च सर्ववाञ्छितदायिनी ।
रात्रौ प्रमुखतो जाताश्चतुः संख्याकनाडिका ।
मीनलग्नोदये जाते द्विपास्यजन्म भूपते: ॥

इति गणेशजन्मनिर्णयः ।

अथ सूर्यजन्मनिर्णयः भविष्योत्तरे—

माघे मास्यसिते पक्षे सप्तमी भौमसंयुता ।
चित्रानक्षत्रसंयुक्ता शूलयोगसमन्विता ।
पूर्वविद्धा सदा ग्राह्या परविद्धा न कर्हिचित् ।
सर्वरोगविनाशाख्या सूर्यजन्मसमुद्भवा ।
चतुः नाडीसु शेषायां रात्रौ नन्वरुणोदये ।
लग्ने च मकरे संस्थे सूर्यजन्मोत्सवं चरेत् ।

इति सूर्य्यजन्मनिर्णयः ॥

अथ शिवजन्मनिर्णय: —

फाल्गुनस्याशिते पक्षे शिवरात्री चतुर्दशी ।
धनिष्ठाऋक्षसंयुक्ता शिवयोगसमन्विता ।
व्यापिनी त्वर्द्धरात्रौ सा पूर्वविद्धा शुभप्रदा ।
परविद्धा सदा त्याज्या हरजन्मनिजोत्सवे ।
गता: नाड्यः द्वादशाख्यास्तुलालग्ने समागते ।
तत्समये शिवजन्मोऽभूदुत्सवं जन्मसंज्ञकम् ॥

इति शिवरात्रिनिर्णयः ॥

अथ देवीजन्मनिर्णयः । मार्कण्डेये—

भाद्रे मास्यसिते पक्षे नवमी संयुताष्टमी ।
रोहिणीबुधसंयुक्ता पूर्वविद्धा शुभप्रदा ।
वृषलग्नोदये जाते विष्णुदेव्यौ प्रवर्त्तितौ ।
देवकी जनयत्पुत्रं यशोदा कन्यकां तथा ।
योगमाया समाख्याता संकेतस्थलवासिनी ।
विष्णुसंवन्धिकाख्या ता उत्सवाः जन्मसंज्ञकाः ॥

शिवपुराणे—पूर्वविद्धाः शुभा प्रोक्ताः स्मार्त्तकानां फलप्रदाः ।
चतुर्णामवताराणां वासरेष्वभिषेचनम् ।
एतेषूक्तदिनेष्वेव शालिग्रामाभिषेचनम् ।
देवीजन्मोत्सवे चैव कुर्यान्नैवाभिषेचनम् ।
पूर्वमेव प्रतिष्ठायामभिषेकविधिः स्मृतः ।
संकेतस्थां शुभां देवीं पुनरुद्धारये त्वहम् ।
विष्णोराज्ञाप्रमाणेन ललितापूजनाख्यकाम् ।
यंत्रोद्धारं च तत्रैव कुर्यादृव्यास्तु पीठके ।
नवकोणसमायुक्तं मंडलाकारवेष्टितम् ।
वीजाक्षरसमायुक्तं समंत्रं विधिवल्लिखेत् ।

ओं ह्रीं क्लीं क्रूं ह्रूं व्रीं प्लीं ह्रां श्रीं ओं ह्रीं त्रीं—
ललितापूजिते देवि नारायणि नमोऽस्तु ते स्वधायै नमः ॥
यंत्रमध्ये लिखेत् पूर्वं मंत्रं यथाविधानकं ।
यंत्रोद्धारं विना पूजा निष्फला जायते ध्रुवम् ॥

विष्णुयामले ध्यानं—

संकेतस्थलवासिनीं भगवतीं नारायणाज्ञोद्भवां
योगाख्यां व्रजसुन्दरीं च ललितापूजाभिरामां शुभाम् ।
रात्रौ दानवघातिनीं शुभप्रदां विष्णोरभीष्टान्वितां
ध्यात्वा राधितस्वेष्टदां सुरमणीं शून्यालये संस्थिताम् ॥
वन्दे त्वां परमेश्वरीं सुखप्रदां श्रीनन्दपुत्रीं महाम् ॥

इति ध्यात्वा

पंचानामंगसंस्थानां पंचायतनसंज्ञकम् ।
पंचानां देवतानां च जन्म जन्मनिजोत्सवे ।
स्वरूपानां पृथक्त्वेन ध्यात्वा रूपाणि भिन्नतः ॥

तत्रादौ गणेशध्यानं—

सिंदूराभं त्रिनेत्रं पृथुजठरयुतं हस्तपादौ दधानं
दंतपाशांकुशेष्टाभयकरविलसद्वीजपूराभिरामम् ।
भालेन्दूद्योतमौलिं करिपतिवदनं दानपूराद्रगण्डं
भोगीन्द्रावद्धभूषं भजत गणपतिं रक्तवस्त्रांगरागम् ॥
शृण्वन्गन्धर्वगीतप्रणत जन्मनो नंदवन्नंदनाद्यै-
र्देवैराराध्यमानो मुखमिहीरकुलं वारयन् कर्णतालैः ।
पार्वत्या दीप्यमानं प्रणतविनयता सूचिता चारुशीलं
शुंडाग्रेणादधानं कवलं मुहुः मुहुः पातु मां वालरूपः ॥

इति रुद्रयामले गणेशध्यानम् ।

गारुडे—गंडक्युद्भवरूपवेष्टितप्रभं चक्रस्य चिन्हान्वितं
शालिग्रामशिलास्थितं शुभप्रदं द्विभागचिन्हैयुतम् ।
वन्दे जन्म निजोत्सवे भगवन्तं पंचांगसंस्थं हरिं
श्यामं स्निग्धवपुर्दधानमखिलं संपूर्णकामप्रदम् ॥

इति शालिग्रामस्वरूपपंचायतनसंस्थास्वरूपध्यानम् ॥

ब्रह्मयामले—

श्वेताभिधामं शिवराजसंज्ञकं जन्मावतारं सकलार्थदायकम् ।
कल्याणभूत्यै नरलोकसंभवं वालस्वरूपं प्रणमामि शंकरम् ॥

इति पंचायतनस्थवालस्वरूपशिवध्यानम् ॥

भविष्योत्तरे—

ज्योतिर्मयं दीप्तिकरं विशालं वालस्वरूपं त्ववतारसंभवम् ।
दिवाकरं रोगहरं तमोघ्नं पंचांगसंस्थं प्रणमामि सूर्य्यम् ॥

इति पंचायतनस्थसूर्य्यवालस्वरूपध्यानम् ॥

निर्णयामृते-पंचानां देवतानां च मंत्रास्त्वेकविधाः स्मृताः ।

अभिषेकानां पंचानां मंत्राः प्रोक्ताः मनीषिभिः ।
विष्णोर्मूर्त्तेस्तु कुर्य्याच्च मंत्रैरेवाभिषेचनम् ।
परिवारक्षयं भूयाद्दरिद्रो दुःखभाग्भवेत् ।
नरके पच्यमानोऽसौ निस्तीर्णो प्रतिमा भवेत् ।
इत्यभिषेकनिषेधः ।

ततः पंचायतनसेवाभिषेकप्रारम्भः—पूर्वमेव भूस्थलं संकेत-स्थले संस्कृत्य तत्र चतुः स्तम्भादियुक्तं मण्डपं कुर्य्यात्, तदुपरि वितानं वध्नीयात्। तत्र हस्तमात्रपरिमितां वेदिकां कुर्यात्, मण्डपं त्रिगुणिततंतुवेष्टितं चतुर्द्वारतोरणध्वजासहितं कुर्यात्। वेदिकानिकटे सर्वतोभद्रमंडलं कुर्य्यात्। ततः सर्व–सामग्रीः संपाद्याचार्य्यादिवरणं कुर्य्यात्। संकल्पः—अद्येत्युक्त्वा द्वादशोत्तरषोडशशते १६१२ संवत्सरे मासोत्तममासे भाद्रपदे मासे कृष्णपक्षे तिथावष्टम्यां रोहिणीबुधसंयुक्तायां द्वादशघटीरात्रिव्यतीतसमये वृषलग्नोदये संकेतस्थले श्रीयुगल-मूर्त्तिकृष्णावतारश्रीमहाविष्णो दक्षिणदेशे गोदावरीतटस्थ-मथुरापट्टनपुराभिधानादाज्ञाप्रवर्तमानः यजुर्वेदान्तर्गतापस्तंवसूत्राश्वलायनशाखान्वित – भार्गवच्यवनाप्लुवानौरवयामदग्न्येति पंचप्रवरान्वितश्रीवत्सगोत्रोत्पन्न – श्रीकृष्णाज्ञयाकृतश्रीशेषावतारयुगलमूर्त्तिश्रीवलदेवश्रीकृष्णयोरुपासकः श्रीकृष्णेन स्वयं दत्तमिष्टदेवं स्ववालस्वरूपं लाडिलेयस्वरूपोपासकः श्रीनारायण-माध्वसांप्रदायिकवैष्णवनारदावतारसंभूतस्वरूप – श्रीभास्क - रात्मजनारायणभट्टशर्माहं सकलमनोरथसिद्धयर्थं हरिपीठ-गोत्रोद्भवनन्दरायपुत्रीश्रीसंकेतदेवीपूर्वप्रतिष्ठायां जन्मन्युत्सवे श्रीसंकेतदेव्यभिषेकार्थं अथवा पंचांगभूतपंचायतारव्यपूजायां गणेशादिपंचदेवतानां गणेश-रुद्राम्बिकाशालिग्रामसूर्यानां प्रति-जन्मन्युत्सवेषु पूर्वोदितेषु दिनेषु अभिषेकार्थं त्वामाचार्य्यत्वेन

त्वामहं वृणे इति ब्रुवन् वस्त्रकुंडलमुद्रिकादिभिर्यथाशक्त्या पूजयेत्। एवमृत्विगादिमपि। ततो व्रतोऽस्मीति ब्रूयात् ततः प्रतिसरं वघ्नीयात्। ततः पुण्याहवाचनं कुर्य्यात्। "पुनंतु मा देवजना पुनंतु मनसाधिपः। पुनंतु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनोहि मां" इति पठित्वा अथास्य कर्मणः पुण्याहं भवंतो ब्रुवंतु ओं पुण्याहं ओं पुण्याहं ओं पुण्याहं अस्य कर्मणः स्वस्ति भंवंतो ब्रुवंतु आयुष्मते स्वस्ति न इंद्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पुषा विश्ववेदाः स्वस्ति नस्ताक्ष्र्योऽरिष्टनेमिः स्वस्ति नो वृहस्पति र्दधातु अस्य कर्मणः ऋद्धिर्भवंतो ब्रुवंतु ऋद्धितां ऋद्धिः समृद्धिः"। अथ दिग्वन्धनं-स्वेतसर्षपान् दक्षिणहस्ते गृहीत्वा "प्राच्यै दिशे स्वाहा" "दक्षिणायै दिशे स्वाहा" "अवाच्यै दिशे स्वाहा" "उत्तरायै दिशे स्वाहा" "इति चतुर्दिक्षु प्रक्षिपेत्। ततस्त्रिगुणितरक्तसूत्रेण सप्तस्तम्भान् परिवेष्टयेत्। ततः श्रीपंचायतनसेवायां गणेशाम्बिकाशिव शालिग्रामसूर्यादीनां पंच स्वरूपाणां मण्डलं रक्षस्वेति पठित्वा ततः दशदिक्पालान् पूजयेत्। पूर्वस्यां दिशि "कपिशवर्णध्वजादण्डे "इन्द्राय नमः" अग्निकोणे कपिलवर्णध्वजादण्डे "अग्नये नमः" दक्षिणस्यां दिशि नीलवर्णध्वजादण्डे "यमाय नमः" निऋतिकोणे श्यामवर्णध्वजादण्डे "नैऋतये नमः" पश्चिमस्यां दिशि श्वेतवर्णध्वजादंडे "वरुणाय नमः" वायव्यकोणे धूम्रवर्णध्वजादण्डे "कुवेराय नमः" उत्तरस्यां दिशि श्यामवर्णध्वजादण्डे "सोमाय नमः" ईशानकोणे सितवर्णध्वजादंडे "ईशानाय नमः" अधोभागे गौरवर्णध्वजादंडे "शेषाय नमः" उपरिष्टाद्भागे रक्तवर्णध्वजादण्डे "ब्रह्मणे नमः" इत्येवं पंचांगभूतपंचदेवतानां पंचायतनप्रतिष्ठायां मण्डप रक्षस्वेति पठित्वा सर्वत्र धूपदीपादिभिः पूजयेत्। ततः सर्वतोभद्रमण्डलनिकटे उपविश्य पंचवर्णरञ्जितेऽष्टदलपद्म

तत्र कर्णिकायां तंदुलान् पूरयेत् । तदुपरि दर्भकूर्चं निधाय तदुपरि कलशं स्थापयेत् । सर्वतोभद्रमण्डलपूजनपूर्वकं त्रिगुणिततंतुवेष्टितं मुखे ह्याम्रपल्लववेष्टितं धूपितं च कुर्य्यात् । तत्र कामबीजस्मरणपूर्वकं तत्र कुम्भे पंचरत्नं नवरत्नं गंधाष्टकं क्षीरवृक्षक्वाथतोयं गंधाष्टक प्रक्षिप्य मूलमंत्रं च पठन् जलं पूरयेत् । ततोऽङ्कुशमुद्रया तीर्थमावाहयेत् । अंगुष्टानामिकायुक्तया मुद्रया विलोडयेत् । तत्र कुम्भे विष्णुक्रान्तामिन्द्रवल्लीं दूर्वां च निक्षिपेत् । तर्जनीमध्यमे प्रसार्य्यानामिकाकनिष्ठागुष्ठैः कुशं गृहीत्वा अस्त्रमंत्रं पठन् प्रोक्षणं कुर्य्यात् । ततोऽस्त्रमन्त्रेण ताडनं "करवीरस्य पुष्पाणि गृहीत्वाक्षरसंख्यया । ततस्तौ ताडयेन्मंत्रं कामबीजेन मंत्रवित्" । कामवीजस्य पठनभ्युक्षणं कुशेनावगुण्ठनं ततः षडणंन्यासं ततो धेनुमुद्रयाऽमृतीकरणं ततो 'दशकलाव्याप्तवन्हिमण्डलाय नम." "द्वादशकलाव्याप्तसूर्यमण्डलाय नमः" "षोडशकलाव्याप्तसोममण्डलाय नमः" पठित्वा ततोऽष्टोत्तरशतं सहस्रं वा मूलमंत्रं जपेत्। ततस्तेन जलेन सर्वं प्रोक्षयेत् । "अस्त्राय फडिति" मंत्रेण शंखं प्रक्षाल्य गोमयाम्भसा त्रिकोणमण्डले शंखासनं प्रक्षाल्य स्नापयेत् । हृदयमन्त्रमुच्चरन् ततो मातृकाक्षरप्रतिलोमैः जलं पूरयेत् । ततः शंखपीठे "दशकलाव्याप्तवन्हिमंडलाय नमः" इति मंत्रं जपन् पूजयेत् । ततो "द्वादशकलाव्याप्तसूर्य्यमण्डलाय नमः" इति मंत्रं जपन् पूजयेत् । ततः शंखजले "षोडशकलाव्यप्तसोममण्डलाय नमः" इति मंत्रं पठन् गंधादिभिः पूजयेत् । "त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विधृतो विष्णुनो करे । निर्मिताखिलदेवेषु पांचजन्य नमोऽस्तु ते" "पांचजन्याय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तन्नो शंखो प्रचोदयात्" "गंगे च यमुने चैव" पठन् ततः तीर्थावाहनमकुंशमुद्रया ततः शिखामंत्रेण गालिनीमुद्रां

प्रदर्शयेत् । ततोऽष्टधा मूलमंत्रं जपेत् । ततः सर्ववस्तु प्रोक्षणं, ततः पंचांगभूतानां गणेशादीनां मध्ये यस्य जन्मोत्सवं विद्यते तस्य मूर्त्तिं दृढ़ासने उपवेश्योपचरेत् । ततः पंचदश नव त्रीणि वा पात्राणि स्थापयेत् । मूलमंत्रमुच्चार्य्य पंचांगमूर्त्तें स्वागतमित्यभिनंद्य पुष्पषट्कं दद्यात् । जन्मदिनेषु श्रीपंचांगभूतदेवतानां आविर्भावं संभाव्य पश्चात्स्वागतादिप्रश्नः । ततो मूलमंत्रमुच्चार्य्य आसनं गृहीत्वा "श्रीपंचायतनपूजनमूर्त्तो इदमासनमास्यता"मिति वदन् आसने पंचपुष्पाणि कूर्चदूर्वासहितं दद्यात् । ततः श्यामाकंपञ्चकं, दूर्वापंचकं, अब्जपंचकं विष्णुक्रान्तापंचकं तत्सहितं पलचतुष्टयं जलं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य "श्रीपंचांगमूर्त्तो इदं ते पाद्यं नमः" इति ब्रुवन् चरणाम्बुजे पाद्यं दद्यात् । ततः जाती-लवंग-कंक्कोलानां षट् पलक्वाथं गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य श्रीपंचांगमूर्त्तो "ऽमुकदेवताय स्वधा" इति अमुकदैवतस्य मुखे कांस्यपात्रेनाचमनं दद्यात् । ततश्चन्दनकर्पूराद्यात्मकगन्ध-पुष्पाण्यक्षत-यवादूर्बा-तिलश्वेतसर्षपाकुशसहितं चतुः पलं जलमादाय मूलमन्त्रमुच्चार्य "श्रीपंचांगमूर्त्त्यऽमुकदेवताय संकेतदेव्यै स्वाहा"

"तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रयविनिर्मुक्तस्तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम्" ॥

इति मन्त्रमुच्चरन् पचांगभूतस्यामुकदेवस्य शिरसि अर्घ्यं दद्यात् । अथवा संकेतदेव्याः हरिपीठगोत्रोद्भवायाः शिरस्यर्घ्यं दद्यात् ।

"त्वद्भक्तिलेशसंपर्को परमानन्दसंज्ञकः ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये" ॥

पादार्घमेतेषु प्रत्येकं आचमनं ज्ञेयम् ।

ततो मधुपर्कं—सर्वकालुष्यहीनाय परिपूर्णसुखात्मके ।
मधुपर्कमिदं देवि कल्पयामि प्रसीद मे ॥

श्राज्यं दधि मधु पलैकं कांस्यपात्रे गृहीत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य्य श्रीपंचांगस्वरूपायामुकदेवाय किंवा संकेतदेव्यै स्वधा इति मंत्रं पठन् संकेतदेव्या: मुखे किंवा पंचांगभूतामुकदेवतामुखे दद्यात् ।

देवानामपि देवाय देवानां देवतात्मने ।
आचाम कल्पयामीश शुद्धे त्वां शुद्धिदेतवे ॥

ततस्त्राचमनार्थं पलमेकं जलं दद्यात् । ततस्तिलपिष्टेन श्रीसंकेतदेवीं वा पंचांगस्वरूपामुकदेवमुद्वर्त्य ततः "मूर्द्धानं देवो आरतिं पृथिव्या वैश्वानरं आजातमग्निं कविं साम्राज्यमतिं जनानामासन्ना पात्रं जयंत देवा:" इति मंत्रं पठन् वस्त्रपरिवर्त्तनं कारयेत् ततः "व्वरुणस्योत्तंभनमसि व्वरुणस्य स्कंभसर्जनीस्त्थो व्वरुणस्यऽऋत सदन्न्यसि व्वरुणस्यऽऋतसदनमसि वरुणस्यऽऋतसदनमसीद" इति मंत्रं पठन् पंचाशत्पलजलेन स्नानं दद्यात् । "ततस्तिलोस्पसोमदैवत्योगो सवो देवनिर्मितः प्रणमद्भि: प्रन्न स्वधेहि पितृन् लोकान् प्रणीहि नः स्वाहा" इति मंत्रं पठन् मूलमंत्रमुच्चार्य्य स्नापयेत् । ततो पंचामृतेन पंचपलदुग्धं गृहीत्वा "पय: पृथिव्यां पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधा: पयस्वती प्रदिश: संतु मह्यं" इति मंत्रं पठन् दुग्धेन स्नापयेत् । ततः पंचपलपरिमितं दधि गृहीत्वा "दधिक्राव्णोऽकारिषं जिष्णोरेश्वस्य वाजिनः सुरभिनो मुखाकरत् प्रणऽआयूंषि तारिषत्" इति मंत्रं पठन् दध्ना स्नापयेत् । ततः पंचपलपरिमितं घृतं गृहीत्वा "घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्व्वी पृथ्वीं मधु दुधेसुपेशसा, द्यावा पृथिवी वरुणस्य धर्मणाविष्कमितेऽअजरे भूरिरेतसा" इति मंत्रं पठन् घृतेन स्नापयेत् । ततः मधु गृहीत्वा "मधुवाता ऋतायते मधुक्षरंति सिधवः माध्वीर्न्नः सन्त्वोषधीः मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः मधुद्यौरस्तु नः पिता मधुमान्नो वनस्पतिः मधुमां

अस्तु सूर्यः माध्वीर्गावो भवंतु नः" इति मंत्रं पठन् पंचपल-मधुना स्नापयेत् । ततः शर्करां गृहीत्वा 'शुक्रमसि ज्योतिरसि तेजोऽसि देवो वः सवितपन्नं त्वच्छिद्रेण पवित्रेण वसोः सूर्यस्य रश्मिभिः भद्रे"ति मंत्रं पठन् शर्करया स्नापयेत् । ततः सप्तपलजलं गृहीत्वा "सप्त ते अग्ने समिधः सप्तजिव्हाः सप्त ऋषयः सप्त धाम प्रियाणि सप्तहोत्राः सप्तधा त्वा यजंति सप्त योनी रावृणस्वाघृतेन स्वाहा" इति मंत्रं सप्तधा जपन् संमार्जयेत् । ततः संस्कृतं सर्वतोभद्रघटजलं सर्वघटेषु प्रक्षिपेत् । तत्र अष्ट दिक्षु अष्टघटेषु अनुक्रमेण सर्वौषधिं महौषधिं वोजाष्टकं नवरत्नं पुष्पं फलं गंधं चंदनं प्रक्षिपेत् । नवमघटमग्रे दशमं सहस्त्रधारकलशं तत्र नवमकलशं दूर्वादलपुंजसहितेन शंखेन स्नापयेत् । "आपोहिष्ठेति" त्रिभिः पटन् सर्वदिशि स्थितं कलसं सर्वौषधिद्रवरससहितं घटं गृहीत्वा—

"या ओषधोः पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरामनैनुवंभ्रूणामहं शतन्धामानि सप्त च" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् । ततः महौषधिद्रवरससहितं घटं गृहीत्वा—" सुमंगलो रियं वधूरिमाॐ समेन पश्यत सौभाग्यमस्यै दत्वायाथास्तं विपरेतन" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् । ततो वीजाष्टकयुतं घटं गृहीत्वा—"आब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढ़ा नड्वानाशुः सप्तिः पुरंधिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानास्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यंतां योगक्षमो नः कल्पतां" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत् ॥ "यव-गोधूम-नीवार-तिल-श्यामार्क-शालयः । प्रियंगवो ब्रीहयश्च स्नाने ह्येतानि कल्पयेत् ॥" ततः नवरत्नयुक्तं कलशं गृहीत्वा—"हिरण्याक्षः सविता देव

आगादृधद्द्रत्नानि दासुषे वार्याणि" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः पंचाशदधिकपुष्पयुक्तं कलशं गृहीत्वा— "सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्य्याण्यानाद्ययाभिषिंचामीन्द्रस्येन्द्रियेण वलायै श्रियै यशसेऽभिषिंचामि" इति मंत्रं पठन् पुष्पोदकेन स्नापयेत्। ततः फलयुक्तं कलशं गृहीत्वा—"याः फलिनीर्या अफलाअपुष्पा याश्च पुष्पिणी वृहस्पति प्रसूता स्ताना मुंच त्व ৩ँ हसः" इति मंत्रं पठन् फलोदकेन स्नापयेत्। ततः गंधोदकयुक्तं कलशं गृहीत्वा-गायत्रीं पठन् स्नापयेत्। ततश्चंदनोदकघटं गृहीत्वा—"ओं द्रुमदादिव मुमुचानैः स्विन्नः स्नातो दिवः पूत पवित्रेण वाज्यमापः शुद्धंतु मैनसः" इति मंत्रं पठन् स्नापयेत्। ततः सहस्रधारकलशे सर्वौषधिं महौषधिं वीजाष्टकं सर्वरत्नानि पुष्पाणि फलानि प्रक्षिप्य—"सवितु र्वरेण्यस्य चित्रमाह व्रणे सुमति विश्वजन्यां यामस्य काण्वो प्रदुहत् प्रयाणां सहस्रधारापयसामही गां" इति मंत्रं पठित्वा स्नापयेत्॥

पुनः "याः ओषधीरि"ति पठन् स्नापयेत्। सर्व्वौषधिना "सुमंगलीरिति" पठन् पुनः महौषधिना स्नापयेत्। पुनः "आव्रस्तृन्निति" पठन् वीजाष्टकेन स्नापयेत्। पुनः "हिरण्याक्ष" इति पठन् नवरत्नादिना स्नापयेत्। "सरस्वत्यै" इति पठन् पुष्पोदकेन स्नापयेत्। पुनः "या फलिनीरिति" पठन् फलोदकेन स्नापयेत्। ततो सहस्रधारघटेनैव "एतोन्विंद्रस्तवाम शुद्धँ৩ शुद्धेन साम्ना शुद्धैः रुक्थैर्वा वृद्वांस शुद्ध आशीर्वान्मम रुद्रः शुद्धो न आगहि शुद्धः शुद्धाभिः भूतिभिः शुद्धोरंयि निधारय शुद्धो ममद्धि सौम्यः इंद्रः शुद्धो हिनो रयिं शुद्धो रत्नानि दासुषे शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं शिखाभासे" इति मंत्रं पठन् पंचांगस्थामुकदेव-शिखाभागे

स्नापयेत् । ततो वस्त्रेण मार्जनं ततो न्यासं कुर्यात् । ततो वस्त्रं गृहीत्वा—"अभिवस्त्रा सुवसनान्यर्षाणि धेनुः सुदुधी यूयमाणा अभिचंद्रांतर्त्तीय वे माहिरण्येभिश्च पथिनो देव सोमः" इति मंत्रं पठन् वस्त्राणि दद्यात् । ततः सहदेवी - सदाभद्रा-सूर्यावर्त्ता-कुशाग्रकैः शिरीषरजनीभ्यां निर्मथ्य निवराजो-लवणराजी-सर्षपैः दृष्टिमुत्तार्य्य तोयादौ प्रक्षिपेत् । ततः सिंहासने पंचांगस्थामुकदेवं उपवेश्य पाद्यादिभिरुपचरेत् ।

ततो मंगलार्थं नारिकेलफलान्वितं कलशं स्थापयेत् । ततस्तन्मंत्रोक्तन्यासपूजादिकं कुर्य्यात् । ततोऽंजन-तिलकयज्ञोपवीत-मालाभरणादिना शृंगारं कृत्वा प्रतिसरं वध्नीयात् । तथाहि पीतडोरकं गृहीत्वा—"विश्वेत्ताते सवनेषु प्रावाच्याया चकर्थं मघवन्निंद्र सुन्वते पारावतं यत्पुरुसंभृतं वस्वापा वृणोः शरभाय ऋषि वंधवे, वृहत्साम क्षत्रभृद्वृद्धवृष्ण्यं त्रिष्टुभौजः सुरभितमुग्रबीरं इंद्रस्तोमेन पंचदशेन मध्यमिदं वातेन सगरेण रक्ष," इति मंत्रं पठन् पंचायनस्थस्यामुकदेवस्य दक्षिणहस्तेऽथवा संकेतदेव्याः वामहस्ते वघ्नीयात् ॥

अथादर्शं गृहीत्वा—

"प्रतिपदसि प्रतिपदे त्वानुपदस्यनुपदे त्वा संपदसि संपदे त्वा तेजोऽसि तेजसे त्वा" इति मंत्रं पठन् दर्शयेत् । ततो भूषणादीनि मूलमंत्रमुच्चार्य्य—श्रीपंचांगस्यामुकदेवमूर्त्तौ वा संकेतस्थे देवि इदं पुष्पं निवेदयामिति सर्वं निवेदयेत् । ततो धूपादिकं कृत्वा नैवेद्यं समर्पयेत् । ततो दूर्वापुंजमाम्रपल्लवं गृहीत्वाऽभिषेकं कुर्य्यात् । "समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात्पुनानायंत्यनि विशमानाः इंद्रो या वज्री वृषभोररादता आपो देवीरिहमामवंतु" इत्याद्यैर्मंत्रैः पंचांगस्थममुकदेवं वा संकेतदेवीमभिषिंचेत् ।

ग्रंथपूर्णे कृते तर्हि ह्यर्द्धश्लोकं तु धारितं श्रीदेवं इत्यादि ।

श्रीकृष्णं व्रजकेलिनं प्रभुमयं नारायणं सुन्दरं
वन्दे देवमुपासनान्वितद्वयोराद्यंतयो धारितम् ।
पूर्वमाद्यं नमस्कृत्य वलदेवं तथैव च ।
पश्चादहं नमस्कारं कृष्णाय लघुहेतवे ।
नैव प्रयोजनं ह्यत्र द्वयोश्च लघुदीर्घयोः ।
लिखामि हरिवाक्यानि नोदितो विष्णुना तदा ॥
मातृगर्भे स्थितोऽहं वै हली मां स्वप्नदायकः ।
तस्मादादौ कृतं ग्रंथे रात्रौ स्वप्नस्य कारणम् ॥
हर्षदीर्घप्रयोगं तु नैव चिन्तितवानहम् ।
अन्येषां भ्रमयोगेन ह्येकत्र नैव लिख्यते ।
दूरं दूरं द्वयोरर्द्धं लिखितौ ह्यर्द्धसंज्ञकौ ॥ इति निषेधः ।

पाद्मे फाल्गुनमाहात्म्ये—

माघस्य सितपंचम्यां घटी जाताश्च विंशकाः ।
परान्हे समये प्राप्ते रासोत्सवमभूद्वरेः ।
संकेतवटके चैव मंडले विधिपूर्वकम् ॥

इति रुद्रसंहितायां पंचायतनस्थपंचदेवतानां गणेश-शिव-चण्डी-सूर्य-शालिग्रामानामभिषेकविधिः समाप्तः ।

भैरवीयतंत्रे—

गणेशमन्दिरे चैव गणेशोपासकस्तदा ।
स्वगृहे श्रावणे मासि गणेशोत्सवमाचरेत् ॥
इत्यादौ सकलस्थाने स्मार्त्तकानां विधिः स्मृतः ।
दुर्गायाः मन्दिरे चैव शिवस्यापि च मन्दिरे ।
सूर्योपासकगेहे तु लघुदेवालयेऽपि वा ।
शालिग्रामप्रतिष्ठायां पंचांगस्थेन शोभने ।
एतेषु मन्दिरेष्वेषु त्वभिषेकविधिः स्मृतः ।

इत्यभिषेकं विधिपूर्वसंयुतः श्रीभट्टनारायणः संविधाय ।

संकेतदेव्याः सकलेष्टदायाः शुभप्रदायाः ललितां स्वकीयाम् ॥
ध्यानार्थदा भगवती शुभदायिनी सा
कामार्थदा व्रजवधूसकले तु मंगले ।
वाचा समाराधित – सुन्दरीणां
मनोर्थदा पुत्रप्रदा धनप्रदा ॥
संकेतदेव्यान्वितसंभवानां व्रतोत्सवानां महिमाविधायनाम् ।
आद्यं तयोर्धारितमेकसंस्थं श्लोकं द्वयोर्भागमवस्थितञ्च ।
पूर्णे च ग्रंथे यदि लिख्यते मया श्लोकार्द्धकं ह्यादिव्रजोत्सवानाम् ।
इत्यादि ।

उपासनाविरुद्धेन ह्याद्यन्तविनियोजिता ।
श्लोकैकस्य च द्वौ भागौ लिखितौ रामकृष्णयोः ।
न्यूनाधिकप्रसंगेन भ्रात्रोः ज्येष्ठकनिष्ठयोः ।
तस्माच्च लिखितं दूरं ग्रन्थेऽस्मिन् श्लोकमर्द्धकम् ।
इति द्वितीयश्लोकनिषेधः ॥

इति श्रीमद्भास्करात्मजश्रीमन्नारदावतारसंभूतश्रीनारायण-भट्टगोस्वामिविरचितायां व्रजोत्सवचन्द्रिकायां व्रजसारोद्धारे द्वितीयावृत्तौ उत्तरार्द्धे त्रयोदशः प्रकाशः ॥

अथ ब्रजेषु सर्व्वतीर्थानामागमनप्रकारमाह–

ब्रह्मवैवर्त्ते–धेनुकासुरहंतृत्वे गोपीभिः संत्यज्यो हरिः ।
कार्त्तिकस्य सिते पक्षे सप्तमी पुष्पसंयुता ।
ब्रह्माण्डे–सप्तमी पुष्पसंयुक्ता दिनारभ्य घटी नव ।
लग्ने च वृश्चिके संस्थे धेनुकाख्यं महासुरम् ।
हतवान् देवकीपुत्रो गोपीभिश्च तिरस्कृतः ।
त्वया च वृषभो घातः गोध्ना विख्यातकीर्त्तिना ।
यस्मात्तवापराधोऽस्ति तीर्थेषु स्नपनं कुरु ॥

तदा मुक्तोऽपराधात्त्वं भविष्यसि न संशयः ॥
तह्य स्माभिश्च गोपीभिरंगीकारस्त्वमर्हसि ।

वाराहे–गोपीनां बचनं श्रुत्वा विस्मितो कृष्णसंज्ञकः ।
अपराधीतिविख्यातस्तूष्णींस्थित्वा भुवस्तले ॥
तदाचष्टे हरिर्गोपीः वाक्यं मे श्रूयतामहो ।
गता वयं महाभागास्त्वग्रे युष्माकमागताः ।
विख्याताः सर्वतीर्थास्तु गंगाद्याः पृथिबीतले ॥
तेषां स्नपनयोगेन स्वंगीकृतः भवाम्यहम् ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं गोपीभिरादृतं वचः ।
तदा श्रुत्वा हरिस्तुष्टो सायंकालो यदा भवेत् ।
वने च सघने प्राप्ते गोवर्द्धनमुखालये ।
तत्र गोपीः समाहूय राधया सहितो हरिः ।
अष्ट षट् ६८ संख्यकास्तीर्थाः पापघ्नाः पृथिवीतले ।
अहो तेऽत्र गमिष्यन्ति सर्वे तीर्थाः समन्ततः ।
सोऽपि तीर्थगतोऽत्रैव युष्माकं चाग्रतो स्थितः ।
शृणुध्वं बचनं तस्य तमेव स्थानकुण्डके ।
प्रवेशाय कुरुध्वं हि ज्ञात्वा पातकनाशिनी ।
पूर्वमेव समायाता गंगा प्रत्युत्तरं ददौ ।
कृष्णवाक्यसमाहूता प्रवेशे कुंडगामिनी ।
ततश्च यमुना याता कृष्णबाक्यप्रवेशिता ।
सरस्वती समायाता वाक्यमुक्त्वा प्रवेशिता ॥
गोदावरी समायाता शोणभद्रनदागता ।
सिन्धु नंद्यागता वेत्र चर्मवंती च वेदिका ।
क्षिप्रा च गण्डकी चैव नर्मदा कर्मनासिका ।
जन्हुजा वेसुली चैव गंभीरा फल्गुसंज्ञकः ।
कावेरी सरयू चैव पुष्करस्तीर्थसंज्ञकः ।
कालिन्दी च महेंद्रा च तुंगभद्रा सुनन्दिका ।

ताम्रपर्णी पयोष्णी च शीततोया सुनन्दिनी ।
कांची मेना सुभद्रा च गोमती कामदा-नदी ।
कालवेणी पुण्यशीला सुशीला धर्मतापिनी ।
धनदा स्वेतद्वीपस्था द्रव्यदा च धनप्रदा ।
पशु रामकृता पृथ्वीनिःक्षत्रियसमाकुला ।
तत्समये त्वेकविंशाख्याः नदा-संख्याः प्रकीर्त्तिताः ॥
शोणितैर्क्षत्रियाणां च परिपूर्णा स्थिताः भुवि ।
पापघ्नाश्च समायातास्तेषां नामानि संस्थिताः ।
सुभद्रः वलभद्रश्च वीरभद्रः मनोर्थदः ।
कामभद्रानन्दभद्रसुखभद्रास्तथैव च ॥
तेजभद्र-महाभद्र-प्रभुभद्र-दुःखांकुशाः ।
पुण्यभद्र- पुत्रभद्र-पापांकुश-वचोऽकुशाः ॥
कायभद्रस्तुष्ठिभद्रः लक्ष्मीभद्रस्तथैब च ।
घनभद्रः स्वच्छभद्रः देवभद्रो महानदः ॥
इत्येते त्वेकविंशाख्याः नदास्तत्र समागताः ॥
गोकर्णी-श्रीप्रदा चैव नागपत्नी वसुन्धरा ।
मणिकर्णी शिवा कांची व्रह्मकर्णी महेंद्रका ।
कौशल्या च समाख्याताः स्वर्नदोर्विष्णुना कृताः ।
इत्येताश्च समायातास्त्वष्टषट् संख्ययान्विताः ॥
प्रवेशिताः यदा कुंडे विष्णुनाहूतसंगताः ।
यावदागमनं भूयात्तीर्थाणां दिशतो यदा ।
तावदर्द्धागता रात्रिश्चन्द्रोदयप्रवर्त्तिनी ।
तदा च समये प्राप्ते कर्कलग्ने समागते ।
तदा राधा करोदाज्ञां कृष्णाय त्वपराधिने ।
द्वौ भागौ क्रियतामत्र कुण्डौ विख्यातकीर्त्तिदौ ।
मत्कुंडे स्नपनं कुर्य्यात्पूर्वमेव विधानतः ।
तत्पश्चात् तव कुण्डेऽस्मिन् स्नपनं पापनाशनम् ।
द्वयोस्तु कुण्डयोश्चैव कृष्णः स्नायात् विधानतः ।

द्वौ कुण्डौ च समाख्यातौ राधाकृष्णौ च संज्ञकौ ।
मनसा बचसा कृत्वा स्नपनं कुण्डयोस्तथा ।
मुण्डनं च विवाहं च ध्यात्वा कुण्डं समर्पयेत् ।
परिपूर्णं भविष्यंति राधाकुंडप्रसादतः ।
कामानां लभते नारी यथेष्टं फलमिच्छती ।
मृतवत्सा यदा नारी यत्रैव वचनं कृता ।
चीरंजीवं लभेत् पुत्रं वन्ध्या पुत्रमवाप्नुयात् ।
यं यं कामयते तत्र तं तं लभति मानवः ।
मंत्रं च जपये तत्र शीघ्रमेव फलप्रदम् ।
यस्मात्स्थलादुदासीनो कदापि न भवेत् क्वचित् ।

हेमाद्रौ—हेमाद्रीनां च दानानां फलं कोटिगुणं स्मृतम् ।
अत्रैव च महादानं फलं वहु फलाधिकम् ।

स्कान्दे—द्वयोर्भागेन छिन्द्रेण संगमस्तु यदा भवेत् ।

ततः श्रीराधाकुण्डकृष्णकुण्डयोः प्रमाणं—

हस्तैश्चतुर्दशैश्चैव वामभागे च संस्थिताः ।
प्रबाहानां वितश्चैव त्रयोदशभिर्तिर्यक् च ।
चतुष्कोणेषु ज्ञातव्यमनूनं चैकहस्ततः ।
शुद्धतीर्थकप्रमाणं च सर्वतीर्थसमन्वितम् ॥
तत्र कुण्डेऽपराधी स धेनुकासुरघातकः ।
श्रीकृष्ण इति विख्यातो गोपीरमणलालसः ।
स्नातो गोपीभिरिदृश्यो धेनुहत्यां निवारयेत् ।
एवं सपुरुषो नारी ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।
द्वादशैकादशैः हस्तै दक्षिणे भागसंगमे ।
तस्मिन् कुण्डे सर्वे तीर्थाः कृष्णभागाद्भविष्यति ।
ततश्च पुनराज्ञाय कुंडे स्नानं समाचरेत् ।
गोपीभिश्च समस्ताभिः राधायाः सहितो हरिः ।
राधाकुण्डं समाख्यातं दक्षिणे कृष्णकुंडकम् ।

पूर्वं च स्नपनं कुर्याद्राधाकुंडे विधानतः ।
कृष्णकुंडे ततो पश्चादभीष्टफलमाप्नुयात् ।
पाद्मे—कृष्णस्तु सह गोपालैः सखिभिर्निर्मलो भवेत् ।
गोपीभिररमितं चक्रे कृष्णश्चञ्चलमानसः ॥
तदा गोप्यः परित्यज्य पुनः कृष्णं निवर्त्तयुः ।
धेनुकासुरहन्तारमिति कृष्णं परित्यज्येत् ।

विष्णुधर्म्मोत्तरे—

गोप्यस्ताः वचनान् ब्रूयुः कृष्णं चंचलमानसम् ।
देशोऽस्माकमियं रीतिः गंगायां स्नपनं कृतः ।
तदापराधनिर्मुक्तो जायते मानवो ध्रुवम् ।
तीर्थान् वयं न जानामः रात्रौ केऽपि समागताः ।
ततश्चकितो भगवान् श्रुत्वा गोपी समाहूतान् ।
तत्र क्रुद्धो हरिः साक्षातीर्थानाज्ञापयत्तदा ।
त्रिवेणीं सम्यगाहूय हरिराज्ञां करोति सः ।
गंगे च यमुने देवि ! सरस्वत्या समन्विते ।
त्रिवेणि त्वं प्रसीदासि वलदेवप्रवासके ॥

विष्णुरहस्ये—ललितायाः पुरे रम्ये तूच्चग्रामाभिधानके ।
सखीगिरे पर्वतस्य निकटे भ्रातृमन्दिरे ।
वहसि त्वं सदा देवि ! प्रमाणं भव विस्तृतः ।
हलायुधस्य शेषस्य स्नपनाय स्थिरा भव ॥
रासक्रीडा मम स्थाने फाल्गुने पूर्णिमादिने ।

विस्तारपरिमाणं च त्रिवेण्याः ललितास्थले—

कौर्म्म्ये—सखीगिरेः पर्वतस्य तटादारम्य विस्तृता ।
सप्तोत्तरशतैर्हस्तैः परिमाणप्रवाहका ॥
शेषमन्दिरतो भागे वामे विस्तारिता स्थिता ।
शेषसिंहासनाद्भागाद्वामाद्विशंतिहस्तका ।
एतत्प्रमाणमाख्याता तिर्य्यक् विस्तारिता स्थिता ।

नवतिः ६० पाणिभिः संख्या तिर्य्यग्भागमवस्थिता
त्रिवेणी वहते यत्र शेषसेवापरायणा ॥

ब्राह्मे—उच्चग्रामनिवासिनीं भगवतीं वेणीं महास्वर्नदीं
स्नानार्थं ललितागता शुभप्रदा नाम्नी किशोरी मता ।
स्नानार्थं समुपागता च रमणी श्रीरेवतीवल्लभा
श्रीदेवी बलदेवः सन्निधिगतं स्नायात्प्रभोरग्रजः ॥
श्रीकृष्णप्रेषिता वेणी राधाकुंडस्थलात्प्रिया ।
शेषावतारभूतस्य मे भ्रातुरग्रजस्य च ।
स्नानार्थं युग्मस्थलस्य ललिताग्रामसुन्दरम् ।
त्रिवेण्यां मध्यभागे तु रासक्रीडास्थलं मम ।
फाल्गुने मासि पूर्णायां होलिकोत्सवमाचरेत् ।
नन्दसूनुस्तदा कृष्णः परिपूर्णसुखप्रदः ।

प्रतापमार्त्तंण्डे—
तत्रैव ललिताग्रामात्वृषभानुपुरस्य च ।
द्वयोर्मध्ये पादक्रोशं संस्थे स्थानं प्रवर्त्तितम् ।
तत्रैव ललिताकुंडनाम संज्ञं प्रतिष्ठितम् ।

बृहन्नारदीये-उच्चग्राम इति ख्यातः ललिताग्रामविश्रुतः ।
वृषभानुपुरं रम्यं राधायाः ग्राममुच्यते ।
तयोरभ्यन्तरे त्वस्ति रमणीयं सरोवरी ।
ललिताकुंडमाख्यातं ललितायाः बहुप्रियम् ।
चतुः षष्ठि सखीभिः सा रचिता निर्मला जला ।

वायुपुराणे-ग्रामे तु ललितायास्तु चिन्हानि च विचिन्वयेत् ।
राधाकुंडस्य लिंगानि श्रीकुंडस्य तथाविधिम् ।
पूर्वोक्तानि प्रपश्यन्ति सर्वपापान् व्यपोहंति ।
यत्रैव संस्थितो कृष्णः गोपीभिः परित्यक्तवान् ।
गोवर्द्धनगिरिस्थाने त्वायातो भगवान् हरिः ।

भविष्योत्तरे—
गोपीभिस्तु पुनस्त्यक्तो भगवान् गोकुलेश्वरः ।

अपराधी-भवस्त्वंहि देशरीत्या भविष्यति ?
गोवर्द्धनतटे रम्ये कृष्णस्त्वायाति सत्वरम् ।
मात्स्ये—गोपीभिः प्रेक्ष्यमाणोऽसौ कृष्णश्चंचललोचनः ।
मनसः क्रियते गंगां सर्वपापप्रणाशिनीम् ।
वृषभस्यापराधस्य विनाशाय रमापतिः ।
चतुः पंचाशमधिकां हस्तैः परिमितां स्थलीम् ।
दुग्धेन पूरितां गंगां स्नायाच्च परमेश्वरः ॥
भविष्ये—कार्त्तिकस्यासिते पक्षे त्वामावास्यां दिने हरिः ।
गोपीभिरम्यमानाभिरंगीकृत्यो भवेत्प्रभुः ।
सायं काले समायाते गोपीभिः सखिभिः सह ।
लक्ष्मीपूजनमारम्य दीपदानं समाचरेत् ॥
स्कान्दे—तत्रैव मनसां देवीं स्थाप्य तां परिपूजयेत् ।
गंगा च मानसी नाम सर्वकामार्थदायिनी ।
भविष्यति च लोकेऽस्मिन् हरिदेवसमीपगा ।
चक्रेश्वरं महारुद्रं चक्रतीर्थं प्रभावितम् ॥
नृसिंहपुराणे—
गोवर्द्धनस्य यच्छाया विश्रांतौ मथुरापुरीम् ।
भविष्यति च लोकानां रक्षार्थं प्रीतिवर्द्धिनी ॥
गोवर्द्धनतटे रम्ये स्थलं रम्यं बिराजितम् ।
तत्रैव नारदायैव मन्त्रस्यैवोपदेशकम् ।
कुरुते सविधानेन ब्रह्मा पुत्राय सिद्धिदम् ।
तस्मान्नारदकुंडं च फलं शतगुणप्रदम् ॥
पञ्चविंशतिहस्तैस्तु विस्तारं परिकीर्त्तितम् ।
समन्तात्परिवृत्तं च गोलाकारं विराजितम् ।
गंगायाः स्नपनात्पुण्यं फलं कोटिगुणं लभेत् ॥
ब्रह्माण्डे—गोवर्द्धनतटे रम्ये कुण्डं गोविन्दसंज्ञकम् ।
एकोनविंशहस्तैस्तु शुद्धतिर्य्यक्यदा स्थितम् ।
गोवर्द्धनतटे रम्ये सुरभीप्रीतिदायके ।

तत्र स्नातो नरो यस्तु कांचनांगो भविष्यति ॥
गोवर्द्धने पुच्छदेशे कुण्डमप्सरसंज्ञकम् ।
क्रीडयाप्सरसां स्थानं जलक्रीडास्थलं शुभम् ॥
आदिवाराहे–सप्तविंशतिभिः हस्तैः विस्तृतं च द्विभागतः ।
तत्र स्नातश्च श्रीकृष्णः गोपीभिः सह मंगलैः ।
अप्सरोभिश्चाभिषिक्तो सहेन्द्रै गोंकुलेश्वरः ॥

तत: वृषभानुपुरे भानुसरोवरिप्रमाणं––

वामनपुराणे–वृषभानुपुरे रम्ये नाम्ना भानुसरोवरी ।
चतुस्त्रिंशस्तु हस्तैश्च विस्तृता च सरोवरी ।
यदेव शुद्ध तिर्यक् च समन्तात्कुण्डमास्थिता ।
यत्र स्नातो नरो यस्तु वाचिकानि प्रणाशयेत् ।
पापानि च कृतान्यानि तीर्थराज इति श्रुतः ॥
पाद्मे—गर्जपुरे प्रेमकुंडसरोवरिप्रमाणं–
षड्विंश संख्यकैं हस्तैश्चतुष्कोणेषु विस्तृतः ।
प्रेमो यत्रैव संजातो कठोरोऽपि नरो यदा ।
यत्र स्नातो नरो यस्तु संमोहो सर्वबन्धुषु ।
विष्णुधर्म्मोत्तरे—संकेतस्थले विह्वलकुंडप्रमाणं––
षष्टि हस्तैस्तु विस्तारस्त्रिंशहस्तैश्च तिर्यङ् च ।
विह्वलाख्यं महाकुण्डं सर्वश्रमहरं परम् ।
वटस्य निकटे यस्तु कृष्णकुंडो प्रविस्तृतः ।
पंचविंशतिभिः हस्तैरष्टादशभिः तिर्य्यङ् च ।
यत्र स्नातो नरो यस्तु परमानन्दमाप्नुयात् ।
आदिवाराहे–नंदराख्ये महाग्रामे कूपो गोपानः विस्तृतः ।
नंदग्रामान्तरे स्थानं गवां वेश्मनि निर्मितः ।
नंदपरिमिता गावस्तेषामुत्तममन्दिराः ॥
तेषां दर्शनमात्रेण सर्वपापं प्रणस्यति ॥

नन्दग्रामे यशोदाकुंडप्रमाणं—

एकविंशतिहस्तैस्तु शुद्धतिर्यग्व्यवस्थिता ।
यत्र स्नातो नरो यस्तु सर्वातङ्कं व्यपोहति ॥

गारुडे-मधुसूदनकुंडप्रमाणं—

अष्टत्रिंशैस्तु हस्तैश्च सप्तविंशैश्च तिर्यङ्च ।
यत्र स्नायान्नरो कामान्मनोऽर्थान् चिन्तितान् लभेत् ।
इत्यादि ।

भविष्योत्तरे—ललिताग्रामस्य पृष्ठदेशे तूच्चग्रामस्थाने देहकुंडपरिमाणं-

हस्तैरेकोनचत्वारिंशद्भिः शुद्धः प्रवाहकः ।
पञ्चविंशतिभिः हस्तैस्तिर्यक्त्वे वहते स्थले ।
स्वर्णादिधातुदानैश्च सर्वक्लेशाः प्रदुद्रुवुः ।
सहस्रफणसंयुक्तो युगलेन समन्वितः ॥

वृहन्नारदीये—

कृष्णाज्ञया यत्र वेणी फल्गुवद्वहते सदा ।
त्रिवेणी च त्रिभिर्द्वारैर्निर्मलाभ्यन्तरे स्थिता ।
कृष्णस्याज्ञाप्रमाणेन सा त्वधस्था वहत्सदा ॥

भविष्ये-वेणीमाह हरिः साक्षात्सार्द्धैकेन स्थिता भुवि ।
अब्दानां तु सहस्रेण पृथिव्युपरि संस्थिता ।
पश्चात्त्वं षोडशैर्हस्तैरधस्था वहसि स्थले ।
इत्येवं स वरं दत्वा त्रिवेण्यै परमेश्वरः ।
गोपीभिरमयां चक्रे होलिकोत्सवसंयुतः ॥

इत्येवं कथितं प्रमाणमनघं कामार्थदं सुन्दरं
तीर्थानामवगाहने गुणफलं प्रोक्तं स्वयं विष्णुना ।
तस्याज्ञात्ववतारसंभवप्रभुर्नारायणाख्यो गुणी
ग्रन्थं सर्वप्रकाशलक्षणयुतं चक्रे व्रजोद्धारकम् ॥

इति श्रीभास्करात्मजश्रीनारायणभट्टगोस्वामिविरचितायां
व्रजोत्सवचन्द्रिकायां उत्तरार्द्धवृत्तौ व्रजसारोद्धारे
चतुर्दशः प्रकाशः ॥

अथ लघुस्थानं निरूप्यते–

विष्णुधर्म्मोत्तरे––

स्वर्णाचलस्वरूपस्थः सखीगिरिसमन्वितः ।
द्वयोरभ्यन्तरे त्वस्ति कदम्बानां वनं तदा ॥

सखीगिरिनामपर्वतश्च स्वर्णाचल नाम पर्वतस्तद्‌द्वयो पर्वतयौः संयुक्त स्थले कदम्बखण्ड्युपरिष्टात् भागे श्रीलक्ष्मीनारायणस्य मूर्त्तिविराजते । उच्चग्रामे-वृहद्‌गौतमीये–

ग्राममध्ये त्वटा त्वस्ति ललितायास्तु खेलनम् ।

तस्मिन्नटायां ललिता साष्टाभिः सखिभिः सह अष्टाब्दसंयुतावस्था परिक्रीडते । तस्मादुच्चाभिधानस्याटोरि संज्ञं प्रचक्षते ॥

अथ श्रीसंकर्षणस्य श्रीवलदेवस्य षट्‌गोष्ठीस्थानानि–

वाराहपुराणे–नारक्यंडपुरं किस्तमुनारं च महावनम् ।
वल्गुनामपुरं चास्ति वलदेवस्य गोष्ठिका ॥

ततः षट् गोष्ठीस्थानानि भिन्नत्वेन वर्णयेत्—

पुरी च नारकी नाम पूर्वस्यां दिशि संस्थिता ।
तत्रैव वलदेवस्य त्वेकगोष्ठीस्थलं स्थितम् ।

पाद्मे–आनन्दनाम्नाप्युपनंदसंज्ञः स्ववासकर्त्ताभवनूनारकीं पुरीम् ।
तस्य त्रयो सन्ति महातनूजास्तेषां च नामानि प्रवच्चयेत् क्रमात् ॥
वाहुकल्योऽनुवीरश्च प्रवालः गोष्ठिशालिकाः ।
तैरेव सार्द्धं गोष्ठीं च वलदेवस्तथाकरोत् ।

तस्मात् करणात् नरीनाम ग्रामभाषायां कथयन्ति लोकास्तस्मात्तस्मिन्नेव ग्रामे वलदेवस्य गोष्ठोमन्दिरम् ।

ततः महावनस्थानि-सर्वगोष्ठीशालिकैः सखिभिः सार्द्धं बलदेवः महावनं नाम्नस्थलं प्राप्तवान् ॥ भविष्योत्तरे–

एकदा समये सीरी सर्वैश्च सखिभिः सह ।
गोष्ठिकैरुपनन्दस्य पुत्रैः परमशोभनैः ।

पाषाणस्यातिभारेण भाराक्रान्तसमाकुलः।
सोऽहं प्रीतिप्रदोऽस्मि त्वं प्रकाशं कुरु नारद !।
पाषाणं च शिलालग्नं मूर्त्तिं युगलसंस्थितम्।
हस्तहस्तप्रमाणं च मूर्त्तिं तत्र प्रतिष्ठितम्।
शुद्धतिर्य्यक् प्रमाणं च नागपत्नीविचिन्हितम्।
शिलापृष्ठिमितिख्यातं तदूर्द्ध्वं परिखण्डयेत्।
नागपत्नीं समास्म्य परिखंडनमाचरेत्।
सार्द्धं द्वयं प्रमाणं च पाषाणं प्रतिमाधिकम्।
शुद्धभागं खण्डय त्वं हस्तमात्रं विराजितम्।
अधिकं खण्डनं कुर्य्यात्पाषाणं विस्तृतोपरि।
सार्द्धमेकं प्रमाणं च १॥ पाषाणं तिर्य्यगास्थितम्।
तमेव खण्डनं कुर्य्यात् शेषं हस्तप्रमाणकम्।
मूर्त्तिं च युगलावेष्टं शुद्धतिर्य्यग् विराजितम्।
कृतं नारायणेनाज्ञानोदितेन विधानतः।
द्विहस्तपरिमाणं च शिलापृष्ठं स्वरूपकम्।
ततश्च नारदो भक्त्या कृताञ्जलिरभाषयत्।
मूशलायुध ! हे देव पातकं खण्डने वहुः।
यस्मान्मया न कर्त्तव्यं पाषाणं प्रतिमास्थितम्।
वलदेवस्तदा प्राह दोषो नैव प्रजायते।
भाराक्रान्तावतारोऽहं पाषाणस्य विखण्डने।
मदाज्ञां क्रियसे त्वं हि व्याकुलोऽहं शिलास्थितः।
न हि शंका प्रयुक्तोऽसि खण्डनं कुरु दीक्षित !।
तस्मात्मया कृतं मूर्त्तिं द्विहस्तपरिमाणकम्।
इति श्रीयुगलमूर्त्तिवलदेवप्रतिष्ठा त्रिवेणीतटस्थले॥

इत्येवं व्रजद्वारेषु पुरग्रामव्रजादिषु।
नवनीतप्रियो कृष्णो रमते क्रीडते सदा।
यत्रावासश्च कृतवान् श्रीभट्टो भास्करात्मजः।

श्रीनंदाख्योपनंदस्य ग्रामं चास्ति महावनम् ।
पञ्च पुत्रा भवन्तस्य सुवरो प्रवरो नलः ।
परभद्रो सुभद्रश्च नाम्नश्चैव भवन्ति हि ।
तत्र स्थाने महाकुंडे कृत्वा सर्वे सखागणाः
अयुतैश्चैव संख्यैश्च गोभिः दुग्धैः पयःस्विभिः ।
दुग्धं कुण्डे समादाय पायसां तन्दुलान्विताम् ।
मधुरां च मनोज्ञां च स्वादुः स्वादुरभुञ्जयन् ।
अद्यापि सकलाः लोकाः वलदेवं नमस्कृताः ।
अत्रापि भवते मूर्त्तिः कुण्डस्य निकटे तदा ।
सर्वान् कामान् प्रयच्छति वलदेवः स्थितः स्वयम् ।
इति महावनस्थलस्थगोष्ठीस्थानवर्णनम् ।

पुराणे—अंडपुरे समाख्याते श्रीकुण्डस्य समीपगे ।
महानंदोपनन्दश्च नाम्ना तस्मिन्वसेत्तदा ।
तस्य द्वौ भवतः पुत्रौ वलश्च सुवलः स्मृतः ।
ताभ्यां सहाकरोद्गोष्ठीं वसुदेवसुतोऽग्रजः ।
तस्माद्भवति सुस्थानं वलदेवस्य मन्दिरम् ॥

भविष्ये—किस्तवासपुराख्याते सुनंदाख्योपनन्दकः ।
तस्य सप्ततु पुत्राश्च भद्रवीरो सुबुद्धिदः ।
प्रबलः सुवलश्चैव प्रवीरो नवलस्तथा ।
तैः सार्द्धमभवग्दोष्ठी वलदेवस्य मन्दिरे ।
एतेषूक्तेषु स्थानेषु वलदेवस्य मूर्त्तयः ।
नैव चोक्तेषु स्थानेषु वलदेवं प्रतिष्ठिम् ।
अन्येषु मूढ़भावेन कुर्य्याद्देवं प्रतिष्ठिम् ।
प्रतिमा विघ्नतां यांति वलदेवस्य रूपकाः ।
परिवारक्षयं नीत्वा नर्कगामी भवेन्नरः ।

इति श्रीवलदेवगोष्ठीस्थानानि ।

अथ श्री कृष्णलीलास्थानसमस्तेषु व्रजप्रमाणमर्य्यादा—

वाराहे—क्रोशोत्तरं योजनानां पंचानानेकविंशतिः ।

शुद्धभागं विजानीयात्पंचयोजनविस्तृत: ।
पश्चिमभागमारभ्य पूर्वभागे प्रविस्तृत: ।
शुद्धैकविंशति क्रोश शुद्धतिर्य्यग्प्रमाणत: ।

काम्यवनादारभ्य गोकुलद्वारं यावच्छुद्धमर्य्यादा । केचिदाचार्य्या: नन्दग्रामादारभ्य गवां पानघाटस्थानपर्य्यन्तं व्रजस्य शुद्धमर्य्यादां वदन्ति । पादयुक्तपंचयोजनमर्य्यादा । एवं तिर्यङ् च दक्षिणोत्तरयो: प्रविस्तृत: ।

आदिवाराहे—आश्रमादादिवद्रे श्च परमाख्यात्तमन्दिरात् ।
यमुनातटपर्य्यन्तमेकविंशति क्रोशकम् ।
चतुर्थांशेन पादेन पञ्चयोजनसंख्यकम् ।
पहारीखोहग्रामाच्च सूरसेनस्य ग्रामत: ।
सीमामर्य्यादमाख्या हि प्रमाणं गोपिकाकृतम् ।
द्विचत्वारिंश क्रोशेन दश योजनविस्तृतम् ।
वर्त्तुलाकारसंविष्टरूपमण्डलवेष्टितम् ।
एवं समस्तं व्रजमण्डलं स्थितं
चतुर्भिरशीतिप्रणामक्रोशकम् ।
संख्यैकविंशैस्तु प्रमाणयोजनै:
समस्तसंख्या समुदाहृतं व्रजम् ।

इति व्रजप्रमाणमर्य्यादा संख्या ।। भट्टोक्ति:—

रात्रौ स्वप्नप्रदो देव: रेवत्या सहितोऽग्रज: ।
हलं च दक्षिणे पाणौ वामे च मूशलायुध: ।
बलदेवस्य द्वौ पाणावायुधौ तौ विराजितौ ।
रेवत्या दक्षिणे बाहौ गदायुधसमन्विते ।
माला वामकरे रम्ये युगलस्य च लक्षणम् ।
त्रिवेणीतटरम्ये च भट्टाय परमात्मने ।
सार्द्धत्रयशिलापृष्ठं हस्तद्वयप्रविस्तृत: ।

पाषाणस्यातिभारेण भाराक्रान्तसमाकुलः ।
सोऽहं प्रीतिप्रदोऽस्मि त्वं प्रकाशं कुरु नारद ! ।
पाषाणं च शिलालग्नं मूर्त्तिं युगलसंस्थितम् ।
हस्तहस्तप्रमाणं च मूर्त्तिं तत्र प्रतिष्ठितम् ।
शुद्धतिर्य्यक् प्रमाणं च नागपत्नीविचिन्हितम् ।
शिलापृष्ठिमितिख्यातं तदूर्द्ध्वं परिखण्डयेत् ।
नागपत्नीं समास्म्य परिखंडनमाचरेत् ।
सार्द्ध द्वयं प्रमाणं च पाषाणं प्रतिमाधिकम् ।
शुद्धभागं खण्डय त्वं हस्तमात्रं विराजितम् ।
अधिकं खण्डनं कुर्य्यात्पाषाणं विस्तृतोपरि ।
सार्द्धमेकं प्रमाणं च १॥ पाषाणं तिर्य्यगास्थितम् ।
तमेव खण्डनं कुर्य्यात् शेषं हस्तप्रमाणकम् ।
मूर्त्तिं च युगलावेष्टं शुद्धतिर्य्यग् विराजितम् ।
कृतं नारायणेनाज्ञानोदितेन विधानतः ।
द्विहस्तपरिमाणं च शिलापृष्ठं स्वरूपकम् ।
ततश्च नारदो भक्त्या कृताञ्जलिरभाषयत् ।
मूशलायुध ! हे देव पातकं खण्डने वहुः ।
यस्मान्मया न कर्त्तव्यं पाषाणं प्रतिमास्थितम् ।
वलदेवस्तदा प्राह दोषो नैव प्रजायते ।
भाराक्रान्तावतारोऽहं पाषाणस्य विखण्डने ।
मदाज्ञां क्रियसे त्वं हि व्याकुलोऽहं शिलास्थितः ।
न हि शंका प्रयुक्तोऽसि खण्डनं कुरु दीक्षित ! ।
तस्मान्मया कृतं मूर्त्तिं द्विहस्तपरिमाणकम् ।
इति श्रीयुगलमूर्त्तिवलदेवप्रतिष्ठा त्रिवेणीतटस्थले ॥

इत्येवं व्रजद्वारेषु पुरग्रामव्रजादिषु ।
नवनीतप्रियो कृष्णो रमते क्रीडते सदा ।
यत्रावासश्च कृतवान् श्रीभट्टो भास्करात्मजः ।

शेषावतारदेवस्य बलदेवस्य वेश्मनि ।
समस्तव्रजलीलां च पुरग्रामब्रजेषु च ।
तानि सर्वाणि चिन्हानि ब्रजोद्धारं करिष्यति ॥
गोप्यचिन्हानि प्रागट्यं हरेः स्थानाः मया कृताः ।
प्रगटानि समस्तानि गोकुलादिषु निर्मिताः ।
रेवतीरमणो यत्र मन्दिरे च विराजते ।
लाडिलेयस्वरूपोऽयं ममेष्टो कृष्णदत्तकः ।
तस्मिन् स्थित्वा त्वहं चक्रे पूर्वार्द्धाख्याप्रदीपिकाम् ।
ब्रजोत्सव समस्तानां व्रजानामुत्सवाय च ।
समस्तानां हृषीकेशक्रीडितानां च चन्द्रिका ।
उत्तरार्द्धमितिख्याता चन्द्रिका परिकीर्तिता ।
षट् सहस्रैस्तु संख्याभिः ब्रजोत्सवप्रदीपिका ।
पूजाबिधानसंयुक्ता नैबेद्या समयान्विता ।
उत्सवेषु च सर्वेषु रामकृष्णादिकेषु च ।
समये समयेऽप्येवं विधिः प्रोक्ता विधानतः ॥
अष्टाभिस्तु सहस्रैश्च ८००० संख्यास्था चन्द्रिका स्मृता ।
अभिषेकप्रबन्धादिह्यु त्तरार्द्धस्य संज्ञका ।
द्वौ भागौ च समाख्यातौ चवन्धौ ग्रन्थसंज्ञकौ ।
सर्वेषां च व्रजानां च सारोद्धाराभिधानकम् ।
ग्रन्थं कार्यं मया पूर्णं चतुर्दश-सहस्रकैः ॥१४०००
पत्रेषु षोडशेष्वेब संख्याप्रोक्तं सहस्रकम् ।
त्रिंशोत्तरे द्वे शताख्ये २३० पत्रसंख्या प्रकीर्त्तिता ।
सारोद्धारमिदं नाम्ना पूर्णं ग्रंथमुदाहृतम् ।

ब्रजोत्सवानां सकलीकृतानां, कृष्णेन कार्य्याणि विचेष्टितानि ।
स्थान-पुर-ग्राम ब्रजादिकानां स्थानानि रम्यानि भवन्ति लोके ॥

श्रीकृष्णेन शुभा कृता भवगती लीलावतारा स्फुटा
रम्या मोदकृता प्रिया शुभकरी लोकेषु पूर्णेषु च ।
ग्रंथं पूर्णकरी शुभा सुमतिदा राधाकृता सुन्दरा
पायाद्वश्च सकृष्णसंज्ञकप्रिया वाञ्छां ददातु शुभाम् ॥

गोदावरीतटे रम्ये तिलिंगे देशसंज्ञके ।
दक्षिणे दिशि संस्थे च पुष्कलिनगरी स्थिता ।
मथुरापट्टनं नाम भाषायां कथितं जनैः ।
पुष्कली पूर्वनामाख्या मथुरापट्टनं भवेत् ।
योजनैकसमंतात्तु वेष्टितेन विराजितम् ।
इन्द्रप्रस्थे करोद्राज्यं साहाकब्बरः छत्रधृक् ।
तस्यां पुर्य्यां प्रवास्तव्यो भैरवो नाम दीक्षितः ।
रंगनाथाख्यपुत्रोऽभूत्तस्य शास्त्रविशारदः ।
भास्करो नाम तत्पुत्रो वसुदेव इव स्थितः ।
गोदावरीप्रसादेन निर्मुक्तो बहुव्याधिभिः ।
तस्य जातौ च द्वौ पुत्रौ गोपालश्च वृहत्सुतः ।
नारायणः लघुभ्राता गोपालस्य वभूवह ॥
वैशाखशुक्लपूर्णायां विशाखाऋक्षसंयुते ।
रविवारेण संयुक्ते साध्ययोगसमन्विते ।
सूर्य्योदयात्समारभ्य घटिकाः नवकाः गताः ।
तत्समये कर्कलग्नेस्मिन् नारायण प्रसूयते ।
अष्टाशीत्युत्तरे पंचदशके वत्सरे शुभे ।
संयुजे १५८८ पंचवर्षस्थामवस्थां प्राप्य दीक्षितः ।
वरदोऽभून्महाविष्णुर्नारदायावतारके ।
नृसिंहजन्मनि त्वं हि प्रवृत्तोऽभवः सत्तमः ।
एक जन्मनि ते जन्म वामनस्य मृतिस्तव ।
इत्येवं नारदो भूत्वा भट्टनारायणः स्वयम् ॥
विद्यारम्भेण संयुक्तो कृष्णभक्तिपरायणः ।
द्वे वस्तुनि प्रसक्तोऽभूत्परमानन्दविह्वलः ।
एका च परमा भक्तिः विद्या च द्वितीया भवेत् ।
षोडशते च १६०० पूर्णे च प्राप्तोऽवस्थां स द्वादशीम् ।
तदा नारायणायैव कृष्णस्याज्ञाभवद्ध्रुवम् ।
उच्छिन्नाश्च मम स्थानाः व्रजेषु च भवन्ति हि ।

गोकुलद्वारमारभ्य पुर-ग्राम-व्रजाकरा: ।
पर्वताः सन्ति निकटे तेषु लीला मया कृता ।
वालस्वरूपकृष्णेन यशोदानन्दनेन च ।
सर्वान् प्रकाशय त्वं हि शीघ्रं गच्छ व्रजं मम ।
कामगोपालमूर्त्तिस्तु मत्स्वरूपो विराजते ।
मत्प्रसादात्त्वयाहं वै पुनरेव प्रकाशितः ।
इत्येवं वचनं श्रुत्वा विष्णोर्वालस्वरूपिणः ।
नमस्कृत्य महाविज्ञो गोदावरीतटात्स्वयम् ।
व्रजस्य मार्गं गृन्हीयान्नारायणः महातपा: ।
मार्गे तत्रावसद्भट्टः सर्वप्राणिविवर्जिते ।
निर्मले वनमध्यस्थे स्थले तस्मिन् पथि स्थित: ।
कृष्णो वालस्वरूपेण भोजनं दीयते हरि: ॥
स उच्छिष्टं च कृष्णस्य नारयाण: प्रसादयेत् ।
द्विघटीदिनशेषे तु तस्मिन्नवसरे तदा ।
एवं मार्गे गताः वर्षाः सार्द्ध द्वयसमन्विता: ।
द्वयुत्तरे षोडशशते १६०२ प्राप्ते श्रीकुंडमास्थित: ।
कृष्णदासः समाख्यातो गौडेश्वरपरिवृत: ।
व्रह्मचारी स गोस्वामी मोहनस्य स्थित: सदा ।
मन्दिरे चैव संविष्टो सर्वशास्त्रविशारदः ।
मध्यान्हीदयवेलायां राजभोगनिवर्त्तिते ।
यावद्भट्टागतस्तत्र मध्यान्हशयनोऽभवत् ।
तदा च समये प्राप्ते शयनं कृतवान् हरि: ।
मन्दिरस्य कपाटौ द्वौ प्रवंधौ भवेते यदा ।
तत्क्षणे नरदेवश्च नारायण: समागतः ।
तौ दृष्ट्वा विस्मितो भट्ट. दक्षिणाज्ञाप्रणोदितः ।
इत्येवं चिन्त्यमानोऽसौ पश्चातापं समाचरत् ।
तदा द्वौ च कपाटौ ते निःवन्धौ भविष्यतां ।
कामगोपालमूर्तिस्तु सिंहासनमधोगत: ।

दर्शनं दास्यमानोऽसौ गौडेश्वरप्रदर्शितः ।
वृन्दावनात्समागत्य मोहनो कुंडमास्थितः ।
ब्रह्मचारी सखा भूत्वा सनाथं कुरुते सदा ।
क्व त्वं चासि महाभाग नारदोऽस्मि मुनीश्वरः ।
पंचवर्षं वसेत्तस्मित् श्रीकुंडेषु मनोहरम् ।
एकोनविंशतिं प्राप्य त्ववस्थां भट्टदीक्षितः ।
सर्वेषां च ब्रजानां च चिन्हान्यत्र विलोकयेत् ।
उच्छिन्नानि समस्तानि सकलाश्च व्रजोत्सवाः ।
सर्वेषां पुनरुद्धारं चक्रे श्रीभट्टदीक्षितः ।
वक्षमाणानि चिन्हानि दृष्ट्वा लिंगानि दर्शयेत् ।
सर्वचिन्हानि ग्रंथेऽस्मिन् मया च लिखितानि च ।
कदाचिद्दैवयोगेन पुनरुच्छिन्ना यद्भवत् ।
पुनः प्रगटयेदेवं बालस्य चरितानि च ।
उपासनाभिसंयुक्ताः मत्कुले प्रभवाः जनाः ।
कृष्णावतारो परमः नन्दसूनुस्तदा हरिः ।
सर्वान्कामान् प्रयच्छतु राममन्दिरमास्तितः ।
श्रीभट्टनारायणसंज्ञकोऽसौ भक्त्यान्वितो लाडिलरामकृष्णयोः ।
गुणैर्निधानो परिपूर्णग्रंथं चकार वेणीस्थितमन्दिरे वसन् ॥
सकलपरमभक्त्या संयुतो ब्रह्मदेवः
सकलगुणप्रकाशान् वामनाख्यानि ग्रंथान् । (४२)
परमब्रजपुरादीन् निर्म्मितान् स्थानरम्यान्
सकलरमणक्रीडासंज्ञिकान् सिद्धपीठान् ॥
व्रजस्य सारोद्धरणादिग्रंथान् विचिन्वयित्वा कुलभास्करोद्भवः ।
व्रजप्रकाशादिकनिर्मितानि चैकोनविंशैस्तु १६००० सहस्रसंख्यकैः ॥

इति श्रीमद्भास्करात्मजश्रीनारायणभट्टगोस्वामिविरचितायां
व्रजोत्सवचन्द्रिकायां उद्धरार्द्धद्वितीयावृतौ व्रजसारोद्धारे
पंचदशः प्रकाशः । १५
ग्रंथ परिपूर्णम् श्रीयुगलबलदेवाय नमः ।

—श्रीलाडिलेयाष्टकम्—

श्रीमद्व्रजेशतनयं धृतमानवाङ्गं
सर्वाङ्गसुन्दरवरं कटिपीतवस्त्रम् ।
ब्रह्मादिदेवमुनिवन्द्यपदारविन्दं
श्रीलाडिलेयललितं सततं भजामि ॥१॥

तिर्य्यग् किरीटमुकुटं बनमालया वै
संशोभमानवपुषं हसितेक्षणाढ्यम् ।
देदीप्यमानमकराकृतिकुंडलं च
श्रीलाडिलेयललितं सततं भजामि ॥२॥

आनम्रजानुयुगलं व्रजभूमिकाया-
मुत्थाय दक्षिणकरं ससरीसृपन्तम् ।
पादारविन्दयुगले धृतनूपुरञ्च
श्रीलाडिलेयललितं सततं भजामि ॥३॥

कौमारदर्शितसुखं वपुषा स्वपित्रो-
र्वालैश्च क्रीडनपरं समुदारयन्तम् ।
मुग्धस्मितं निजभुजे धृतमोदकञ्च
श्रीलाडिलेयललितं सततं भजामि ॥४॥

श्रीमद्बलानुजमतीव प्रियस्वरूपं
सौख्यप्रदं निजजनानतिमानयन्तम् ।
श्यामाङ्गमद्भुततरं सुमुखं सुनेत्रं
श्रीलाडिलेयललितं सततं भजामि ॥५॥

सुभ्रुनसं सुभुजदण्डपरागदामं
सौष्ठवरूपमसितेक्षणचारुहासम् ।

काञ्च्या पराङ्गधृतहारमनोहरन्तं
श्रीलाडिलेयललितं सततं भजामि ॥६॥
गोवत्सखेलनपरं गलमौक्तिहारं
बंशोधरं सुघटनृत्यकरं वरञ्च ।
गोपीगृहेषु नितरां नवनीतचौरं
श्रीलाडिलेयललितं सततं भजामि ॥७॥
ध्यानास्पदं जगति पूर्णतमावतारं
सन्तं परं निखिलजीवनिकायकेतुम् ।
लीलाकदम्बमतिलङ्घितशत्रुवर्गं
श्रीलाडिलेयललितं सततं भजामि ॥८॥
श्लोकाष्टकं हि सुमुखं समुदा स्वचित्ते
सन्धाय नित्यममलं हरिभक्तिदञ्च ।
देवालये पठति तस्य हरिः स्वयं च
मोक्षप्रदो भवति नूनमदभ्रबुद्धेः ॥९॥
इति श्रीनारायणभट्टगोस्वामिविरचितं
श्रीलाडिलेयाष्टकं समाप्तम् ॥

*ब्रजोद्धारसमये श्री नारायणभट्टं प्रति सहायकस्य, तं प्रति रासलीतानुकरणप्रेरयितुः श्रीलाडिलेयस्वरूपस्याष्टकमिदं श्रीनारायणभट्टेन विरचितम् । स लाडिलेयः श्रीनारायणभट्टस्य सेवितविग्रहः, यः अद्यावधि नीमरानेति नगर्यां (अलवर राज्ये) आसीत् । अधुना पुनः व्रजवासिनानन्दयितुं उच्चग्रामे वलदेवस्य मन्दिरे आगत्वा विराजतेस्म । वर्षाणस्थगोस्वामिप्रियालालमहोदयसकाशात् इदमष्टकं प्राप्तम् यत् 'नीमराना' नगर्यां लाडिलेयस्य मन्दिरे आसीत् ।

गौड़ीयग्रन्थगौरवः—

सानुवादसंस्कृतभाषायां प्रकाशितानि

-अर्च्चाविधिः (संग्रहीत) ।)
-प्रेमसम्पुटः (श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्तीकृत) ।)
-भक्तिरसतरङ्गिणी (श्रीनारायणभट्टजीकृता) १)
गोवर्द्धनशतक (श्रीविष्णुस्वामी संप्रदायाचार्य्य श्रीकेशवाचार्य्य कृत) ।)
-ैतन्यचन्द्रामृत और सङ्गीतमाधव (श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती कृत) १।)
-नित्यक्रिया पद्धतिः (संग्रहीत) ॥=)
-व्रजभक्तिविलासः (श्रीनारायणभट्टजी कृत) २॥)
-निकुञ्जरहस्यस्तवः (श्रीमद्रूपगोस्वामी कृत) ।)
-महाप्रभुग्रन्थावली (श्रीमन्महाप्रभुमुखपद्मविनिर्गता) ।-)
-स्मरणमंगलस्तोत्रम् (श्रीमद्रूपगोस्वामिजीकृत) ॥=)
१-नवरत्नम् (श्रीहरिरामव्यासजी कृत) =)।
२-गोविन्दभाष्यम् (श्रीपादबलदेवजी कृत) ४॥)
३-ग्रन्थरत्नपंचकम् १॥)
[१] श्रीकृष्णलीलास्तवः (श्रीपादसनातनगोस्वामि कृत)
[२] श्रीराधाकृष्णगणोद्देशदीपिका (श्रीश्रीरूपगोस्वामिजीकृता)
[३] श्रीगौरगणोद्देशदीपिका (श्रीकविकर्णपूरजी कृता)
[४] श्रीव्रजविलासस्तवः (श्रीश्रीरघुनाथदासगोस्वामिजी कृत)
[५] श्रीसंकल्पकल्पद्रुमः (श्रीविश्वनाथचक्रवर्तीजीकृत)
४-श्रीमहामन्त्रव्याख्याष्टकम् (सञ्चित) ।)
५-ग्रन्थरत्नषटकम् ॥=)

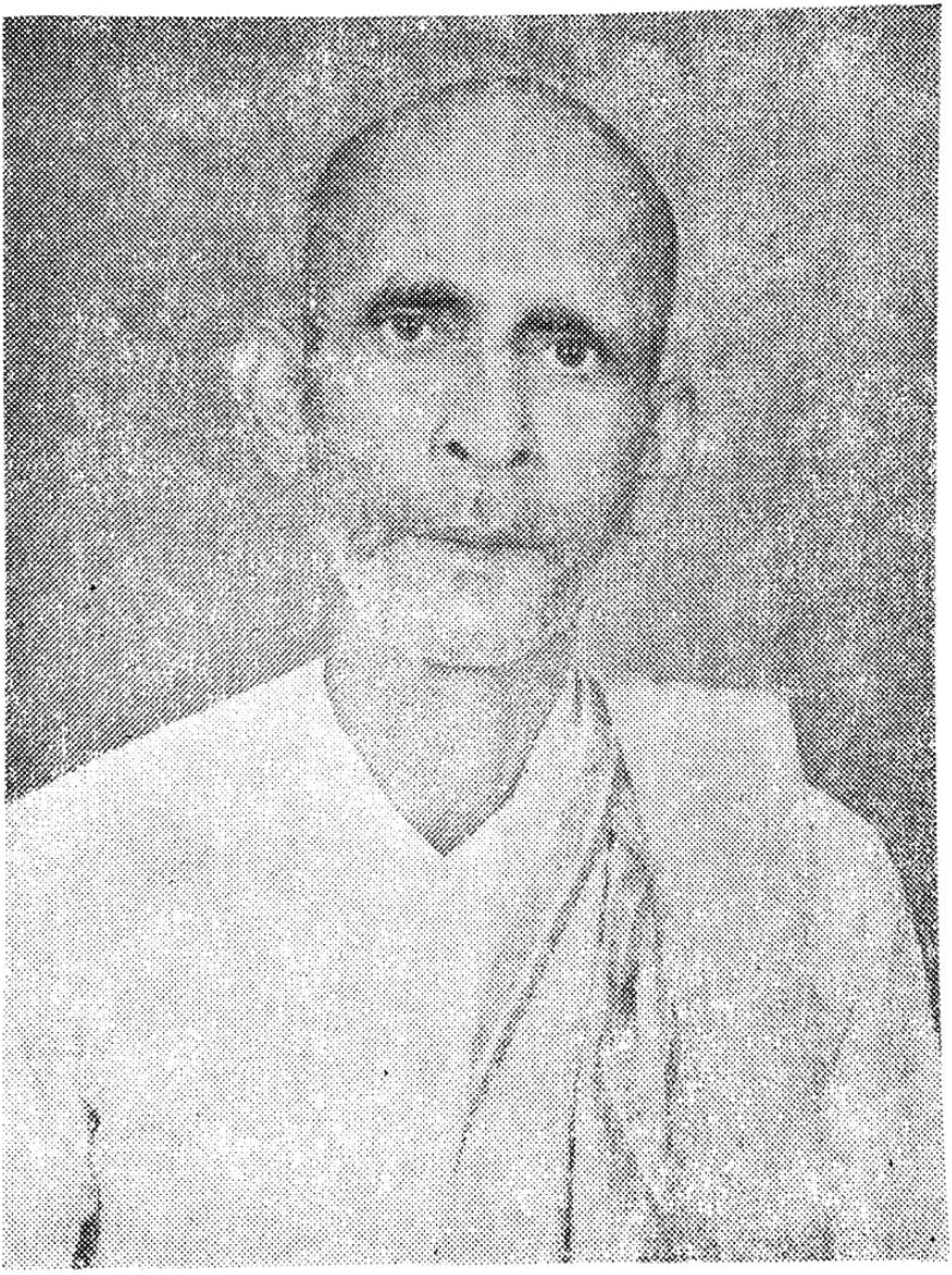

बाबा कृष्णदास जी